जोधसिंह पुरस्कार से पुरस्कृत

प्राचीन भारतीय अभिलेख

(दो भाग)

लेखक

प्रोफेसर डा० वासुदेव उपाध्याय

(पटना विश्वविद्यालय)

मंगलाप्रसाद पारितोषिक विजेता जोधसिंह पुरस्कार,

हीरालाल स्वर्णपदक एवं गुलेरीपदक प्राप्त

प्रज्ञा प्रकाशन, पटना

प्रकाशक :
प्रज्ञा प्रकाशन,
राजेन्द्र नगर, पटना–१६

द्वितीय सस्करण
१९७०
मूल्य : ~~दस रुपये~~

मुद्रक .
बाबूलाल जैन फागुल्ल
महावीर प्रेस
भेलूपुर, वाराणसी–१

प्रमाण-पत्र

काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा

श्री डा० वासुदेव उपाध्याय को

उनकी श्रेष्ठ कृति

प्राचीन भारतीय अभिलेख

पर प्रदत्त

संवत् २०१४ से २०१७ तक के

जोधसिंह पुरस्कार

एवं

गुलेरी पदक

के प्रमाणस्वरूप यह ताम्रपत्र अर्पित किया गया

प्रबंध समिति की स्वीकृति से

कमलापति त्रिपाठी
सभापति

शिवप्रसाद मिश्र
प्रधानमंत्री

दो शब्द

पिछले कई वर्षों से यह अनुभव कर रहा था कि प्राचीन भारतीय अभिलेखों का वैज्ञानिक रीति से अध्ययन होना चाहिए जिससे उनमें निहित ज्ञान राशि का परिज्ञान इतिहास के विद्यार्थियों को हो सके। अभी तक साङ्गोपांग ढंग से अभिलेख का मूल्याङ्कन नहीं किया गया है। जिस लेख या प्रशस्ति का सम्पादन हो सका है उसके सीमित क्षेत्र पर ही प्रकाश पड़ा है। अतएव समस्त विषयों को ध्यान में रख कर लेखक ने अभिलेखों का अध्ययन आरम्भ किया और प्रत्येक अंग पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है।

भारतीय इतिहास में अभिलेखों का कितना महत्वपूर्ण स्थान है तथा कैसे अमूल्य साधन हैं, यह विद्वानों से छिपा नहीं है। उनके अध्ययन से कई सांस्कृतिक विषयों पर नवीन प्रकाश पड़ता है। प्रस्तुत ग्रंथ की योजना दो भागों में पूर्ण होगी। प्रथम में भूमिका तथा ऐतिहासिक प्रस्तावना सहित मूल लेख एवं दूसरे भाग में टिप्पणी तथा हिन्दी अनुवाद। प्रथम भाग के पहले खण्ड में अभिलेखो का विस्तृत अध्ययन है। यों तो प्रत्येक विषय पर एक स्वतंत्र ग्रंथ तैयार हो सकता है किन्तु प्रत्येक अध्याय में एक विषय पर संक्षिप्त रूप से विचार किया गया है जिससे पाठकगण लेखों के महत्व तथा ज्ञानराशि का मूल्यांकन कर सके।

भूमिका में सामाजिक तथा धार्मिक अवस्था का संक्षिप्त वर्णन है और उस प्रसंग में कुछ ऐसी बातें भी सामने आई है जिनका विवरण अभिलेखों के अध्ययन से ही उपस्थित किया जा सका है। आर्थिक विषयों का जिस रूप में विवेचन किया गया है वह अन्य ऐतिहासिक साधनों से सम्भव न था। तिथि तथा सम्वत् सम्बन्धी विचार इस ग्रंथ की एक विशेषता है। अभिलेखों पर आधारित भारतीय भाषा एवं लिपि पर भी प्रकाश डाला गया है।

दूसरे खण्ड में मौर्य युग से बारहवीं सदी तक के अभिलेख संग्रहीत है। प्रायः समस्त राजवंशों के प्रधान एवं प्रतिनिधि लेख चुने गए हैं। इन लेखों का ऐतिहासिक दृष्टि से संकलन किया है जिससे इतिहास के विद्यार्थी को सुविधा हो।

इस बीच वाराणसी से ऐतिहासिक तथा साहित्यिक लेखों का प्रकाशन हुआ है तथा डॉ० दिनेश चन्द्र सरकार की लेख सम्बन्धी दूसरी अंग्रेजी पुस्तक-इंडियनइपिग्राफी (Indian Epigraphy) भी प्रकाशित हुई है। परन्तु वर्तमान लेखक का क्रम अपनी विशेषता रखता है। इस पुस्तक में सांस्कृतिक विषयों पर अधिक बल दिया गया है। इसमे धार्मिक, सामाजिक एवं साहित्यिक परम्पराओं का विकास दिखलाने का प्रयत्न किया गया है। सबसे विचित्र बात यह है कि महाभारत तथा पुराणों में उल्लिखित धार्मिक भावनाओं का मध्ययुगी लेख प्रतिबिम्बित करते हैं। उन्हीं विचारों से प्रेरित होकर अभिलेखों के अध्ययन की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया गया है। इतिहास के विद्यार्थियों का इससे मार्ग प्रदर्शन होगा।

इस ग्रंथ के प्रथम संस्करण को पाठकों ने जिस प्रकार अपनाकर अपनी गुणग्राहकता का परिचय दिया है। आशा है वे इसके द्वितीय संस्करण को उस प्रकार अपनायेंगे। मेरे अग्रज आचार्य पं० बलदेव उपाध्याय के आशीर्वाद तथा शुभ कामना से इस ग्रन्थ का निर्माण हुआ है। मेरे अनुज डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने इस ग्रन्थ के प्रूफ संशोधन में सहायता प्रदान की है। अतः वे मेरे आशीर्वाद के भाजन हैं।

पटना

वासुदेव उपाध्याय

सांकेतिक शब्दों की तालिका

आ० स० इ० ए० रि०	= आर्केलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एनुवल रिपोर्ट
आ० स० रि०	= आर्केलाजिकल सर्वे रिपोर्ट
आ० स० मे०	= आर्केलाजिकल सर्वे मेमायर
इ० ए० भा०	= इण्डियन इन्टीक्वेरी भाग
इ० कर०	= इपिग्राफिका करनाटिका
ई० पू०	= ईसवी पूर्व
ई० स०	= ईसवी सन्
इ० हि० क्वा०	= इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टर्ली
उ० प्र०	= उत्तर प्रदेश
ए० इ० भा०	= एपिग्राफिया इण्डिका भाग
ओ० का० प्रो०	= ओरियन्टल कांग्रेस प्रोसीडिंग
का० इ० इ० भा०	= कारपस इन्सक्रिपशनम् इण्डिकेरम भाग
का० श्रौ० सू०	= कात्यायन श्रौत सूत्र
गा० ओ० सि०	= गायकवाड़ ओरियंटल सीरीज
गु० ले०	= गुप्त लेख
गु० स०	= गुप्त सम्वत्
ज० इ० हि०	= जनरल आफ इण्डियन हिस्ट्रीं
ज० ए० सो० ब०	= जरनल आफ एसियाटिक सोसाइटी, बंगाल
ज० ग्र० इ० सो०	= जरनल आफ ग्रेटर इण्डिया सोसाइटी
ज० यू० पी० हि० सो०	= जनरल आफ यू० पी० हिस्टारिकल सोसाइटी
ज० रा० ए० सो०	= जनरल आफ रायल एसियाटिक सोसायटी
ज० वि० ओ० आर० एस०	= जनरल विहार ओरिसा रिसर्च सोसायटी
तर०	= राज तरंगिणी
प्र० शि०	= प्रधान शिलालेख
बौ० ध० सू०	= बौधायन धर्म सूत्र
मा० स०	= मालवा सम्वत्
मू०	= मूल लेख
वि० स०	= विक्रम सम्वत्
श० का०	= शक काल या शक सम्वत्
शा० प०	= शाति पर्व
शि० ले०	= शिलालेख
स०	= सम्वत्
स्त० ले०	= स्तम्भ लेख
सा० इ० इ०	= साउथ इण्डियन इपिग्राफी
सा० इ० ए० रि०	= साउथ इण्डियन एनुवल रिपोर्ट

द्वितीय-खण्ड

(मूल-लेख)

ऐतिहासिक प्रस्तावना सहित

विषय-सूची

पृष्ठ

द्वितीय-खण्ड

मूल-लेख

ऐतिहासिक प्रस्तावना सहित

अध्याय १३

अशोक के धर्म-लेख

प्राचीन भारतीय इतिहास के साधन सामग्रियों में अभिलेखों को प्रमुख स्थान दिया गया है। अभिलेख राजनीतिक इतिहास के अतिरिक्त सांस्कृतिक विषयों पर भी प्रकाश डालते हैं। अभिलेखों के अध्ययन से जिन ऐतिहासिक विषयों का ज्ञान हमें प्राप्त हुआ है उनका विस्तृत विवरण इसी ग्रंथ के प्रथम खण्ड में प्रस्तुत किया गया है।

संसार के इतिहास में मौर्य सम्राट् अशोक को एक विशेष स्थान प्राप्त है और विश्व के प्रमुख सम्राटों में इसकी गणना होती है। इतिहास के इस तथ्य पर पहुँचने में उसके अभिलेख (धम्म-लिपि) अधिक सहायक हुए हैं। यों तो सिंहल के ऐतिहासिक ग्रंथ तथा अन्य बौद्ध धर्मग्रंथ उसके जीवन की घटनाओं का उल्लेख करते हैं परन्तु उसके धर्म लेखों के सम्मुख सभी गौड़ हैं। कितने वर्षों तक विद्वानों का इस महान् सम्राट् के व्यक्तिगत नाम का पता नहीं था किन्तु गज्जर एवं मास्कि लेखों से 'अशोक' का नाम प्रकाशित हुआ। अशोक के सविस्तृत वृतांत के लिए उसके समस्त अभिलेखों का विवेचन समीचीन होगा। धर्मलेखों का महत्त्व इस प्रकार आँका जा सकता है कि उनके सहारे सम्राट् के विभिन्न कार्यों की सूची, महत्त्वपूर्ण घटनाएं, राज्य-विस्तार, विदेशियों से सम्बन्ध, धार्मिक परिस्थिति, जनकार्य, शासन-आज्ञाएं, लोकप्रियता आदि बातों का उल्लेख किया गया है। सभी धर्म-प्रचार के लिए लेख खोदे गए थे (इय च अठे पवतिसु लेखापेत····सिलाठभसि लाखापेत वय त)।

अशोक के प्रायः सभी लेखों के प्रकाश में आ जाने पर विद्वानों के सम्मुख यह विचारणीय विषय था कि जिस सम्राट् ने इतने अभिलेख खुदवाये उसका व्यक्तिगत नाम क्या था?

शासक का नामकरण

अधिकतर लेखों में "देवानं प्रिय प्रियदर्शि राजा" का उल्लेख मिलता है। कुछ ऐसे लेख हैं जिनमें प्रथम शब्द 'देवानं पियो (पियस)' का ही उल्लेख है। ऐसे अभिलेख निम्नलिखित हैं—

(१) कलिङ्ग शिलालेख प्रथम एवं द्वितीय।
(२) ब्रह्मगिरि का गौड़ शिलालेख।
(३) बराबर लेख में (लाजा पियदसि)।
(४) मेरुगुड्डी का प्रथम तथा द्वितीय।
(५) रूमनाथ का गौड़ शिलालेख।
(६) कोशाम्बी तथा सारनाथ का स्तम्भ लेख।
(७) रानी का स्तम्भ लेख।
(८) मास्कि का शिलालेख।

परन्तु अंतिम गोड़ शिलालेख में 'देवानं' शब्द के साथ 'असोकस' का उल्लेख किया गया है।

अन्य सभी लेखों में (स्तम्भ लेखों में विशेषत:) 'देवानं प्रिय प्रयदर्शि' के उल्लेख पर विचार करने पर विद्वानों ने यह अनुमान लगाया कि अमुक सम्राट् का नाम 'प्रियदर्शि' था। देवानं प्रिय (देवताओं का प्यारा) उसकी पदवी थी। उपरिलिखित अभिलेखों में केवल देवानं शब्द ने कौतूहल पैदा कर दिया और राजा के नाम का प्रश्न जटिल हो गया।

कौतूहल उस समय शांत हुआ जब गज्जर (देवानं पिय पियदसि असोकराजस) तथा मास्कि (देवानं पियस असोकस) लेखों का परिज्ञान हो गया। अधिकतर लेखों में "देवानं प्रिय (पिय) पियदसि" वाक्य राजा (लाजा, रय, रज, रञो) के साथ प्रयुक्त है। सभी का तुलनात्मक अध्ययन यह घोषित करता है कि शासक का वास्तविक नाम 'अशोक' था। पहले के दोनों शब्द राजा की पदवियों के रूप में प्रयुक्त हैं। ये दोनों विशेषण (देवताओं का प्यारा तथा देखने में प्रिय) अभिलेखों में समझ-बूझ कर प्रयुक्त किए गए। डा० भण्डारकर ने भी इसी बात का समर्थन किया है कि देवानं पिय राजाओं की पदवी थी। ईसवी सन् पूर्व में जनता ने इस उपाधि का प्रयोग यह समझ कर किया कि राजा देवताओं का प्यारा होता है। सम्भव है वैदिक अभिषेक की पद्धति से यह शब्द लिया गया हो, जिसमें इन्द्र, वरुण तथा मित्र नामक देवतागण को राजा के अभिषेक के अवसर पर आवाहन किया जाता था। पुरोहित उन्हें मंत्रों द्वारा आमंत्रित करता था। डा० जायसवाल का मत था कि 'देवानं प्रिय' की पदवी निम्नकोटि की थी। पाणिनि के सूत्र (५, ३।१४) पर व्याख्या करते समय पीछे के वैयाकरणों ने इस प्रकार की पदवी की निन्दा की तथा मूर्ख का भावार्थ समझा। डा० रायचौधरी ने अपना विचार व्यक्त कर इस पदवी 'देवानं प्रिय' के सम्बन्ध में लिखा है कि ईसवी सन् के पश्चात् इन शब्दों का भाव निन्दात्मक रूप में लिया है किन्तु अशोक के लेखों का अध्ययन इस मार्ग में स्पष्ट प्रकाश डालता है कि 'देवानं प्रिय' का अर्थ देवताओं का प्यारा ही समझना चाहिए।

संक्षेप में यह कहना यथार्थ होगा कि गज्जर एवं मास्कि लेखों में 'अशोक' का उल्लेख तथा महाक्षत्रप रुद्रदामन के जूनागढ़ शिलालेख में वर्णित अशोक (अशोकस्य मौर्यस्य कृते) नाम से तनिक भी संदेह नहीं रह जाता कि इन अभिलेखों को प्रकाशित करनेवाला मौर्य सम्राट् का वास्तविक नाम अशोक था।

जहां तक साहित्य में प्रियदर्शि का प्रयोग है, यह शब्द व्यक्तिगत नाम के लिए प्रयुक्त मिला है। बुद्धघोष ने लिखा है कि मौर्य सम्राट् का पहला नाम प्रियदर्शि था और अभिषेक के पश्चात् अशोक नाम पड़ा। दिव्यावदान में कथानक आता है कि पिता बिन्दुसार ने मौर्य राजकुमार का नाम अशोक रक्खा। दीपवंश में प्रियदर्शि तथा अशोक के राज्याभिषेक को समसामयिक कहा गया है। उसी ग्रंथ में 'देवानं पियो' (संस्कृत देवानां प्रिय:) राजा के लिए प्रयुक्त है। यह सत्य है कि देवानं पियो ईसवी सन् पूर्व तीसरी शताब्दी में महाराजाओं की आदरसूचक उपाधि थी। सिंहल के राजा तिष्य की भी यही उपाधि मिलती है। किन्तु अशोक के आठवें शिलालेख में (शहबाजगढ़ी तथा मानसेरा के पाठ में) उल्लिखित देवानं पियो के साथ गिर-

मार के प्रज्ञापन में 'राजानो' शब्द प्रयुक्त है। यानी दोनों एक ही अर्थ में व्यवहृत हैं (देवानं पियो राजानो)। पतंजलि के पश्चात् वैयाकरणों ने देवानं प्रिय का अर्थ मूर्ख (अज्ञपशु के समान) किया है। जान पड़ता है कि बौद्धों के विद्वेष से ब्राह्मणों ने राजाओं के मानसूचक उपाधि का उपहास किया किन्तु वास्तविकता से सभी दूर थे।

अशोक के धर्म लेख भारतवर्ष के प्रत्येक भाग में पाये गए हैं। उनकी भौगोलिक स्थिति की जानकारी होने पर यह कहना सरल हो जाता है कि समस्त राज्य के प्रांतों में उसने लेख अंकित कराया था। उन अभिलेखों को विषय की समता को ध्यान में रखकर निम्न भागों में विभक्त कर सकते हैं—

धर्म लेखों का वर्गीकरण तथा प्राप्ति स्थान

(१) प्रधान शिला-लेख—इनकी पूरी संख्या चौदह है किन्तु कुछ स्थानों पर सम्पूर्ण चौदह लेख अंकित नहीं हैं।

(१) कलिङ्ग शिलालेख।
(२) गौड़ शिलालेख।
(३) प्रधान स्तम्भ लेख।
(४) गौड़ स्तम्भ लेख।
(५) गुहा लेख।

इस वर्गीकरण में अशोक के सभी लेखों की गणना हो जाती है। प्रायः एक वर्ग में लेखों की विषय-सूची समान है। यहां यह कहना उचित होगा कि कुछ लेखों में स्थानीय प्रभाव दीख पड़ता है। कुछ वाक्य किसी लेख में अधिक हैं तथा किन्हीं लेखों में उनका स्वरूप विभिन्न प्रकार का है। सम्भव है अशोक ने स्थान विशेष को ध्यान में रखकर ऐसा किया हो। अमुक स्थान पर किसी वाक्य का उल्लेख समीचीन रहा या आवश्यक था अथवा राजनीति के कारण उनका समावेश उपादेय था, इन बातों का निर्णय अशोक ने किया तथा स्थानीय अंकनकर्त्ता को आदेश देकर एक निश्चित स्वरूप को अंकित कराया। उदाहरण के निमित्त गौड़ स्तम्भ लेखों में—सारनाथ, कौशाम्बी तथा सांची के स्तम्भ लेख एक विषय को लेकर खोदे गए थे। उसका उद्देश्य था--संघ में विवाद का निरोध। कोई भिक्षु संघ में विभेद न पैदा करे इस ध्येय को लेकर अशोक ने तीन स्तम्भ लेख खुदवाया। लुम्बिनी स्थान में भी एक स्तम्भ लेख मिला है जिसमें अशोक ने अपनी तीर्थयात्रा (बुद्ध के जन्मस्थान की यात्रा) का वर्णन किया है। उसी यात्रा के अन्त में भगवान् बुद्ध की जन्मभूमि होने के कारण मौर्य सम्राट् ने भूमिकर (टैक्स) घटाकर आठवां भाग कर दिया। इस तरह स्थान या उद्देश्य विशेष को ध्यान में रखकर अशोक ने लेख अंकित कराया था।

जितने अभिलेखों का अब तक पता चला है उससे यह अनुमान सहज ही में किया जा सकता है कि अशोक को बड़ी रुचि थी कि वह अपनी आज्ञाओं को चट्टानों तथा स्तम्भों पर खुदवाए। जिससे उसके आदेश चिरस्थायी हो सकें।

(१) प्रधान शिलालेखों में चौदह प्रज्ञापन हैं जो निम्नलिखित स्थानों से प्राप्त हुए हैं—

चौदहों प्रज्ञापन कालसी नामक गाँव (जिला देहरादून, उत्तर प्रदेश) से मिले हैं जो यमुना तथा टोंस के संगम पर एक चट्टान पर खुदे हैं। जिसके नीचे 'गजतमो' (सबसे श्रेष्ठ हस्ति) लिखा है। काठियावाड़ के जूनागढ़ नामक नगर के समीप गिरनार की सड़क की एक चट्टान पर चौदहों लेख खुदे हैं। चौदहों प्रज्ञापन की एक प्रतिलिपि पेशावर के युसुफजई तहसील में शहबाजगढ़ी गाँव के एक चट्टान पर अंकित है। उसी प्रदेश (सीमा प्रांत, पश्चिमी पाकिस्तान) के हजारा जिले में अबटाबाद के समीप मानसेरा के चट्टान पर चौदहों अभिलेख खुदे हैं। दक्षिण भारत में मद्रास प्रदेश के येरगुडी। (करनूल जिला) से भी चौदहों प्रज्ञापन प्राप्त हुए हैं। महाराष्ट्र के थाना जिले में सोपारा (प्राचीन शूर्पारक) नगर से आठवें प्रज्ञापन का कुछ अंश मिला है।

(१) **कलिंग शिलालेख**—उड़ीसा प्रदेश में भुवनेश्वर के समीप धौली तथा गंजाम जिले के जौगढ़ स्थान से प्रधान शिलालेखों की प्रतियाँ मिली हैं। इनका पृथक् वर्गीकरण करने का कारण यह है कि कलिङ्ग विजय करने के पश्चात् अशोक ने चौदह शिलालेखों की संख्या ११,१२ तथा १३ को हटाकर दो अन्य लेखों को धौली तथा जौगढ़ में स्थान दिया था। सम्भवतः उसे राजनीति तथा स्थानीय कारणों को ध्यान में रखकर ऐसा परिवर्तन करना पड़ा। यानी १ से लेकर दस तक तथा लेख संख्या १४ के अतिरिक्त दो अन्य धर्म लेख उड़ीसा में उन स्थानों में अंकित हैं। भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखकर यह कहना उचित होगा कि प्रायः सभी प्रधान शिलालेख साम्राज्य की सीमा पर स्थित हैं।

(२) **गौड़ शिलालेख**—अशोक ने साम्राज्य के विभिन्न स्थानों पर एक-एक लेख खुदवाया था जिनका विषय भिन्न-भिन्न है। प्रत्येक एक प्रमुख विषय को लेकर अंकित हुए थे। गौड़ शिलालेख निम्नलिखित स्थानों से उपलब्ध हुए हैं—

(क) सिद्धपुर, जतिंग-रामेश्वर तथा ब्रह्मगिरि (चितल दुर्ग जिला, मैसूर प्रदेश)

(ख) रूपनाथ (जबलपुर जिला, मध्यप्रदेश)

(ग) सहसराम (सहस्राम) (शाहाबाद जिला, बिहार)

(घ) वैराट् (जैपुर, राजस्थान)

(च) मास्कि (लिंगपुर तालुका के अन्तर्गत ग्राम; रायपूर जिला, आंध्रप्रदेश) इस लेख में 'अशोक' नाम उल्लिखित है।

(छ) गज्जर का लेख—यह गौड़ लेख मध्यप्रदेश के दतिया जिले से (झाँसी से २० मील उत्तर) प्राप्त हुआ है। इसमें अशोक शब्द (नाम) देवानं पियस पियदसि पदवी के साथ उल्लिखित है)

(ज) येरगुड़ी (करनूल जिला, मद्रास प्रदेश)

येरगुडी से चौदह प्रधान शिलालेखों के अतिरिक्त एक गौड़ लेख भी प्राप्त हुआ है। इसमें विषयान्तर बातें उल्लिखित हैं। एक विशेषता यह है कि येरगुडी गौड़ शिलालेख में कुछ पंक्तियाँ दाहिने से बाईं ओर अंकित हैं। अन्य बाएँ से दाहिने ब्राह्मी की प्रणाली पर खुदी गई हैं।

(फ) दक्षिण भारत के गोविमठ तथा पालकी गुण्डु (मद्रास प्रांत) में भी गौड़ लेख की प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं ।

(प) उत्तरप्रदेश के ललितपुर जिले तथा अहरौरा (मिर्जापुर जिले) से अशोक के गौड़ लेख की कुछ पंक्तियाँ प्रकाश में आई हैं । उनसे किसी विशेष बात पर प्रकाश नहीं पड़ता है ।

(३) **प्रधान स्तम्भ लेख**—अशोक ने सात स्तम्भ लेखों को साम्राज्य के अन्तर्गत प्रमुख स्थानों पर सफेद तीस फीट ऊँचे स्तम्भ पर अंकित कराया था । ये स्थान राजमार्गों पर स्थित थे अथवा स्वयं प्रमुख नगर थे ।

(य) देहली में अशोक के दो स्तम्भ हैं । जिसमें एक अम्बाला के समीप नोयार स्थान से तथा दूसरा मेरठ से सुल्तान फिरोजशाह तुगलक द्वारा देहली में लाए गये थे । एक फिरोजशाह कोटला पर खड़ा है तथा दूसरा पुरानी दिल्ली आकाशवाणी भवन के पास । वे देलही-टोपरा तथा देलही-मेरठ के नाम से प्रसिद्ध हैं ।

(र) **इलाहाबाद का स्तम्भलेख**—प्रारम्भ में अशोक ने इस स्तम्भ को कौशाम्बी में स्थापित किया था । सम्भवतः मुगल सम्राट् अकबर उसे हटा कर इलाहाबाद से आया । वह वर्तमान किले में ऊँचे चबूतरे पर खड़ा है ।

(ल) बिहार प्रदेश के चम्पारन जिले में अशोक के तीन स्तम्भ खड़े हैं । पहला लोरिया अर राज (राधिअर) लोरिया नन्दन (माथिअर) तथा तीसरा राम-पुरवा नामक स्थान पर स्थित है । मोतिहारी नगर से तीनों स्थान को सरलता-पूर्वक देख सकते हैं । एक जिले में तीन स्तम्भों की स्थिति कौतूहल पैदा करती है । लौरिया के दोनों स्तम्भ अपने स्थान पर खड़े हैं । सम्भवतः अशोक ने इस भू-भाग को महत्वपूर्ण समझा । अथवा कपिलवस्तु से नेपाल तक का मार्ग प्रमुख रहा होगा जिसकी भौगोलिक प्रधानता के कारण तीन स्तम्भों पर लेख अंकित कराना आवश्यक हुआ । इन छः स्तम्भों में केवल देलही टोप्रा पर सातों लेख खुदे हैं । अन्य स्तम्भों पर छः लेख ही अंकित मिलते हैं ।

(४) **गौड़ स्तम्भलेख**—ये निम्न स्थानों से मिले हैं ।

(१) प्रायः गौड़ स्तम्भलेखों का विशेष प्रयोजन था । अतएव विशिष्ट स्थानों पर ही स्तम्भ स्थिर किये गये । सारनाथ (वाराणसी के समीप) बुद्ध का धर्मचक्र परिवर्तन का प्रसिद्ध स्थान है । साँची पाटलिपुत्र से भरौंच (बन्दरगाह) जाने वाले मार्ग पर स्थित है । उस स्थान की सेट्ठी की कन्या से अशोक ने विवाह किया था । स्तूप के साथ ही स्तम्भ का कार्य अशोक ने सम्पन्न किया होगा । साँची (स्थान) पूर्वी मालवा की राजधानी विदिशा के समीप है । कौशाम्बी प्रयाग से तीस मील की दूरी पर यमुना के किनारे वत्स राजाओं की राजधानी थी । वहीं घोषिताराम में बुद्ध ने वर्षावास किया था । ऐसे प्रमुख स्थानों को अशोक ने स्तम्भ लेख अंकित कराने के लिए चुना । इन लेखों को धार्मिक लेख (Schism edict) कहना चाहिए ।

सारनाथ, सांची तथा कौशाम्बी से जो स्तम्भ मिले हैं उन स्तम्भों पर एक ही आज्ञा खुदी है । यानी लेख समान विषय वाले हैं । उनमें सभी वाक्य एक से नहीं हैं । सारनाथ लेख

पाटलिपुत्र के महामात्र को सम्बोधित कर लिखा गया था। जिसकी प्रति भिक्षु-भिक्षुणी, उपासक, उपासिका तथा अन्य पदाधिकारी को दी गई थी। सांची का लेख काकनाडवोट महाविहार (सांची का एक नाम था) के भिक्षुओं को सम्बोधित कर लिखा गया था। कौशाम्बी का स्तम्भ लेख कौशाम्बी के महामात्र के लिए आज्ञा के रूप में उत्कीर्ण था। (देवानं पिय आनपयति कोसंविय महामात) इन तीनों लेखों का विषय यही था कि संघाराम में विभेद पैदा करने वाले भिक्षु एवं भिक्षुणी बहिष्कृत कर दिए जायेंगे। सम्भवतः ये तीनों आज्ञा प्रदान करने वाले स्तम्भ लेख पाटलिपुत्र की तीसरी बौद्ध संगीति (सभा) के बाद ही अंकित हुए होंगे।

(२) रुम्मिनदेई स्तम्भ लेख—नेपाल की तराई में प्राचीन लुम्बिनी नामक स्थान पर गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। वह बौद्धों का प्रसिद्ध तीर्थ है। अशोक भी तीर्थयात्रा के प्रसंग में वहां गया और एक स्तम्भ लेख खुदवाया। भगवान् बुद्ध के जन्मस्थान होने के कारण भूमिकर कम करने की घोषणा की। साधारणतः प्राचीन भारत में छठां भाग कर के रूप में लिया जाता था पर अशोक ने उसे घटा कर आठवां भाग कर दिया (अठभगिये च) वर्तमान समय में वह रुम्मिनदेई के नाम से प्रसिद्ध है। उत्तर प्रदेश के गोरखपुर होकर वहां जाते हैं।

(३) निगाली सागर स्तम्भ-लेख—नेपाल तराई में निगाली नामक सागर के तट पर यह स्तम्भ खड़ा है। इसमें कनकमुनि के स्तूप की वृद्धि का उल्लेख है।

(४) रानी का स्तम्भलेख—प्रसिद्ध इलाहाबाद स्तम्भ पर प्रधान स्तम्भ लेखों के निचले भाग में एक लेख अंकित है जिसमें द्वितीय रानी द्वारा प्रदत्त आराम या दानगृह की चर्चा (सब महामात्र को सम्बोधित कर) की गई है।

इन स्तम्भ लेखों को अंकित करा-कर अशोक ने धर्म का प्रचार किया। धार्मिक भावना से सभी ओत-प्रोत हैं। विषयान्तर की चर्चा उनमें नहीं है।

(५) अशोक के गुहा-लेख—बिहार के गया जिले में बेला रेलवे स्टेशन के समीप बराबर पर्वत में अशोक ने गुहा खुदवायी थी। ये गुफाएँ प्राचीनतम मानी जाती हैं। इससे सम्बन्धित लेख अंकित हैं। उनमें सम्राट् द्वारा न्यग्रोध गुहा तथा खलतिक गुहा आजीविक साधुओं के लिए दान देने का उल्लेख है। इससे बौद्ध शासक के सहिष्णुता का परिचय मिलता है। उसी के समीप नागार्जुनी पर्वत में गुहा-लेख मिला है जिसमें दशरथ द्वारा गुहादान का वर्णन मिलता है।

अशोक के सातवें स्तम्भ लेख में भी आजीविक साधुओं के संघ की चर्चा है जहाँ धर्ममहामात्र के जाने की आज्ञा उल्लिखित है।

अशोक द्वारा विदेशी भाषा में अंकित लेख

प्रथम खण्ड में इस विषय की चर्चा हो चुकी है कि अशोक के सभी धर्मशासन प्राकृत भाषा तथा ब्राह्मी एवं खरोष्ठी लिपि में अंकित किए गए थे। मानसेरा तथा शहबाजगढ़ी के लेख उस भू-भाग में प्रचलित लिपि—खरोष्ठी में मिलते हैं। कुछ वर्ष पूर्व अफगानिस्तान के कन्धहार के खण्डहरों को खोदते समय अशोक के चार लेख (दो यूनानी तथा दो आरमेक भाषा में) प्रकाश में आये। उनका विषय शिलालेख पहला तथा चौथा और लघु

शिलालेख पहला एवं दूसरा से मिलता है। १९६३ में कन्धहार के बाजार से दो लेख प्रकाश में आए जिनकी भाषा वही है। इन लेखों में किसी विशेष विषय की चर्चा नहीं है। रोम की अनुसंधान पत्रिका में इनका उल्लेख किया गया है।

धर्म-लेख अंकन की तिथियां

अशोक के धर्म-लेखों का अध्ययन उसके जीवन-घटनाओं की तिथियों पर प्रकाश डालता है। सभी लेख तिथि युक्त नहीं हैं किन्तु कतिपय अभिलेखो में तिथि का उल्लेख है और कुछ धर्म-लेखों के भीतरी परीक्षण से तिथि का अनुमान लगाया जा सकता है। अशोक के लेखों में सारी तिथियां अभिषेक से सम्बन्धित हैं। उदाहरणार्थ—

(अ) दुवादसवसाभिसितेन (तीसरा शि० ले०)

(ब) तेदस वसाभिसितेन (पांचवां शि० ले०)

(स) सदुवीसति वस अभिसितेन (प्रथम स्तम्भलेख)

इस प्रकार जिस तिथि का उल्लेख है उसको अभिषेक की तिथि से जोड़कर ही उस घटना की चर्चा की जाती है। अतएव लेखों के अंकन को वास्तविक तिथियों की जानकारी के लिए अशोक के अभिषेक का समय ज्ञात करना आवश्यक हो जाता है। पुराणों के अनुसार अशोक के पितामह चन्द्रगुप्त मौर्य २४ वर्ष तक तथा उसका पिता बिन्दुसार २५ वर्षों तक राज्य करता रहा। चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ सिकन्दर की भेंट होने की तिथि ई० पू० ३२३ मानी गई है अतएव चन्द्रगुप्त मौर्य ई० पूर्व ३२३-२९९ तथा बिन्दुसार ने ई० पूर्व २९९-२७४ के लगभग शासन किया। सिंहल द्वीप के ग्रन्थ अशोक के सम्बन्ध में यह कथानक उपस्थित करते हैं कि उसने अपने परिवार के सौ बन्धुओं को मारकर गद्दी प्राप्त की। शासन की बाग-डोर लेने पर अशोक सिंहासनारूढ़ हुआ (लगभग ई० पू० २७४)। किन्तु कई कारणों से उसका राज्याभिषेक चार वर्षों तक न हो सका। यानी ई० पू० २७० में अशोक का अभिषेक सम्पन्न हुआ। इसी तिथि (ई० पू० २७०) में धर्म-लेखों को तिथियाँ उल्लिखित हैं। अभिषेक के आठवें, १२ वें, १३ वें या २६ वें वर्ष में अमुक लेख अंकित किया गया था। ई० पू० २७० को अभिषेक की तिथि मानकर निम्न प्रकार से लेखों की तिथियाँ उल्लिखित हैं।

अशोक सर्वप्रथम साम्राज्यका महत्त्वाकांक्षी था। इसलिए उसने कलिंग पर चढ़ाई की। गिरनार (काठियावाड़) के चौदह शिलालेखों में तेरहवें में इस युद्ध का वर्णन है कि अभिषेक के आठवें वर्ष में अशोक ने कलिंग विजय किया। उस युद्ध में लाखों नर संहार की भीषण हृदय-विदारक दृश्य देखकर वह बौद्ध धर्मावलम्बी हो गया। अतएव उसने भेरीघोष (युद्ध के नगाड़े) को धर्मघोष (धार्मिक चर्चा) में परिवर्तित कर दिया। यही कारण था कि अशोक ने धर्म-प्रचार तथा प्रसार के लिए धर्म-लेखों (शासनों) को विभिन्न स्थानों पर अंकित कराया ताकि सारी प्रजा उसे पढ़कर, सम्राट् के विचारों से अवगत हो जाय एवं मन परिवर्तन कर धर्माचरण करे। अपने धार्मिक विचारों को शिला या स्तम्भ पर खुदवाकर अशोक ने संसार पर धर्म-विजय प्राप्त की।

अशोक के धर्म-लेखों में उल्लिखित तथा भीतरी अनुशीलन या परीक्षण से उसके लेखों को निम्नलिखित क्रम में रक्खा जा सकता है। वर्ष को अभिषेक से सम्बन्ध करते हैं।

(१) तेरहवाँ शिलालेख—आठवें वर्ष (कलिंग-विजय का विवरण)

(२) रूपनाथ गौड़ शिलालेख—१० वें वर्ष इसमें 'देवानं पिये हवं आह-सातिरेकानि अढ़तियानि व य सुमि प्रकाश सके, वाक्य का उल्लेख स्पष्ट प्रकट करता है कि बुद्ध मत की ओर आकर्षित होने के २½ वर्ष बाद यह लेख खुदा गया। अतएव कलिंग-युद्ध के दो वर्ष यानी १० वें वर्ष में रूपनाथ स्थान पर लेख अंकित किया गया।

(३) आठवाँ शिलालेख—१० वें वर्ष में (दसवसाभिसितेन)-विहार यात्रा को त्यागकर धर्मयात्रा आरम्भ हुई।

(४) मास्कि तथा येरगुडी के गौड़ शिलालेख में अधिकानि अढ़तियानि वसानि के उल्लेख ज्ञात होता है कि रूपनाथ के साथ ही ये लेख खोदे गये थे। यानी अभिषेक के १० वर्ष बाद।

(५) तीसरा तथा चौथा शिलालेख एवं बराबर गुहालेख–१२ वें वर्ष छठां स्तम्भ लेख–१२ वें वर्ष।

इसमें वर्णन आता है कि सबके सुख तथा हित के लिए धर्म शासन लिखे गए थे। सम्भवतः अशोक के गौड़ शिलालेख अभिषेक के १० वें वर्ष से १२ वें वर्ष के भीतर अंकित हुए थे। उनके भीतरी परीक्षण से यह विदित हो जाता है कि कलिंग-विजय कर अहिंसा की नीति अपनाकर तथा धर्म-प्रचार के लिए धर्मयात्रा, धर्म मंगल आदि कार्य किये गए जिनका वर्णन किसी न किसी रूप में गौड़ शिलालेखों में निहित है। द्वितीय तथा तृतीय स्तम्भ लेख गौड़ शिलालेखों के समकालीन हैं। उनके पश्चात् चौदह प्रधान शिलालेखों में चौथा, सातवाँ, नवाँ, ग्यारहवाँ तथा बारहवें धर्म-लेखों के अंकन की तिथि निश्चित की जा सकती है। इनमें अहिंसा का प्रचार, धर्म मंगल का आचरण सभी मतों का समादर, किसी मत विशेष की प्रशंसा या निन्दा न करना आदि विषयों की चर्चा मिलती है। अतएव यह सुझाव रखना उचित होगा कि बौद्ध मतावलम्बी हो जाने पर ही अशोक ने ऐसे लेखों को अंकित कराया जिनके द्वारा उसके विचार तथा धर्म का प्रसार हो सके। आन्तरिक परीक्षण से ही उपर्युक्त लेखों की तिथि १० वर्ष (जब वह बौद्धमत में प्रवेश कर लिया) से १२ वें वर्ष के मध्य-काल में रक्खी जाती है।

(६) पाँचवां शिलालेख—१३ वें वर्ष—इसमें धर्म महामात्र की नियुक्ति का उल्लेख है। जिसे धर्म के सभी कार्य को सम्पन्न करने का भार दिया गया। छठां शिलालेख भी इसी समय में अंकित हुआ होगा क्योंकि शासन में सुधार की बातें उल्लिखित हैं।

(७) निगाली सागर स्तम्भ लेख—१४ वें वर्ष

(८) रूम्मनदेई स्तम्भ लेख—२० वें वर्ष

(९) पहला, चौथा, पांचवां स्तम्भ लेख—२६ वें वर्ष (सडवीसतिवस अभिसितेन)

(१०) सातवां स्तम्भ लेख—२७ वें वर्ष

(११) चौदहवां शिलालेख—अंतिम

इस शिलालेख में निम्न वाक्य उल्लिखित है—धमलिपि देवानं पियेना पियदसिना

लिखपता अथियेना सुखितेना (= सूक्ष्म) अथि मझियेना (= मध्यम) अथि (= अस्ति) विथरेना (= विस्तृत)

इसका अर्थ यह निकलता है कि अशोक ने तीन प्रकार के—छोटा, मध्यम एवं बड़ा धर्म-लेख अंकित कराये जिनका ज्ञान चौदहवां शिलालेख के प्रज्ञापन से पूर्व था। तात्पर्य यह है कि उसने इस लेख को सबसे अन्त में खुदवाया। अन्तिम पंक्तियों में स्पष्ट कर दिया गया है कि धर्मलेखों में जो गलतियां या अपूर्णता हो, वह सभी लिपिकर (खोदने वाला) के अनभिज्ञता के कारण मानना चाहिए।

तिथियां

यह कहा जा चुका है कि अशोक ई० पू० २७४ में सिंहासनारूढ़ हुआ था किन्तु ई० पू० २७० में उसका राज्याभिषेक हुआ। पुराणों के आधार पर अशोक के जीवन को मुख्य यह विदित है कि अशोक ने करीब चालीस वर्षों तक राज्य किया। अतएव उसकी जीवन घटनाओं की तिथियां ई० पू० २७४ से २३४ ई० पू० के मध्य स्थिर की जा सकती हैं।

(१) सिंहासनारूढ़ ई० पू०—२७४
(२) राज्याभिषेक ,, ,,—२७०
(३) कलिङ्ग युद्ध ,, ,,—२६२
(४) संघ में प्रवेश ,, ,,—२६०
(५) कुछ प्रधान शिलालेख तथा गौड़ शिलालेख का अंकन ई० पू० २६०–२५८
(६) महामात्र की नियुक्ति ,, ,,—२५७
(७) कनकमुनि का स्तूप विस्तार ,, ,,—२५६
(८) लुम्बिनी की यात्रा ,, ,,—२५०
(९) स्तम्भ लेखों का अंकन ,,—२४९–४४
(१०) चौदहवां शिलालेख ,, ,,—२४०
(११) मृत्यु ,, ,,—२३४–३२

अशोक का साम्राज्य-विस्तार

ईसा पूर्व चौथी शताब्दी की घटना है कि जब यूनानी राजा सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था। उसी समय चन्द्रगुप्त मौर्य ने पाटलिपुत्र में शासन करने वाले नन्दों का नाश कर एक साम्राज्य की स्थापना की जो क्रमशः विस्तृत होकर विशाल साम्राज्य हो गया। मौर्य साम्राज्य के विस्तार की कहानी (१) यूनानी इतिहास (२) अशोक के लेख (३) जैन कथानक (४) चीनी यात्री ह्वेनसांग का विवरण तथा (५) महाक्षत्रप रुद्रदामन का गिरनार लेख सुनाते हैं। उत्तर-पश्चिम भारतीय सीमा पर सिलिक्यूकस से युद्ध कर चन्द्रगुप्त मौर्य ने सन्धि स्वरूप मकरान, कलात (अफगानिस्तान) तथा बिलूचिस्तान के प्रदेश प्राप्त किया था। अशोक के शिलालेख मौर्य राष्ट्र की सीमा पर प्रायः अंकित मिले हैं। मनसेरा, शाहबाजगढ़ी (उत्तर-पश्चिम में) कालसी (देहरादून हिमालय की तराई)

रुम्मनदेई (नेपाल की तराई) जौगढ़ एवं धौली (उड़ीसा प्रान्त) येरी गुड़ी (करनूल, मद्रास प्रान्त) तथा गिरनार के अभिलेखों (काठियावाड़ प्रान्त) की स्थिति से स्पष्ट हो जाता है कि अशोक के शासन-काल में साम्राज्य विस्तृत था।

जैनश्रुति के आधार पर चन्द्रगुप्त मौर्य जीवन के अंतिम समय में जैन होकर मैसूर प्रांत के श्रवणबेलगोला नामक स्थान पर रहता था। उसी प्रकार ह्वेनसांग ने भी यात्रा विवरण में अशोक द्वारा निर्मित बंगाल के स्तूपों का वर्णन किया है। प्रश्न यह है कि मौर्य सम्राट् अशोक ने साम्राज्य का कितना भाग पैतृक सम्पति के रूप में प्राप्त किया तथा कितना भाग उसने विजित किया ? यद्यपि अशोक के द्वितीय शिलालेख में "सवता विजितसि (सर्वत्र विजिते)" । "देवानं प्रियस पियदसिनो राजो" (राजा प्रियदर्शि के जीते स्थानों में) का उल्लेख मिलता है किन्तु अभिलेखों की परीक्षा यह बतलाती है कि अशोक ने केवल कलिङ्ग प्रदेश को ही विजित किया। उसके पश्चात् वह बौद्ध संघ में प्रवेश कर भेरीघोष को धम्मघोष में परिणत कर दिया। कलिङ्ग युद्ध ने उसके हृदय में परिवर्तन ला दिया। युद्ध बंद तथा अहिंसा का प्रचार। अतएव कलिङ्ग विजय के अतिरिक्त 'सर्वत्र विजतिम्हि' स्थानों का वर्णन (द्वितीय शिलालेख) वास्तविकता की कसौटी पर नहीं उतरता। कलिङ्ग युद्ध साम्राज्य विस्तार की इच्छा से किया गया हो इसमें भी संदेह है। खारवेल के हाथी गुम्फा लेख के परीक्षण से विदित होता है कि सम्भवत: कलिङ्ग के राजा ने चन्द्रगुप्त मौर्य के पश्चात् स्वतन्त्रता की घोषणा की हो जिसको दबाने के लिए अशोक ने कलिङ्ग पर आक्रमण किया। हाथीगुम्फा लेख में—ततिये कलिग-राज-वसे पुरिस-युगे महाराजाभिसेचनं पापुनाति (कलिङ्ग राजवंश के महान् पुरुषों में खारवेल तीसरा था जिसे अभिषेक किया गया) का उल्लेख उसी घटना को प्रकाशित करता है। सर्वप्रथम युद्ध में नन्दराजा ने कलिग से जिन (महावीर) की प्रतिमा बलात् उठाकर मगध ले गया। उसके पश्चात् मौर्य शासक चन्द्रगुप्त के पौत्र अशोक ने कलिग जीता। वह प्रदेश चन्द्रगुप्त मौर्य के अधीन ही था। क्योंकि उसी मार्ग से होकर वह मैसूर गया होगा। सम्भव है बिन्दुसार के समय में विद्रोह खड़ा हो गया हो। जिसको अशोक ने सिंहासनारूढ़ होने पर पुन: शांत किया। उसके पश्चात् खारवेल के समय में कलिग पुन: स्वतन्त्र हो गया जिसकी चर्चा 'ततिये कलिग-राज-वसे पुरिस-युगे (कलिग का तीसरा युग पुरुष) शब्दों से की गई है। कहने का तात्पर्य यह है कि मौर्य साम्राज्य को अशोक ने पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त किया। उस साम्राज्य की वृद्धि में अशोक का कोई हाथ न था। कलिग के विद्रोह को दबाने के पश्चात् उसका हृदय भी द्रवित हो गया। अहिंसा के सिद्धान्त तथा उसके धर्म शासन के कारण अशोक के उत्तराधिकारी भी युद्ध से विमुख रहे। यों तो मौर्य साम्राज्य के पतन के अनेक कारण थे किन्तु सम्राट् अशोक की युद्ध-नीति (किसी को न मारना, धर्म की विजय) अधिक अंशों तक मौर्य साम्राज्य के पतन का प्रमुख कारण मानी जाती है।

मौर्य साम्राज्य की सीमा निर्धारित करने में अशोक के धर्म-लेख (दूसरा तथा तेरहवाँ शिला लेख) भी सहायता करते हैं। द्वितीय शिलालेख में कई सीमा राज्यों के नाम उल्लिखित हैं। चोडा, पाडा, केतल पुंतो सातिय पुंतो तंवपंनि (सिंहल) आदि के नाम से प्रकट होता है कि मद्रास प्रदेश की नीचे का भाग तथा वर्तमान केरल अशोक के साम्राज्य में

सम्मिलित नहीं थे। चोल शासक पूर्वी किनारे पर राज्य करते थे जिस कारण उस समुद्र तट का नाम चोलमण्डल रक्खा गया। पिछली कई शताब्दियों तक चोल राजा शासन करते रहे। तामिल प्रदेश का दक्षिणी (मदुरा तथा तिनिवेली के जिले) भाग पांडच लोगों के अन्तर्गत रहा। दक्षिण भारत में मैसूर के ब्रह्मगिरि लेख तथा करनूल जिले में स्थित येरगुड्डी के प्रधान तथा गौड़ शिलालेखों से अशोक के साम्राज्य की दक्षिणी सीमा का स्वतः परिज्ञान हो जाता है। यों तो द्वितीय लेख में ताम्रपर्णी (लंका) का भी उल्लेख है जिसे सिंहलद्वीप मानते हैं किन्तु चोल पांडच नामों से दक्षिणी भाग (तामिल प्रदेश) का प्रदेश अशोक की राज्य सीमा पर स्थित थे। तेरहवें शिलालेख में जिन सीमान्त (इह च सवेषु च अंतेषु) यवन नरेशों के नाम दिये गए हैं (अंतियोकेन, मक, तुरमम, अलिक सुन्दर) उसी के साथ "चोड पंडिया अवं तंवपंनिया" का भी उल्लेख है यानी ये सीमा पर स्थित थे।

दक्षिण सीमा के अतिरिक्त उत्तर पश्चिमी भारत के शहबाजगढ़ी तथा मानसेरा के शिलालेख इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि उत्तर-पश्चिमी प्रांत (वर्तमान पश्चिमी पाकिस्तान) अशोक के राज्य में सम्मिलित था। यदि यूनानी लेखकों द्वारा कथित विषय पर ध्यान दिया जाय तो साम्राज्य की सीमा अफगानिस्तान तक विस्तृत माननी चाहिए। यह ज्ञात है कि चन्द्रगुप्त मौर्य को सेल्यूकस द्वारा संधि के फलस्वरूप कई प्रदेश प्राप्त हुए थे। अशोक के भौतिक साम्राज्य की सीमाओं का निश्चय करना भी एक कठिन समस्या है। मौर्य साम्राज्य के पूर्वी सीमा का निर्णय चीनी यात्रियों के विवरण पर ही आधारित हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य तथा अशोक का बंग से क्या सम्बन्ध था, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। फाहियान ने लिखा है कि अशोक ने चौरासी हजार स्तूप बनवाये, जिसमें कुछ बंगाल में भी स्थित थे। ह्वेनसांग ने कई स्तूपों को देखा था और निम्न स्थानों में निर्मित स्तूपों का उल्लेख किया है—

ताम्रलिप्ति (बंगाल), समतट, (ब्रह्मपुत्र का डेल्टा) पुण्यवर्धन (उत्तरी बंगाल, कर्णसुवर्ण वदेवान) वीरभूमि आदि स्थानों के स्तूप। अन्य प्रमाणों की अनुपस्थिति में स्तूपों की स्थिति बंगाल में अशोक के साम्राज्य विस्तार पर प्रकाश डालती है। यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि उसने अपनी राज्य-सीमा में स्तूपों का निर्माण किया होगा। इसी आधार पर कल्हण के कथन की पुष्टि हो जाती है कि अशोक कश्मीर का सम्राट् था। नेपाल में भी अशोक के स्तूप पाये गए हैं। अतः कालसी का अभिलेख, काश्मीर तथा नेपाल के स्तूप अशोक के साम्राज्य की उत्तरी सीमा निर्धारित करते हैं।

पश्चिमी भाग में गिरनार के चट्टान पर अशोक के चौदहों प्रधान शिलालेख खुदे गए थे। इस अभिलेख के अतिरिक्त उसी चट्टान पर दूसरी सदी में शासन करनेवाला महाक्षत्रप रुद्रदामन का लेख उत्कीर्ण है। उसमें चन्द्रगुप्त मौर्य द्वारा सुदर्शन झील तैयार करने का वर्णन है तथा अशोक के गवर्नर द्वारा नहर में नालियाँ निकालने का उल्लेख है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि काठियावाड़ को मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य ने विजय किया था। अशोक को उस सम्बन्ध में कुछ भी कष्ट उठाना न पड़ा। उसके चौदहों अभिलेख अशोक के राज्य-सीमा को प्रमाणित करते हैं। इन लेखों तथा स्तूपों के प्राप्ति स्थानों के आधार पर यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि अशोक का साम्राज्य विशाल था जो उत्तर में हिमालय, पूर्व में बंगाल,

दक्षिण में तामिल प्रदेश (मद्रास का प्रदेश) आधुनिक मैसूर राज्य तक तथा पश्चिम में समुद्र के किनारे तक विस्तृत था। बिलोचिस्तान, मकरान तथा अफगानिस्तान भी उसके साम्राज्य के अंग थे।

अशोक का धर्म

महान् मानव अशोक अपने जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में हिंसात्मक प्रवृत्तियों से ओत-प्रोत था। कलिंग विजय उसकी साम्राज्यवादी लिप्सा की पराकाष्ठा थी। उस दशा में अशोक विश्व का एक महान् सम्राट् था परन्तु उसे धर्म द्वारा ऐसे विशाल साम्राज्य का निर्माण करना था जिसकी सीमा असीम थी। यों तो बड़े विशाल साम्राज्य भी नष्ट हो गए किन्तु अशोक आज भी अमर है। उसी अमरत्व के कारण भारत की सरकार ने उसके स्तम्भ शीर्ष का राजकीयचिन्ह् के रूप में ग्रहण किया है।

अशोक को यह अमरता प्रदान करने का श्रेय कलिंग युद्ध को है, जहाँ भीषण रक्त-पात हुआ। उसने मानवता को जागृत कर दिया। उसने तेरहवें शिलालेख में कहा है कि उस नर-संहार के हजारवें हिस्से का नाश भी देवताओं के प्रिय अशोक के दुःख का कारण होगा। उसका कथन था कि धर्म विजय ही प्रमुख विजय है। "अभि मुख मव विजये, देवानं प्रियस यो ध्रम विजयो"।

अतएव अशोक के धार्मिक विचार के सम्बन्ध में विद्वानों में एक मत नहीं है। फ्लीट का मत है कि अशोक के धर्म-लेखों में जिस सिद्धान्त का निरूपण किया गया है वह राजधर्म के सदृश था। राजनीति तथा सदाचार के मिश्रित भाव का परिज्ञान उसके अभिलेखों के अध्ययन से हो जाता है। दूसरा मत स्मिथ महोदय ने प्रस्तुत किया था। उनके विचार में एक प्रकार के 'विश्वधर्म' का प्रतिपादन अशोक ने किया। प्राचीन भारत के धार्मिक विचार-धारा तथा उपनिषद के भावों को अपनाकर अशोक ने जनता को ऐसे धर्म का उपदेश दिलवाया जिसके विचार अन्य मतों में भी समाविष्ट हैं। द्वितीय स्तम्भ लेख में अशोक ने धर्म की व्याख्या की है। धर्म वही है जो पाप से दूर रहे। अच्छे काम करे। दया, दान, सत्य, शौच (पवित्रता) का पालन करे। कियं चुधंमेति। अपासिनवे बहु कयाने दया दाने सचे सोचमे विविधे मे अनुगहे करे।

महान् सम्राट् के लिए सहिष्णु होना परमावश्यक है। अर्थशास्त्र तथा ब्राह्मण मत में ऋषियों ने ऐसा ही उल्लेख किया है। अर्थशास्त्र (४,३) में वर्णन है कि शासक सिद्ध पुरुषों को राज्य में निवास करने को प्रोत्साहन देता है। यही अशोक के लेखों में उल्लिखित है—सब पासंडापि ये पूजित विविधाय पूजाय। स्तम्भ लेख ६। सवत्र इछति सव्र प्रषंड वसेयु। शि० ल० ७। राजधर्म के मानने वाले यह भी प्रतिपादित करते हैं कि महाभारत में (१२,३६) राजा के लिए जनता के कल्याण में लीन रहना आवश्यक रूप से वर्णित है।

हितार्थं सर्वलोकस्य।
सर्वलोकहिते रतः।

ऐसे ही विचार अशोक के तेरहवें शिलालेख में व्यक्त किए गए हैं। अर्थशास्त्र में भी राजा के जिन धर्मों का विवरण मिलता है उसकी समता अशोक के लेखों (स्तम्भ लेख ५ एवं ७) में व्यक्त उपदेशों से की जा सकती है।

अशोक ने लेखों में अनेक स्थलों पर ऐसा उपदेश खुदवाया है कि मानवीय स्तर पर मूल्याङ्कन करने से सभी धर्मों से सम्बन्धित प्रतीत होते हैं। उसके विचार में धर्म का मंगलाचार महा फल देने वाला है। इस मंगलाचार में दास तथा सेवकों के प्रति उचित व्यवहार, गुरुओं का आदर, प्राणियों की अहिंसा, श्रमण एवं ब्राह्मणों को दान आदि को समाविष्ट करता है—इ यं चुखा महाफले ये ध्रम मगले। अत्र इयं दस भटकसि सम्य परियति गुरुन अपचिति प्रणन समये, श्रमरण ब्रमणन दने, एषे अणे च एदिशे ध्रम मगले नम (९ वाँ शिलालेख)।

तीसरा मत डा० भण्डारकर ने प्रतिपादित किया जिसे हुल्स ने भी अनुमोदित किया। उनके विचार में अशोक ने जिस विचार या सिद्धान्त का प्रतिपादन किया वह बौद्ध धर्म से घटकर न था। यानी लेखों में जो उपदेश भरे पड़े हैं अथवा जिसका प्रचार किया वह बौद्ध-धर्म से ही सम्बन्धित है। उसे बौद्धमतानुयायी सिद्ध करने के लिए निम्न प्रमाण उपस्थित किए जाते हैं—

(१) बौद्धधर्म स्वीकार कर अशोक ने महाबोधि तथा लुम्बिनी की धर्म यात्रा की। (८ वां शिलालेख) बुद्ध के जन्म-स्थान होने के कारण अशोक ने भूमिकर कम कर दिया (अठभगिये च)—रुम्मनदेई स्तम्भ लेख। यह कार्य राजा को बौद्ध धर्मानुयायी सिद्ध करता है।

(२) कनकमुनि के स्तूप का संस्कार (निगाली सागर स्तम्भ लेख)।

(३) बैराट लेख में अनेक बौद्ध ग्रंथों (निकाय ग्रंथ) का उल्लेख है (इमानि भंते धम पालियायानि) जिसे समय-समय पर पढ़ा जाता था।

(४) द्वितीय स्तम्भ लेख में जिन मानवीय गुणों का विवरण है वे धम्मपद में वर्णित हैं। अतः उसमें बौद्ध मत के प्रचारार्थ ही उन गुणों का वर्णन किया गया।

(५) स्यात् इस बात से कुछ सहमत होंगे कि स्वर्ग-नरक की कल्पना ब्राह्मण मत की देन है। किन्तु यह विचार (१३ वें शिलालेख) धम्मपद में भी पाया जाता है।

(६) अशोक ने ईसा पूर्व २५३ वर्ष में बौद्ध भिक्षुओं की सभा आमंत्रित की जिसमें स्थविरवाद पर बल दिया गया।

(७) अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ धर्मदूत भेजा था जिसमें उसके पुत्र महेन्द्र एवं पुत्री संघमित्रा का नाम लिया जाता है।

(८) धर्ममहामात्र की नियुक्ति (५ वां शिलालेख) इसे विभिन्न मत के संघ में भी भ्रमण करने का आदेश था (स्तम्भ लेख ७ वां)।

(९) नवें शिलालेख में जो मंगलाचार, सम्यक् व्यवहार तथा श्रमण के दान का विवरण आया है, वह सभी सुत्त निपात (२, ४) के अन्तर्गत महामंगल सुत्तजातक में उपलब्ध है।

(१०) अशोक के बौद्ध होने की प्रामाणिकता कलात्मक उदाहरण से भी सिद्ध होती है। हस्ति— भगवान बुद्ध के जन्म का चिन्ह था, इसीलिए धौली शिलालेख के अन्त में हाथी की आकृति खुदी है। तेरहवें शिलालेख के गिरनार पाठ में अन्तिम वाक्य इस प्रकार उत्कीर्ण है— "स्वेतोहस्ति सर्वलोक सुखाहरो नाम"

इन सभी उपर्युक्त प्रमाणों का विवेचन किया जाय तो अशोक को बौद्ध सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं। वह स्वतः सिद्ध है। अशोक के धर्म सम्बन्धी चर्चा के उलझन का कारण यह प्रतीत होता है कि विद्वानों ने तत्कालीन परिस्थितियों पर बिना विचार किए व्यक्तिगत भावना को व्यक्त किया है। यह सही है कि बौद्ध होने से पूर्व अशोक ब्राह्मण धर्म का मानने वाला था किन्तु उसे त्यागने के पश्चात् वह बौद्ध हो गया, यह घटना सन्देह रहित है। ब्राह्मण धर्म के यज्ञ या आडम्बर से खिन्न होकर एवं कलिङ्ग के नरसंहार के कारण अशोक बुद्ध मत का अनुयायी हो गया। उसने संघ में भी प्रवेश किया और लेखों में संघ शब्द बौद्ध संघ का द्योतक है।

रीस डेविस का सुझाव था कि अशोक ने दो प्रकार का धर्म प्रचारित किया। (१) भिक्षुओं के लिए तथा (२) उपासकों के निमित्त। उनके मत में अशोक ने जिस धर्म का प्रसार किया वह सामान्य उपासकों का धर्म था। बड़ों का आदर, दान, सम्यक् व्यवहार तथा स्वर्ग-नरक की कल्पना उपासकों के लिए उपयुक्त रही। अस्तु, लेखों में जिस धर्म का वर्णन है वह बौद्धधर्म ही कहा जायगा।

धर्म प्रचार

अशोक के धर्म की चर्चा विश्व में बौद्धधर्म के प्रचार के साथ भी सम्बन्धित है। यों तो भगवान् बुद्ध वर्षावास में भ्रमण कर प्रचार करते तथा उपदेश किया करते थे किन्तु उत्तरी भारत की सीमा में ही उनका कार्य सीमित रहा। दक्षिण भारत तथा सीमा प्रांतों एवं विदेशों में अशोक ने धर्म-प्रचार में सफलता प्राप्त की। लघु शिलालेख (रूपनाथ, मास्कि आदि) में अशोक ने कहा है कि ढाई वर्ष तक वह उपासक था और एक वर्ष हुए वह संघ में आया। यानी ई० पू० २६० में अशोक ने संघ में शरण ली। भारत में धर्म-प्रचारार्थ उपायों पर सातवां स्तम्भ लेख प्रकाश डालता है। वह जनता में धर्म प्रचार एवं धर्म वृद्धि की बातें सोचा करता था। इसी उद्देश्य को लेकर अशोक ने धर्म स्तभों का निर्माण किया तथा धर्म महामात्र की नियुक्ति की। धर्म विधि की रचना की। (धम्म लिपि लेखापिता) देवानं पिये पियदसि हेवं आहा। एतमेव में अनुवेखमासे धम्म-थंमानि कटानि धर्म महामाता कटा। धम्म सावने कटे।

(७ वां स्तम्भ लेख)

बौद्धधर्म अहिंसा की नीति पर आधारित है। अशोक ने सर्वप्रथम अहिंसा प्रचार को ही धर्म-प्रचार का साधन समझा। अतः आज्ञा प्रसारित की कि राज्य में कोई जीव मार कर यज्ञ न किया जाय (प्रथम शिलालेख)। उसके लेखों में प्राणियों के प्रति अहिंसा को प्रमुख स्थान दिया गया। चौथे शिलालेख में उसने स्पष्ट लिखा है कि उस काल से पूर्व लोगों में हिंसा की प्रवृत्ति थी। सम्यक् व्यवहार तथा बड़ों का समादर न था। अतएव उसने आज्ञा प्रसारित की कि अहिंसा के साथ-साथ गुरुजनों का समादर करना आवश्यक है। उसके द्वारा भेरीघोष धर्मघोष में परिणत हो गया है—राञो धमं चरणेन भेरी घोसो अहो धमं घोसो।

इस कार्य के शुभारम्भ के लिए अशोक ने धर्मयात्रा प्रारम्भ की। उससे पूर्व राजा विहार यात्रा (आखेट) किया करते थे किन्तु बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए सम्राट् ने तीर्थ-यात्रा आरम्भ की। आठवें शिलालेख में इसका वर्णन आता है कि धर्मयात्रा में अशोक भ्रमण

एवं ब्राह्मण साधुओं का दर्शन करेगा तथा उन्हें दान देगा। धर्म प्रचार के कार्यों में धर्म मंगल की कामना भी निहित थी। जनता में अनेक अवसरों पर अन्धविश्वास के कारण नाना मंगल का आचरण होता रहा किन्तु अशोक ने दास से सम्यक् व्यवहार तथा बड़े का समादर को धर्म मंगल से व्याख्या की [नवां शिलालेख]

"अस्ति च अपि उक्तं साधुदानं इति" (गिरनार पाठ)

धर्म मंगल में कल्याण तथा परलोक की शान्ति के भाव भी निहित थे। उसकी इच्छा थी कि सभी धर्मों में शुद्धता बढ़े।

इच्छति सब्र प्रसंड वसेयु। सवे च हि ते संयमे भव शुधि च इछंति (सातवां शि० ले०)

अशोक के सातवें स्तम्भ लेख के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि बौद्धधर्म के प्रचार के लिए धर्म महामात्र की नियुक्ति की गई थी। उसने कहा भी है कि राज्याभिषेक के तेरहवें वर्ष में धर्म महामात्र नियुक्त किया गया जिसका पहले अस्तित्व न था। पांचवें शिलालेख में धर्म की वृद्धि, यवन कम्बोज, गान्धार तथा पश्चिमी सीमा पर स्थित अन्य जातियों के हित सुख के लिए और धर्म रक्षा के लिए ही धर्ममहामात्र की नियुक्ति का विवरण मिलता है। इसका कार्य था विभिन्न मतों में मेल उत्पन्न करना, दान, पूजा की देख-रेख करना आदि। धर्म महामात्र एक निश्चित योजना के अनुसार धर्म प्रचार करते रहे।

धर्म प्रचार के लिए उसने विदेशों में दूत भेजा। धर्म विजय के प्रसंग में यूनानी राजाओं के नाम—अन्तियोक, तुरमय, अंतिकिन, मक, अलिक सुन्दर उल्लिखित हैं। उसने लिखा है कि जिन स्थानों में अशोक के धर्मदूत न पहुँच सकें, वहां के निवासी देवताओं के प्रिय (अशोक) का धर्मानुचरण धर्मविधान और धर्मानुशासन सुनकर धर्म के अनुसार आचरण करें (१३ वां शिलालेख) अतः यह स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि विभिन्न देशों में अशोक धर्म दूत भेजा था। अन्य देशों में स्थापित चिकित्सा केन्द्र भी धर्म प्रचार के केन्द्र हो गए। अशोक के अभिलेखों के विवरण से भी अधिक धर्म प्रचार की चर्चा महावंश में मिलती है। उस समय आचार्य तिष्य ने देश विदेश में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए महान् योजना तैयार की थी। संक्षेप में कहना उचित होगा कि अशोक के प्रयासों के फलस्वरूप बौद्ध धर्म का प्रचार भारत या विदेशों मे पूर्ण हो सका। लगभग सम्पूर्ण विश्व प्रभावित हुए बिना न रह सका।

अशोक की शासन-पद्धति किसी साम्राज्य के शासन सम्बन्धी विचार को चार अंगों में विभक्त करते हैं।

(१) देश
(२) आबादी (जनसंख्या)
(३) शासक (राजा)
(४) राजशासन (सरकार)

पिछले पृष्ठों में इस बात की चर्चा की गई है कि अशोक का साम्राज्य विशाल एवं विस्तृत था। अशोक ने विजित देश (सर्वत विजितम्हि-द्वितीय शिलालेख) से सबका परिज्ञान कराया है। दक्षिण के चार छोटे राज्यों (चोडा पाडा सतियपुतो केवलपुतो) को छोड़

कर सारा भारत अशोक के अधीन था। साम्राज्य की उपयोगिता जनसंख्या पर निर्भर है। निर्जन देश में कोई शासक रह नहीं सकता। जनता के ऊपर ही राजा की आवश्यकता होती है। अशोक के लेख में सव मानुस या जानपदस (चौथा स्तम्भ लेख) शब्दों का प्रयोग सार्थक है। तेरहवें शिलालेख का अध्ययन यह बतलाता है कि ढाई लाख मनुष्य कलिङ्ग युद्ध में बंदी बनाए गए तथा एक लाख मारे गए। इसके अतिरिक्त जो लोग शेष रहे उन्हें अशोक ने उपदेश दिया था। इससे यह अभिप्राय निकलता है कि कलिंग प्रदेश में पाँच लाख की आबादी होगी। इस प्रकार सारे प्रदेश की आबादी अत्यधिक मानी जा सकती है। उस जनसंख्या पर अशोक शासन कर रहा था।

शासन प्रक्रिया में राजा का स्थान भी प्रमुख है। अशोक उदार विचार सहित कार्य करता रहा। प्रजा की भलाई (पानी का प्रबन्ध, वृक्ष लगाना, औषधालय खोलना आदि) की चिन्ता में लीन रहता था। उसने खेती की सिंचाई के लिए नहरें निकाली थीं। (रुद्रदामन का जूनागढ़ शिलालेख) सदा प्रजाहित के कार्य में संलग्न था। जहाँ कहीं भी था, प्रजा के कार्यों की सूचना उसे दी जाती थी। उसका सात्विक विचार था कि प्रजा इस लोक में सुखी हो तत्पश्चात् स्वर्ग की कामना करे। उसका विचार था कि शासक के धर्माज्ञा पालन करने से जनता को संसार में वैभव तथा परलोक में मोक्ष प्राप्त होंगे (१६ वां शिलालेख—सा ऐहलोकिकी पारलौकिकी च) इन गुणों से युक्त अशोक धर्म सहिष्णु था। उसका कहना था कि अपने धर्म की प्रशंसा तथा पर धर्म की निन्दा न करनी चाहिए। जिस धर्म महामात्र की नियुक्ति की थी वह सभी संघ के धार्मिक कार्यों में सहायता करे (सातवां स्तम्भ लेख) ऐसे अनेक राजकीय एवं मानवीय गुणों के सहित अशोक प्रजा का पालन करता था।

अशोक के धर्मलेखों के अनुशीलन से तत्कालीन शासन पद्धति का पता लग जाता है। अर्थशास्त्र के आधार पर मौर्य शासन का अधिक परिज्ञान हो गया था और पितामह चन्द्रगुप्त मौर्य के कार्यों पर चलता रहा। उस शासन का अनुकरण स्वाभाविक था। राजतंत्र में (अ) केन्द्र (ब) प्रांत (स) नगर तथा (द) ग्राम शासन का सम्पादन अनिवार्य था ताकि आदर्श ढंग पर प्रजा शासित हो सके। अशोक ने उसी के मार्ग का अवलम्बन कर सुधार लाने का प्रयत्न किया।

बैराट के शिलालेख में अशोक को 'प्रियदसि लाजा मागधे' कहा गया है यानी अशोक मगध का राजा था। परन्तु समस्त साम्राज्य को चार विभागों में विभक्त किया गया था जिसके प्रमाण लेखों में मिलते हैं।

(१) उत्तरापथ	राजधानी	तक्षशिला
(२) अवन्ति पथ	,,	उज्जयिनी
(३) दक्षिणापथ	,,	सुवर्णगिरि
(४) कलिङ्ग	,,	तोसाली।

इन प्रांतों की राजधानी का उल्लेख धौली तथा गौड़ शिलालेखों से प्राप्त है।

सम्राट् के रूप में अशोक की अत्यधिक शक्ति थी। देश की आन्तरिक तथा बाह्य नीति

का निर्धारण अशोक ही करता था। भारतीय प्राचीन परम्परा के अनुसार केन्द्रीय शासन में मंत्रिपरिषद् का प्रमुख हाथ रहता था। शिलालेख ६ में अशोक के परिषद्के लिए 'परिसा' शब्द का प्रयोग मिलता है। यह कहना कठिन है कि परिषद् परामर्शदात्री संस्था थी अथवा पूर्णतया प्रजातंत्रीय। परन्तु इतना स्पष्ट है कि वर्तमान काल की तरह प्रजा द्वारा मंत्रि परिषद् का निर्माता नहीं होता था। परिषद् के सदस्यों का चुनाव अशोक पर निर्भर रहा। परिषद् के मंत्रियों में मतभेद की बातें शीघ्र सर्वत्र अशोक को सूचित की जाती थीं (छठा शिलालेख)। इससे प्रकट होता है कि मंत्रिपरिषद् शासक की आज्ञा पर विचार-विमर्श किया करती और स्वीकृत होने पर राजाज्ञा प्रसारित की जाती।

मंत्रि परिषद्

ताय अथाय बिवादो निझति व सतो परिसाय आनंतरं पटिवेदेत मे सर्वत्र सर्वकाले एवं मया आञपितं कतव्यमते हि मे सर्व लोकहितं (छठां शिलालेख) यद्यपि अशोक के लेखों में परिसा के कार्यों का उल्लेख नहीं है किन्तु अर्थशास्त्र में मंत्रिपरिषद् के कार्यों का विवरण मिलता है। उसके अनुसार सभी कार्यों का सम्पादन परिषद् करती थी।

प्रांतीय शासन में राजकुमारों को ही प्रमुख स्थान दिया गया था। सुवर्ण गिरि के कुमार (ब्रह्मगिरि गौड़ लेख) तथा उज्जयिनी के कुमार (राजकुमार) का वर्णन मिलता है। यानी प्रांतीय शासकों के रूप में कुमारों की नियुक्ति होती थी। प्रांत के राज्यपाल को राजुक शब्द से भी वर्णित किया गया है। अशोक के तीसरे शिलालेख में राजुके के साथ युत्त एवं प्रादेशिक के नाम आये हैं। राजुके शब्द को लेकर विद्वानों में मतभेद है। रज्जुक से नापने वाला, पैमाइश करने वाला, लिपिकार न्यायाधीश आदि कार्यों से उस पदाधिकारी का सम्बन्ध जोड़ते है। परन्तु अशोक के लेखों में उल्लिखित राजुके प्रांतीय राज्यपाल निमित्त प्रयुक्त था, इसमें संदेह नहीं किया जा सकता। चौथे स्तम्भ लेख में वर्णन आया है कि रज्जुक नामक कर्मचारी लाखों मनुष्यों के ऊपर नियुक्त है। उसे कार्य के अनुरूप पुरस्कार या दण्ड देने का भी अधिकार था। अशोक की इच्छा थी कि रज्जुक जनता के हित सुख पर ध्यान दे, दुखों का कारण ढूंढ़ निकाले तथा जनता की बातों को ध्यान पूर्वक सुने। ऐसे अधिकार वाले कर्मचारी को प्रांतपति से घट कर नहीं माना जा सकता। युत को राजभक्त के अर्थ में मानते थे। मम युता लजुके प्रादेसिके-कालसी शिलालेख ३) परन्तु गिरनार पाठ में युत के बाद च अक्षर अंकित है। तत्पश्चात् राजुक शब्द प्रयुक्त है, अतएव युत को एक कर्मचारी ही मानना उचित होगा। कौटिल्य ने भी युत का उल्लेख कर्मचारी के रूप में किया है।

प्रादेशिक शब्द का वास्तविक अर्थ अज्ञात है। विभिन्न विद्वान् पृथक्-पृथक् विचार करते हैं। युत तथा राजुके शब्दों के साथ प्रयोग के कारण इसे कर्मचारी मानना अधिक युक्ति-संगत होगा। भण्डारकर तथा कर्म प्रादेशिक को प्रांतीय शासक मानते हैं। कौटिल्य ने प्रदेष्टा नामक कर्मचारी का उल्लेख किया है। सम्भवतः दोनों शब्द एक ही कर्मचारी के लिए प्रयुक्त हैं। प्रदेष्टा राजकर्मचारियों के कार्यों से राजा को अवगत कराता था। डा० मुकर्जी प्रादेशिकों को प्रांत के एक भाग का अधिकारी मानते हैं।

कलिङ्ग के प्रथम शिलालेख में "देवानं पियस वचनेन तोसलियं महामात नगल वियो-

नगर व्यवहारिक

हाल का वतविय" वाक्य का उल्लेख है। जिसका तात्पर्य यह था कि आज्ञा प्रेषित करते समय अशोक ने नगर व्यवहारिक को सम्बोधित किया था। इसमें नगल (नागरिक) तथा वियोहालका (व्यावहारिक) शब्दों को पृथक् कर दो पदाधिकारी का अर्थ प्रस्तुत करना युक्तिसंगत नहीं है। अर्थशास्त्र में पुरव्यवहारिक शब्द का प्रयोग मिलता है। अतः पुरव्यवहारिक से नगल वियोहालक की समता की जा सकती है। इस कर्मचारी की नियुक्ति नगर शासन के लिए होती थी। इनके द्वारा अशोक अपने धार्मिक अथवा राजकीय विचारों को जनता तक पहुँचाता था ताकि उसके उद्देश्यकी पूर्ति हो जाय।

शिलालेख ५, १२ तथा स्तम्भ लेख ७ में धर्ममहामात्र की नियुक्ति एवं कार्यों का विवरण मिलता है। जनता में धर्म प्रचार करना उसका कार्य था। अशोक ने स्पष्ट लिखा है कि

धर्ममहामात्र

उससे पूर्व धर्ममहामात्र नामक पदाधिकारी न थे। उसी ने इस कर्मचारी की नियुक्ति की है। (५ वां शिलालेख)। धर्म की रक्षा, सीमा पर जातियों के हित सुख की रक्षा तथा अनाथों और वृद्धों में उनके हित का चिन्तन करना महामात्र के प्रमुख कार्य थे। धर्म तथा दान सम्बन्धी सारा कार्य धर्ममहामात्र देखता था। इसके अतिरिक्त अशोक कहता है कि धर्ममहामात्र का सम्बन्ध संन्यासी तथा गृहस्थ दोनों से है। यह अन्तःपुर में भी धार्मिक कृत्य को देखेगा।

स्त्रीध्यक्ष महामात्र की नियुक्ति मौर्य कालीन सामाजिक परिस्थितियों के कारण हुई। धर्म महामात्र के पश्चात् स्त्रियों के व्यवहार में सुधार लाने की आवश्यकता को अशोक ने समझा। शिलालेख ९ में वह कहता है कि विवाह या पुत्र जन्म के अवसर पर स्त्रियाँ निरर्थक मंगलाचार करती हैं। संघों में भिक्षुणियों का नैतिक स्तर ऊँचा करना था। अतएव अशोक ने स्त्रियों के लिए पृथक् विभाग खोल कर स्त्रीध्यक्ष महामात्र, की नियुक्ति कर दी। उनका कार्य धर्म महामात्र के सदृश था।

अन्त महामात्र—प्रथम स्तम्भ लेख में इस कर्मचारी का उल्लेख है। यह सीमा के प्रदेशों का शासक था। पुरुष शब्द का प्रयोग स्तम्भ लेखों में आता है। वह शासक का सहायक था जिसे निजी सचिव कह सकते हैं। लेखों में प्रतिवेदिक शब्द को गुप्तचर के लिए प्रयुक्त कर सकते हैं जो राजा को प्रजा की कठिनाइयों की सूचना देता था।

अशोक के लेखों के आधार पर दण्ड व्यवस्था की कल्पना कठिन सा कार्य है। वह प्रजा को पुत्रवत् मानता था अतएव कठोर दण्डों को अमानुषिक समझता था। स्तम्भलेख ४ में प्रांतपति राजुक को धाई के समान उल्लिखित किया है जो बच्चों (प्रजा) की देख-भाल करे। उसी लेख में—"वियोहालसमता व सिय दंड-समता च" वाक्य का भी प्रयोग है। इस दण्डसमता से पता लगता है कि अशोक ने दण्ड विधान को मानवीय स्तर प्रदान कर दिया था जिससे राष्ट्रीय निर्माण में कोई बाधा न होवे। दयालुता के कारण वह मृत्युदण्ड पाने वाले व्यक्तियों को तीन दिन का समय प्रदान करता था। उसका उद्देश्य यह था कि स्यात् परिवार के लोग उस अपराधी को बचाने का मार्ग ढूँढ़ निकालें (स्तम्भलेख ४) प्रजा के कष्ट को देखने

कर्मचारियों का दौरा

के लिए पदाधिकारियों को प्रत्येक पाँच वर्ष पर दौरा करने की आज्ञा अशोक ने प्रदान की थी (कलिंग का प्रथम शिलालेख) उनके विचार से नरम, क्रोध रहित तथा दयालु कर्मचारियों को दौरा पर आना चाहिए जो अशोक के आज्ञानुसार कार्य करते रहें। उज्जयिनी तथा तक्षशिला के कर्मचारी के लिए तीसरे वर्ष पर दौरा करना अनिवार्य था। इस प्रकार अशोक ने पूर्व प्रचलित शासन पद्धति को इस रूप में मोड़ दिया कि राजाज्ञा का पालन हो सके, जनता की कठिनाइयों का ज्ञान हो जाय और इस लोक में सुख तथा परलोक में स्वर्ग की प्राप्ति हो सके। अशोक मानव जीवन के अंतिम लक्ष्य (मोक्ष) की पूर्ति की कामना करता था। वास्तविक रूप में आदर्श शासन का यही फल होता है। संसार में सुख परलोक में शांति।

●

अशोक के धर्म लेख

(१) प्रधान शिला लेख

भाषा—प्राकृत
लिपि—ब्राह्मी

सन्दर्भ—का० इ० इ० (अशोक के लेख) भाग प्रथम
प्राप्तिस्थान—गिरनार (काठियावाड़) काल—ई० पू० चौथी शताब्दी

१ इय (ं) धंम-लिपि देवानं पि [प्रि] येन
२ पि [प्रि] यदसिना राजा लेख (ा) पि (ता) (।★) (इ) ध न कि-
३ चि जीवं आरभित्पा [त्पा] प [प्र] जूहितव्यं [व्यं] (।★)
४ न च समाजो कतव्यो [व्यो] (।★) बहुकं हि दोसं
५ समाजम्हि पसति देवानं पि [प्रि] यो पि [प्रि] यदसि राजा (।★)
६ अस्ति पि तु एकचा समाजा साधु-मता देवानं
७ पि [प्रि] यस पि [प्रि] यदसिनो राञो (।★) पुरा महानसम्हि
८ देवानं पि [प्रि] यस पि [प्रि] यदसिनो राञो अनुदिवसं ब-
९ हूनि पा [प्रा] ण-सत-सहस्रा [स्रा] नि आरभिसु सूपाथाय (।★)
१० से अज यदा अयं धंम-लिपि लिखिता ती एव पा [प्रा]-
११ णा आरभरे सूपाथाय द्वो मोरा एको मगो (।★) सो पि
१२ मगो न ध्रुवो (।★) एते पि त्री [त्री] पा [प्रा] णा पछा न आरभिसरे (।।★)

[२]

भाषा—प्राकृत वही
लिपि—ब्राह्मी

१ सर्वत विजितम्हि देवानंपि [प्रि] यस पियदसिनो राञो
२ एवमपि प [प्र] चंतेसु यथा चोडा पाडा सतियपुतो केतलपुतो आ तंब-
३ पंणी अंतियं (ो★) को योन-राजा ये वा पि तस अंतियं (ो★) कस सामीपं (ा)
४ राजानो सर्वत [त्र] देवानंपि [प्रि] यस पि [प्रि] यदसिनो राञो द्वे चिकीछ (।★) कता
५ मनुस-चिकीछा च पसु-चिकीछा च (।★) ओसुढानि च यानि मनुसोपगानि च
६ पसो (प) गानि च यत यत नास्ति सर्वत्र [त्र] हारापितानि च रोपापितानि च (।★)
७ मूलानि च फलानि च यत यत नास्ति सर्वत हारापितानि च रोपापितानि च (।★)
८ पंथेसू कूपा च खानापिता व्रं [व्र] छा च रोपापित (ा) परिभोगाय पसुमनुसानं (।।★)

[३]

भाषा—प्राकृत वही
लिपि—ब्राह्मी

१ देवानंपि [प्रि] यो पियदसि र (।★) जा एवं आह (।★) द्वादस-वासाभिसितेन मया इदं आञपितं (।★)

२ सर्वत विजिते मम युता च राजूके च पां [प्रा] देसिके च पंचसु पंचसु वासेसु अनुसं-
३ य (ा) न (ं) f (न) यातु एतायेव अथाय इमाय धंमानुसस्टि [स्टि] य यथा अना
४ य पि कंमाय (।★) (स) ाधु मातरि च पितरि च सुसूं [सू] सा मितासंस्तुत जातीनं बाम्हण-
५ समणानं सा (धु) (द) ानं पां [प्रा] णानं साधु अनारंभो अप-व्य [व्य] यता अप-भांडता साधु (।★)
६ परिसा पि युते आजपयिसति गणनायं हेतुतो च व्यं [व्यं] जनतो च (॥★)

[४]

भाषा—प्राकृत वही

लिपि—ब्राह्मी

१ अतिकातं अंतरं बहूनि वास-सतानि वढितो एव पां [प्रा] णारंभो विहिंसा च भूतानं ञातीसु
२ अ (सं) पं [प्र] तिपती ब्रा (म्ह) ण-सं [स्र] मणानं असंपं [प्र] तीपती-(।★) त अज देवानंपि [प्रि] यस पि [प्र] यदसिनो राञो
३ धंम-चरणेन (भे) री-घोसो अहो धंम-घोसो । (★) विमान-दसंणाच हस्ति द (स) णा च
४ अगि-खंधा (नि) च (अ) ञानि च दिव्या [व्या] ान रूपानि दसयित्पा [त्पा] जनं यारिसे बहूहि वा (स)-सतेहि
५ न भूत-पु (वे) तारिसे अज वढिते देवानंपि [प्रि] यस पि [प्रि] यदसिनो राञो धंमानुसट्सि [स्टि] या अनारं-
६ (भो) पां [प्रा] णानं अविहोसा भू (ता) नं ञातीनं संपटिपती ब्रह्मणसमणानं संप-टिपती मातरि पितरि
७ (सु) सुं [स्रु] सा थैर-सुसुसा (।★) एस अञे च बहुविधे (ध) ंमचरणे व (ढि) ते (।★) वढयिसति चेव देवानंपि [प्रि] यो
८ (प्रि॰) यदसि राजा धंम-(च★) रणं इदं (।★) पुतां [त्रा] च (पो) तां-[त्रा] च पं [प्र] पो-तां [त्रा] च देवानंपि [प्रि] यस पि [प्रि] यदसिनो राञो
९ (प्र★) वधयिसंति इदं (धं) म-चरणं आव सवट-कपा धंमम्हि सीलम्हि तिट्सं [स्टं] तो (ध) मं अनुसासिसंति (। ★)
१० (ए) स हि सेट्से [स्टे] कम य धंमानुसासनं (। ★) धंमचरणे पि न भवति असी-लस (।★) (त) इमम्हि अथम्हि
११ (व★) धी च अहीनी च साधु (।★) ए (ता) य अथाय-इद (ं) लेखापितं इमस अथ (स) वधि युजंतु ह (ी) नि च
१२ (नो) लोचेतव्या [व्या] (।★) द्वादसवासाभिसितेन देवानंपि [प्रि] येन पि [प्रि] यदसिना राज (ा) इदं लेखापितं (॥★)

[५ मानसेरा पाठ]

भाषा–प्राकृत
प्राप्तिस्थान–पेशावर (प० पा०)
लिपि–खरोष्ठी
काल-ई० पू० चौथी शता०

१ दे (वनं) प्रियेन प्रियद्रशिदरज एव (˙) अहं (।*) कलण (˙) दुकर (˙) (।*) ये अदिकरे कयणस से दुकरं करोति (।*) तं मय बहु (क) यणे (क) टे (।*) (त) ˙ म (अ) पुत्र (च)

२ नत (रे) च पर च (ते) न ये अपतिये मे (अ) व-कपं तथ अनुवटिशति से सुकट क (ष) ति (।*) ये (चु) अत्र देश पि हपेशति से दुकुट कषति (।*)

३ पपे हि नम सुपदरवे (।*) (से) अतिक्रत (˙) अ (˙) तर (˙) न भूतप्रुव ध्रम (म) ह-मत्र नम (।*) से त्रेडश-व (ष) भिसितेन मय ध्रम-महमत्र कट (।*) ते सव्र-प (ष) डेष

४ वपुट ध्रमधिथ (न) ये च ध्रम-वध्रिय हिद-सुखये च (ध्र) मयुतस योनकंबोज-गधरन र (ठि) क-'पितिनिकन ये व पि अत्रो अपरत (।*) भ (ट) मये

५ षु ब्रमणिभ्येषु अनथेषु वुध्रेषु हिद-सु (खये) ध्रमयुत-अपलिबोधये विय-(पु) ट ते (।*) बधन-बध (स) पटिवि (धनये) अपलिबोधये मोक्ष (ये) (च) (इयं)

६ अनुबध (प्र) ज (व*) (ति) व कट्रभिकर ति व महल के ति व वियप्रट ते (।*) हिद बहिरेषु च नगरे (षु) सव्रेषु (ओ) रोधनेषु भतन च स्प (सु) न (च)

७ ये व पि अत्रो ञतिके सव्रत्र वियपट (।*) (ए) इयं ध्रम-निशितो तो व ध्रमधिथने ति व दन-संयुते ति व सव्रत्र विजतसि मअ ध्रमयुतसि वपुट (वे)

८ ध्रम-महमत्र (।*) एतये अथये अयि ध्रम-दिपि लिखित चिर-ठितिक होतु तथ च मे प्रज अनुवटतु (।।*)

[६]

भाषा–प्राकृत
लिपि–ब्राह्मी

१ (देवा) (नंपियो*) (पियद*) सि राजा एव आह (।*) अतिक्रातं अंतरं

२ न भूतपुं (प्र) (व) (स) (वे*) (काले*) अथ-कंमे व पटिवेदना वा (।*) त मया एवं कतं (।*)

३ (स) वे काले भुं (ज) मानस मे ओरोधनम्हि गभागारम्हि वचम्हि व

४ विनीतम्हि च उयानेसु च सवतं [त्र] पाटिवेदका ट्सि [स्टि] ता अथे मे (ज) नस

५ पटिवेदेय इति (।*) सर्वत्र च जनस अथे करोमि (*।) य च किंचि मुख (तो)

६ आनपयामि स्वयं दापकं वा र्स [स्रा] वापकं वा य वा पुन महामा (तें-[त्रे] सु

७ आचायि (के) अरोपितं भवति ताय अथाय विवादो निझती व (स) ˙ तो परिसायं

८ आनंतरं प (टि) वेदेत (व्यं [व्यं]) मे स (र्व) तं [त्र] सर्वे काले (।*) एवं मया आञपितं (।*) नास्ति हि मे तो (सो)

९ उट्हा [स्टा] नम्हि अथ-संतीरणाय च (।*) कतव्य [व्य]-मतेहि मे स (र्व)-लोक हितं (।*)

१० तस च पुन एस मूले उट्सा [स्टा] नं च अथ-संतीरणा च (।★) नास्ति हि कंमतरं
११ सर्व-लोक-हितप्ता [त्पा] (।★) य च किंचि पराक्रमामि अहं किति भतानं आनंणं गछेयं (।★)
१२ इध च नानि सुखापयामि परत्रा च स्वगं आराधयंतु (।★) त एताय अथाय
१३ अयं ध (ं) म- लिपी लेखापिता किंति चिरं तिट्ठे [स्टे] य इति तथा च मे पुत्रा पोता च पं [प्र] पोतां [त्रा] ध
१४ अनुवतरां सव-लोक-हिताय (।★) दुकरं (तु) इदं अञत [त्र] अगेन पराक्रमेन (।।★)

'[७ शाहबाजगढ़ी पाठ से]

भाषा–प्राकृत प्राप्तिस्थान–रावलपिंडि (प० पाकिस्तान)
लिपि–खरोष्ठी काल–ई० पू० चौथी शताब्दी

१ देवनंप्रियो प्रिय (द्र★) शि रज सवत्र इछति सव्र-
२ (प्र) षंड वसेयु (।★) सवे हि ते सयमे भव-शुधि च इछंति (।★)
३ जनो चु उचवुच-छंदों उचवुच रगो (।★) ते सव्रं व एकदेशं व
४ पि कषंति (।★) विपुले पि चु दने यस नस्ति सयम भव-
५ शुधि किट्रञत द्रिढ-भतित निचे पदं (।।★)

[८]

भाषा–प्राकृत लिपि–खरोष्ठी

१ अतिकातं अंतरं राजानो विहार-यातां जयासु (।★) एत मगव्या [व्या] अञानि च एतारिस (।★) नि
२ अभीरमकानि अहूं सु (।★) सो देवानंपियो पियदसि राजा दसवषभिसितो संतो अयाय संबोधि (।★)
३ तेनेसा धंम-याता (।★) एतयं होति बाह्मण-समणानं दसणे दाने च थैरानं दसणे (च)
४ हिरंण-पटिविधानो च जानपदस च जनस दस्पनं धंमानु (स) ठ्सो [स्टी] च धम-परिपुछा च
५ तदोपया (।★) एसा भुय-रति भवति देवानंपियसि पि [प्रि] यदसिनो राओ भागे अंञे (।।★)

[९ मानसेरा पाठ से]

भाषा–प्राकृत प्राप्ति-स्थान–पेशावर
लिपि–खरोष्ठी तिथि–ई० स० चौथी शताब्दी

१ (देवनप्रिये) प्रियद्रशि रज एवं अह (।★) जने उचवुच (ं) (म) गल (ं) करोति (।★)
२ अबधसि अ (ब) हसि वि (व) हसि प्रजोपदये प्रवसस्पि एतये अञये (च) (एदि) श (ये) (जने)
३ बहु मंग (लं) (क) रो (ति) (।★) अत्र तु अबक जनिक बहु च बहुविध च खुद च निरथिय च मगलं करोति (।★) से क (टवियो) (चे) व खो

४ मगले (।★) अप-फले चु (खो) (ए) षे (।★) इयं चु खा महू-फले ये ध्रम-मगले (।★) अत्र इयं दस-भटकसि सम्य-पटिपति गुरून अ (पचिति)

५ प्र (ण) न (स) यमे श्रमण-ब्रमणन (दने) एषे अणे च एदिशे ध्रम-मगले नम (।★) से वतविष पि (तु) न पुत्रेन पि भ्रतुन पि स्पमिकेन पि

६ मित्र-स (ं) स्तुतेन (अ) व पटिवेशियेन पि इयं सधु इयं कटविये मगले अव तस अथस निवुटिय निवुटसि व पुन इम (क) षमि ति (।★) ए हि (इ)-तरे मग (ले)

७ श (श) यिके से (। ★) (सि) य व तं अथं निवटेय (सि) य पन नो (।★) हिद (लो)-किके चेव से (।★) इयं पुन ध्रम-मगले अकलिके (।★) (ह) चे पि तं अथं नो निवटेति (हि) द, अ (थ) परत्र

८ अनत पुण प्रसवति (।★) हचे पुन त (ं) अथं निव (टे) ति हिद ततो उभयेसं (अर) धे होति (।★) हिद च से अथे परत्र च अनत पुणं प्रसवति तेन ध्रम-(म★) गलेन (।।★)

[१०]

वही) (वही

१ देवानंपि [प्रि] यो पि [प्रि] यदसि राजा यसो व कीति व न मयाथावह (ा) मञते अञत तदात्प [त्प] नो दिघाय च मे (ज) नो

२ धंम-सुर्सु [स्रु] सा सुर्सु [स्रु] सता धंम- वुतं च अनुविधियतां (★) एतकाय देवानं-पियो पियदसि राजा यसो व किति व इ (छ) ति (।★)

३ यं तु किचि परिकामते देवानं (प्रियो★) पि [प्रि] यदसि राजा त सवं पारति [त्रि] काय किंति सकले अपपरिर्स [स] वे अस (।★) एस तु परिसवे य अपुंञं (।★)

४ दुकरं तु खो एतं छुदकेन व जनेन उसटेन ब अञत [त्र] अगेन पराकं [क्र] मेन सवं परिचजित्पा [त्पा] (।★) एत (तु) (खो) उसटेन दुकरं (।।★)

[११ कालसी पाठ]

भाषा—प्राकृत प्राप्ति-स्थान—देहरादून, उ०प्र०
लिपि—ब्राह्मी काल ई. पू. चौथी शताब्दी

१ देवानं (पि) ये पियदषि (ल) ाजा हेवं (आ★) हा (।★) नथि (हे) डिष दान अदिष ध (ं) म-दाने । धम-ष (ंं) बमगे । धंम-षंब (घे) । त (त) एषे दाष-भट कवि । षम्या-पटिपति माता-पितिषु । षुषुषा । मित-षंथुतनातिक्यानं समना (ब) ंभनाना (दा) ने

२ पानानं अनाल (ं) भे (।★) एषे वत (ंं) वये पिि (त) ना पि पुते (न) पि भाि (त)-ना पि षवा (ंं) मक्येन पि मित-शंथुताना अवापटिवेषियेन (ा) इय (ं) षाधु इयं कटविये (।★) (श) तथा कल (ंत) हिदलोकिक्य च कं आलधे होति पलत च (ा) अनत पुना पशवति तेना धंम-दानेना (।।★)

[१२ शाहबाजगढ़ी पाठ]

भाषा–प्राकृत | प्राप्तिस्थान–रावलपिंडी
लिपि–खरोष्ठी | काल–ई. पू. चौथी शताब्दी

१ देवनंप्रियो प्रियद्रशि रय सत्र-प्रषंडनि प्रव्रजित (नि) ग्रहथनि च पुजेति दनेन विविधये च पुजये (*) नो चु तथ (द) न व पुज व
२ देवनंप्रियो मञति यथ किति स (ल)-वढि सिय सत्र-प्रषंडनं (*) सल-वढि तु बहुविध (*) तस सु इयो मुल यं वचोगुति (।*)
३ किति अत-प्रषंड-पुज व प (र)-पषंड-गर [ह*] न व नो सिय (अ)-पकरणसि लहुक व सिय तसि तसि प्रकर (णे) (।*) पुजेतविय व चु पर-प्रषं–
४ (ड) तेन तेन अकरेन (।*) ए (व) करतं अत- (प्र) षंडं वढेति पर-प्रषंडंस पि च उपकरोति (।*) तद अञथक (र) मि (नो) अत-प्र-(षंड)
५ क्षणति (पर)-प्रषडस च अपकरोति (*) यो हि कचि अत-प्रषडं पुजेति (पर)-(प्र)-षड (ं) गरहति सव्रे अत-प्रषड-भतिय व किति
६ अत प्रषंडं दिपयमि ति सो च पुन तथ करंतं -सो च पुन तथ करतं) ब (ढत)रं उपहंति अत-प्रषडं (।*) सो सयमो वो सधु (।*) किति अञमञस ध्रमो
७ श्रुणेयु च सुश्रुषेयु च ति (।*) एवं हि देवनंप्रियस इछ किति सत्र-प्रषंड बहुश्रुत च क (लण) गम च सियसु (।*) ये च तत्र तत्र
८ प्रसन तेष (ं) वतवो देवनंप्रि (यो) न (तथ) (द) न (ं) (ब) (पुज) व मञति य (थ) किति सल-वढि सियति सव्रप्रषडनं (।*) बहुक च एतये अठ (ये*)
९ व (प) ट (ध्र) म-म (ह) इ (स्त्रिध) यक्ष-म (ह) मत्र (व्र) च-भूमिक अञे च निकये (।*) इमं च एतिस (फ) लं यं अत-पषड-वढि (भोति)
१० ध्रमस च दि (प न) (।।*)

[१३ शाहबाजगढ़ी पाठ]

वही) | (वही

१ (अठ-वष-अ (भिसि) त (स) (देवन) प्रि (अ) स प्रि (अ) द्रशिस र (ञो) क (लिग) वि (ज) त (।*) दिअढ-म (त्रे) प्रण-शत (सह) स्रे (ये) ततो अपवुढे शत-सहस्र-मत्रे तत्र हते बहु-तवत (के) (व) (मुटे) (।*)
२ ततो (प) च अ (धु) न ल (धे) षु (कलिगेषु) (तिव्रे) (ध्रम-शिलन) ध्र-(म-क) मत ध्रमनु-शस्ति च देवनपियस (।*) सो (अ) स्ति अनुसोचन देवन (प्रिअ) स विजिनिति कलिग (नि) (।*)
३ अविजितं (हि) (वि) जिनमनो-या त (त्र) वध व मरणं व अपवहो व जनस तं बढं (वे) दनि (य) -म (तं) गुरु-मत (ं) च देवनंप्रियस (।*) इदं पि चु (ततो) गुरुमततरं (देवनं) प्रियस ये तत्र
४ वसति ब्रमण व श्रम (ण) व अ (ं) ञे व प्रषंड ग्र (ह) थ व येसु विहित एष अग्र-भुटि-सुश्रुष मत-पितुषु सुश्रुष गुरुन सुश्रुष मित्र-संस्तुत-सहय-
५ ञतिकेषु दस-भटकनं सम्म-प्रतिप (ति) द्रिढ-भतित तेष यत्र भोति (अ) प-(ग्र) थो

व वधो व अभिरतन व निक्रमणं (।★) येष व पि सुविहितनं (सि) (ने★) हो अवि-
प्रहिनो (ए) (ते) ष मित्र-संस्तुत सहय-ञतिक वसन

६ प्रपुणति (त) त्र तं पि तेष वो अपग्रथो भोति (।★) प्रतिभगं च (ए) तं सव्रमनुशनं गुरुमतं च देवनंप्रिय (स) (।★) नस्ति- च एकतरे पि प्रषडस्पि न नम प्रसदो (।★) सो यमत्रो (ज) नो तद कलिगे (हु) तो च मु (टो) च अप (वुढ) च ततो

७ शतभगे व सहस्र-भगं व (अ) ज गुरु-मतं (वो) देवनंप्रियस (।★) यो पि च अप-करेययति क्षमितविय-मते व देवनं (प्रि) यस यं शको क्षमनये (।★) य पि च अटवि देवनंप्रियस विजिते भोति त पि अनुनेति अपुनिजपेति (।★) अनुतपे पि च प्रभवे

८ देवनंप्रियस वुचति तेष किति अवत्रपेयु न च (हु) ञेयसु (।★) इछति हि (देव) नंप्रियो सव्र-भुतन अक्षति स (ं) यमं रम (च) रियं रभसिय (।★) अयि च मुख-मुत विजये देवनंप्रिय (स) यो ध्रमविजयो (।★) सो च पुन लधो देवनंप्रियस इह च सवेषु च अंतेषु

९ (अ) षषु पि योजन-श (ते) षु यत्र अंतियोको नम (यो) न-रज परं च तेन (अ (ं★)-तियो (के) न चतुरे ४ रजनि तुरमये मम अंतिकिनि नम मक नम अलिक-सुन्दरो नम निच चोड-पंड अव त (ं) बपं (णि) य (।★) (ए) वमेव (हि) द रज-विषवस्पि योन-क (ं) बोयेषु नभकनभितिन-

१० भोज-पितिनिकेषु अंध्र-पलिदेषु सवत्र देवनंप्रियस ध्रमनुशस्ति अनुवटंति (।★) यत्र पि देवनंप्रियस दुत न व्रचंति ते पि श्रुतु देवनंप्रियस ध्रम-वुटं विधनं ध्रमनुशस्ति ध्रमं (अ) नुविधियंति अनुविधियिशं (ति) च (।★) यो (स) लधे एतकेन भो (ति) सवत्र विजयो सव (त्र) पु (न)

११ विजयो प्रिति-रसो सो (।★) लध (भोति) प्रिति ध्रम-विजयस्पि (।★) लहुक तु खो स प्रिति (।★) परत्रि (क) मेव मह-फल मेञति देवन (ं) प्रियो (।★) एतये च अठये अयि ध्रम-दिपि निपि (स्त) (।★) किति पुत्र पपोत्र मे असु नवं विजयं म विजेत (f) वत्र मञिषु स्प (कस्पि) यो विज (ये) (क्षं) ति च लहु-द (ं) डत च रोचेतु तं च यो विज (यं★) मञ (तु)

१२ यो ध्रम-विजयो (।★) सो हिदलोकिको परलोकिको (।★) सव चति-रति-भोतु य (ध्र) म-रति- (।★) स हि हिदलोकिक परलोकिक (।।★)

[१४]

वही **वही**

१ अयं धंम-लिपी देवानंपि [प्रि] येन पि [प्रि] यदसिना र (ा) ञा (ले) खापिता (।★) अस्ति एव

२ संखि (ते) न अस्ति मझमेन अस्ति विस्ततन (।★) न च सवं (स) वंत घटितं (।★)

३ महालके हि विजितं बहु च लिखितं लिखापयिसं चेव (।★) अस्ति च एत कं

४ पुन पुन वुतं तस तस अथस माधूरताय (।★) किंति जनो तथा पटिपजेय (।★)

५ तत्र एकदाअसम ा (त) लिखित (ं) अस देसं व सछाय-(का) रणं व

६ (अ) लोचेप्ता (त्पा) लिपिकरापरधेन वं (।।★)

(२) कलिङ्ग लेख

धौली लेख

भाषा—प्राकृत | प्राप्ति स्थान—भुवनेश्वर उड़ीसा

लिपि—ब्राह्मी | काल—ई० पू० चौथी शता०

१ (देवान) (पि) य (स) (वच) नेन तोसलियं म (हा) मात (नग) लं (व) (यो) हालक (ा)

२ (व) तविय (।*) (अं) किछि (दखा) मि हकं तं इछामि (किंति) कं (मन) (प) टि (पादये) हं

३ दुवालते च आलभेहं (।*) एस च मे मोख्य-मत दुवा (ल) (एतसि) (अठ) सि अं तु (फेसु)

४ अनुसथि (।*) तुफे हि बहूसु पानसहसेसुं आ (यत) पन (यं) (ग) छेम सु मुनिसानं (।*) सवे

५ मुनिसे पजा ममा (।*) अथ (ा) पजाये इछामि हक (ं) (किंति) (स) वे (न)-(हि) त-सुखेन हिदलो (किक)-

६ पाललोकिके (न) (यूजेवू) (ति) तथा (सव*)-(मुनि) सेसु पि (इ) छामि (ह) क (ं) नो च पापुनाथ आव-ग-

७ (मुके) (इयं अठे) (।*) (केछ) (व) एक-पुलि (से) (पापु*) नाति ए (तं) से पि देसं नो सवं (।*) दे (खत) (हि) (तुफे) एतं

८ सुवि (हि) ता पि (।*) (नि) तियं एक-पुलिसे (पि) (अथि) (ये) बंधनं वा पलिकिलेसं वा पापुनाति (।*) तत होति

९ अकस्मा तेन बधन (ं) तिक अंने च (तत*) (ब*) हुजने द (वि) ये दुखीयति (।*) तत चिर इछितविये

१० तुफेहि किंति मझं पटिपादयेमा ति (।*) इमे (हि) चु (जातेहि) नो संपटिपजति इसाय आसुलोपेन

११ नि (ठू) लियेन तूलना (य) अनावूतिय आलसियेन (ि) कलमथेन (।*) से इछितविये किंति एते

१२ (जाता) (नो) हुवेवु म (म) ा ति (।*) एतस च सव (स) मूले अनासुलोपे अ (तू) लना च (।*) निति (य) ए किलंते सिया

१३ (न) ते उग (छ) संचलितवि (ये) तु वं (ट) तं (व) (ये) एतविये वा (।*) हेवं मेव ए द (खेय) (तु) फाक तेन वतविये

१४ आनं ने देखत हेवं च हेवं च (वे) वानंप्रियस अनुसथि (।*) से मह (ा-फ) (ले) (ए) तस (संप) टिपाद

१५ महा-अपाये असंपटिपति (।*) (वि) प (ि) टपादयमीने हि एतं नथि स्वगस (आल) धि नो लाज (ा) लं (ध) (।*)

१६ दु-आ (ह) ले हि इ (म) स कंम (स) (मे) कुते म (ने) अतिलेके (।*) स(ं) पटिपज (मी)-(ने) चु (एतं) स्वर्ग (ं)

१७ आलाध (यि) स (थि) (मम) (च) (आ) ननियं एहथ (।*) इयं च (लिपि) (ति) स-न (ख) तेन सो (त) विय (ा) (।*)

१८ अंत (ल) ा (प) च (त) (सेन) (ख) नसि ख (नसि) एकेन पि सोतविय (।*) हेवं च कलंतं तुफे

१९ चघथ संप (टि) पाद ( ) यतवे (।*) (एता) ये अठाये इयं (ं) (लिपि) लिखित (हि) द एन

२० नगल-वि (योहा) लका स (स्व) तं समयं यूजेवू ( ) त (एन*) (ज*) (न) स अकस्मा (प) लिबोधे व

२१ अकस्मा पलिकि (लेसे) व नो सिया ति (।*) एताये च अठाये हक (ं) (महा*) मते पंचसु पंचसु (व) से-

२२ सु (निखा) मयिसामि ए अखखसे अ (चंडे) सखिनालंभे होसति एतं अठं आजितु (तं*) (पि*) (त) तथा

२३ कल (ं) ति अथ मम अनुसथो ति (।*) उजेनिते पि चु कुमाले एताये व अठाये (नि) खाम (यिस) (ति*) * * *

२४ हेदिसमेव वर्ग नो च अतिकामयिसति तिनि वसानि (।*) हेमेव तख-(सि) लाते यप (।*) (अ) दा अ * * *

२५ ते महामता निखमिसंति अनुसयानं तदा अहापयितु अतने कंमं एतं पि जानि-संति

२६ तं पि त (थ) ा कलंति अ (थ) लाजिने अनुसथी ति (।।*)

जौगढ़ लेख

भाषा–प्राकृत

लिपि–ब्राह्मी

प्राप्तिस्थान–गंजाम उड़ीसा

काल–ई० पू० चौथी शता०

१ देवानंपिये हेवं आ (ह) (।*) समापायं महामता ल (ा) जवचनिक वतविया (।*) अं किछि दख (ा) मि हकं तं इ (छ)ामि हकं (कि) ति कं कमन

२ पटिपातयेहं दुवा (ल) ते च आलभेहं (।*) एस च मे मोखियमतदुवाल एतस अ (थ) स अ (ं) (तुफे) सु अनुस (थि) (।*) सव-मुनि-

३ सा मे पजा (।*) अथ पजा (ये) इछामि किंति मे सवेणा हित-सु (खे) न यु (जे) यू (अ) थ पजाये इछामि किं (ति) (मे) सवेन हित-सु

४ (ख) न युजेयू ति हिदलोगिक-पाललोकि (केण) हेवंमेव मे इछ सवमुनिसेसु (।*) सिया अंतानं (अ) विजिता-

५ नं किं-छांदे मु लाजा अफेसू ति (।*) एताका (वा) मे इछ (अ) तेसु पापुनेयु लाजा हेवं इछति अनु (विगि) न ह्वे (यू)

६ ममियाये (अ) स्वसेयु च मे सुखं (मेव च लहे (यू) ममते (नो) (दु*) ख ( ) (।*) हेवं च पापुनेयु ख (मिस) ति ने लाजा

७ ए सकिये खमितवे ममं निमितं च धंम (ं) चले (यू) ति हिदलोग (ं) च पललोग च आलाधये (यू) (।*) एताये

८ च अठाये हकं तुफेनि अनसासामि अन (ने) (एत) केन (ह) कं तुफेनि अ (नु) सासिसु छंद (ं) (च) वेदि-
९ (तु) आ मम धिति पटिना च अचल (।★) स हेवं (क) टु क (ं) मे (च) लितवियं अस्वास (नि) या च ते एन ते पापुने-
१० यु अ (थ) ा पित (हे) वं (ने) लाजा ति अथ (अ) तानं अनुकंप (ति) (हे) वं अ (फे) नि अनुक (ंप) ति अथा पजा हे-
११ वं (मये) ला (जि) ने (।★) तुफेनि हकं अनुसासित (छ) दं (च) (वेदि) त (आ) (म) म धिति पटिना चा अचल (सक) ल-
१२ देसा-आ (युति) के- होसामी एतसि (अ) थ (ा) स (।★) (अ) लं (हि) तुफे अस्वास (ना) ये हि (त)-सुखाये (च) (ते) स (ं) हिद-
१३ लोगि (क)-प (ा) ल (लो) कि (काये) (।★) हेवं च कलंतं स्वग (ं) (च) (आ) लाधयिस (थ) मम च आन (ने) यं एसथ (।★) ए-
१४ ताये च अ (थ) ाये इ (यं) लिपि लि (खित) (हि) द ए (न) (म)- ह (ा) माता सास्वतं समं युजेयू अस्वासनाये च
१५ धंम-चल (ना) ये च अंता (न) (।★) इयं च लिपि अ (नु) च (ा) तुं (म) ासं (सोत) विया तिसेन (।★) अंतला पि च सोतविया (।★)
१६ खने संतं एके (न) पि (सोतवि (या) (।★) हेव (ं) च (क) लं (त) चघथ संपटिपातयित- (वे) (।।★)

(३) गौड़ शिला-लेख

रूपनाथ[1]

भाषा—प्राकृत — प्राप्ति स्थान—जबलपुर म० प्र०

लिपि—ब्राह्मी — काल—ई० पू० चौथी शताब्दी

१ देवानंपिये हेव (ं) आहा (।★) साति (र) केकानि अढति (था) नि व (सानि★) य सुमि पाकास (सके) (।★) नो चु बाढि पकते (।★) सातिलेके चु छवछरे य सुमि हक (ं) लघ उ (पे) ते
२ बाढि च-पकते (।★) या (इ) माय कालाय जम्बुदिपसि अमिसा देवा हुसु ते दानि (मिसा) कटा (।★) पकमसि हि (ए) स फले (।★) नो च एसा महतता प (ा) पोतवे खुदकेन
३ पि प (क) म (मि) नेना सकिये पिपुले पा स्वगे आरोधेवे (।★) एतिय अठाय च सावने कटे (खु) दका च उडाला च पकमतुति अता पि च जानंतु इय पक (रा) (व)
४ किति चिर-ठितिके सिया (।★) इय हि अठे वढि वढिसिति विपुल च वढिसिति अपल-धियेना दियढिय वढिसत (।★) इय च अठे पवति (सु) लेखापेत वालत (।★) हथ च अथि

---

१ इस लेख की प्रतियाँ कई स्थानों पर मिली हैं। ब्रह्मगिरि में कुछ अधिक पंक्तियां हैं जिनमें आमूल भेद नहीं है। मास्की के लेख में "देवानं पियस असोकस" से प्रारम्भ होता है।

५ खाला-ठ (भे) मिला ठ (·) मसि लाखापेतवय त (।★) एतिना च वयजनेना याव-
तक तुपक अहाले सवर विवसेतवा (य) ति (।★) (व्यु) टेना सावने कटे (।★)
२०० (+★) ५० (+★) ६ स-
६ त विवासा त (॥★)

येरगुडी लेख

भाषा-प्राकृत | प्राप्ति स्थान-करनूल मद्रास
लिपि-ब्राह्मी | काल-ई० पू० चौथी शता०

१ देवानंपिये हेवं १a हुआ (।★) १b (स) ।धिकानि...
२ ते (कप रछयसं कंए २a खो तु नो (।★) केसपाउ कंह (यं)
३ हुस साति (रे) कं (तु खो) सवछरे यं मया संघे उपायि-
४ (अ) (न) लेका च नामिइ (।★) तेकप मे च ढबा ते
५ -मिसा मुनि-
५a सा देवेहि ते दानि मिसिभूता (।★) पकमस हि (एस फलो ।★)
६ खु येकिस वनेदेत्पहम (त)
७ -दकेन पि प (क)- ७a घेतवे (।★) ए
८ (म) मीनेन सकिये विपुले स्वगे आरा ताय च अठाय इयं
९ (स) ावने साविते अथा खुदक-महषना इमं पराकमेवू अं-
१० च कातिठिरचि वुनेजा मे च ता-
११ (इ यं पकमे होतु विपुले पि च बढसिता अपरधिया दियढियं (।★)
१२ सा नेवसा च यं (इ)
१३ -(वापि) ते व्यूथेन २०० (+★) ५० (+★) ६ (।★)
१३d हेवं देवानं बेवानपि- १३b -ये आह यथा देवान-
१४ (।★) (यवतिक थात हाआ) येपि
१५ (राजू) के आनपितविये
१६ नआ दपनजा नीदा ते
१७ -पयिसति रठिकानि च (।★) मातापितूसू सु (सु★)-
१८ सितविये हेमेव गरूसू सुसूसितविये पानेसु दयितविये
१८a सच वतविय
१९ सुसुम धंमगुना पवतितविया (।★) हेवं तुफे आनपयाथ देवानंपियस वचनेन (।★) हे-
२० पनआ वमे
२१ यथ हथियारोहानि कारनकानि यू (ग्य) चरियानि बंभनानि च तुफे (।★) हेवं निवेसया-
२२ थ अतेवासीनि या (रि) सा पोराना पकिति (।★) इयं सुसुसितविये अपचायना य वा
सव मे २२a आचरि-
२३ -यस यथाचारिन आचरियस (।★) नातिकानि यथारह नातिकेसु पवतितविये (।★)
हेसा (पि)
२४ अंतेवासीसु यथारह पवतितविये यारिसा पोराना पकिति (।★) यथारह यथा इयं

२५ आरोके सिया हेवं तुफे आनपयाय निवेसयाय
२५a च अंतेवास (ाे) नि (।★) हेवं वे- २६ (।।★) तिययनआ योपितंवा[1]

(४) अशोक के स्तम्भ-लेख

[१ देहली-तोपरा का पाठ]

भाषा—प्राकृत प्राप्ति-स्थान—दिल्ली
लिपि—ब्राह्मी काल—ई० पू० चौथी शताब्दी

१ देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आहा (।★) सडुवीसति-
२ वस-अभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापिता (।★)
३ हिदत-पालते दुसंपटिपादये अनंत अगाया धंम-कामताया
४ अगाय पलीखाया अगाय सु (सू) याया अगेन भयेना
५ अगेन उसाहेना (।★) एस चु खो मम अनुसथिया
६ धंमापेखा धंम-कामता चा सुवे सुवे वढिता वढीसति चेवा (।★)
७ पुलिसा पि च मे उकसा चा गवेया चा मझिमा चा अनुविधीयंती
८ संपटिपादयंति चा अलं चपलं समादपयितवे (।★) हेमेवा अंत-
९ महामाता पि (।★) एस हि विधि या इयं धंमेन पालना धंमेन विधाने
१० धंमेन सुखियना धंमेन गोती ति (।।★)

[२]

वही वही

१ ········देवानंपिये पियदसि लाज
२ हेवं आहा (।★) धंमे साधू (।★) कियं चु धंमे ति (।★) अपासिनवे बहु-कयाने
३ दया दाने सचे सोचये (।★) चखु-दाने पि मे बहुविधे दिंने (।★) दुपद-
४ चतुपदेसु पखि-वालिचलेसु विविधे मे अनुगहे कटे आ पान-
५ दाखिनाये (।★) अंनानि पि च मे बहूनि कयानानि कटानि (।★) एताये मे
६ अठाये इयं धंम-लिपि लिखापिता हेवं अनुपटिपजंतु चिलं-
७ थितिका च होतू ती ति (।★) ये च हेवं संपटिपजीसति सेसु कटं कछती ति (।।★)

[३]

वही वही

१ देवानंपिये पियदसि लाज हेवं अहा (।★) कयानंमेव देखति इयं मे
२ कयाने कटे ति (।★) नो मिन पापं (दे) खति इयं मे पापे कटे ति इयं वा आसिनवे

१. इस लेख की खुदाई विभिन्न ढंग से की गई है। कुछ पंक्तियां बाएँ से दाहिने तथा कई दाहिने से बाएँ लिखी गई हैं। उस ढंग से पढ़ने पर क्रम ठीक हो जाता है। पहली पंक्ति में आह्न के स्थान पर हआ खुदा है। दूसरी पंक्ति को उल्टा पढ़ने से एकं संवछरे पकते हो जाता है। २a के अंत को इकं उपासके पढ़ा जायगा। चौथे का अंत 'ते बाढ़य मे पकते' इमिनाय कालेन हो जायगा। इस तरह १०, १२, १४, १६, २० तथा २६ पंक्तियों को ऊपर मिलाकर उल्टा पढ़ें।

३ नाया ति (।★) दुपटिवेखे चु खो एसा (।★) हेवं चु खो एसदेखिये (।★) इमानि
४ आसिनव-गामिनि नाम अथ चंडिये निठूलिये कोधे माने इस्या
५ कालनेन व हकं मा पलिभसयिसं (।★) एस वाढ देखिये इयं मे
६ हिदतिकाये इयंमन मे पालतिकाये (।।★)

[४]

वही | वही

१ देवानंपिये पियदसि ल (ा) ज हेवं आहा (।★) सडुवीसति-वस-
२ अभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापिता (।★) लजूका मे
३ बहुसू पान-सत-सहसेसु जनसि आयता (।★) तेसं ये अभिहाले वा
४ दंडे वा अत-पतिये मे कटे (।★) किंति लजूका अस्वथ अभीता
५ कंमानि पवतयेवू जनस जानपदसा हित-सुखं उपदहेवू
६ अनुगहिनेवु चा (।★) सुखीयन-दुखीयनं जानिसंति धंमयुतेन च
७ वियोवदिसंति जनं जानपदं (।★) किंति हिदतं च पालतं च
८ आलाधयेवू ति (।★) लजूका पि लघति पटिचलितवे मं (।★) पुलिसानिपि मे
९ छंदंनानि पटिचलिसंति (।★) ते पि च कानि वियोवदिसंति येन मं लजूका
१० चघंति आलाधयितवे (★) अथा हि पजं वियताये धातिये निसिजितु
११ अस्वथे होति वियत धाति चघति मे पजं सुखं पलिहटवे
१२ हेवं ममा लजूका कटा जानपदस हित-सुखाये (।★) येन एते अभीता
१३ अस्वथ संतं अविमना कंमानि पवतयेवू ति एतेन मे लजूकानं
१४ अ (f) भहाले व दंडे वा अत-पतिये कटे (।★) इछितविये (हि) एसा- (।★) किंति
१५ वियोहाल-समता च सिय दंड-समता चा (।★) अव इते पि च मे आवुति (।★)
१६ बंधन-बधानं मुनिसानं तीलित-दंडानं पत-वधानं तिंनि दिवसा (नि) मे
१७ योते दिंने (।★) नातिका व कानि निझपयिसंति जीविताये तानं
१८ नासंतं वा निझपयिता दानं दाहंति पालतिकं उपवासं व कछंति (।★)
१९ इछा हि मे हेवं निलुधसि पि कालसि पालतं आलाधयेवू ति (।★) जनस च
२० वढति विविधे धंम-चलने संयमे दान-सविभागेति (।।★)

[५ रामपुरवा का पाठ]

भाषा–प्राकृत | प्राप्ति-स्थान–जि० चम्पारन, बिहार
लिपि–ब्राह्मी | काल–ई० पू० चौथी शताब्दी

१ देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (।★) सडुवीसति-(व) साभिसितेन
मे इमानि पि जातानि अवध्यानि कटानि (।★) से यथ
२ सुके सालिक अलुने चकवाके हंसे नंदीमुखे गेलाटे जतूकं अंबा-कपिलिक दुलि अनठिक-मछे
वेदवेयके
३ गंगा-पुपुटके संकुज-मछे कफट-सेयके पंन-ससे सिमले संडके ओकपिंडे पलसते सेत-कपोते
४ गाम-कपोते सवे चतुपदे ये पटिभोगं नो एति न च खादियति (।★) अजका नानि एलका
च सूकली च गभिनी व

५ पायमीना व अवध्य पोतके च कानि आसंमासिके (।★) वधि-कुकुटे नो कटविये (।★) तुसे सजीवे नो झापयितविये (।★)
६ दावे अनठाये व विहिसाये व नो झापयितविये (।★) जीवेन जीवे नो पुसितविये (।★) तीसु चातुंमा (सी) सु तिस्यं पुंनमासियं ·
७ तिनि दिवसानि चावुदसं पंनडसं पटिपदं धुवाये च अनु-पोसथं मछे अवध्ये नो पि विकेत-विये (।★) एतानि येव
८ दिवसानि नाग-वनसि केवट-भोगसि यानि अंनानि पि जीव-निकायानि नो हंतवियानि (।★) अठमि-पखाये चावुदसाये
९ पंनडसाये तिसाये पुनावसुने तीसु चातुंमासीसु सुदिवसाये गोने नो निलखितविये (।★) अजके एलके सूकले
१० ए वापि अंने नीलखियति नो नीलखितविये (।★) तिसाये पुनावसुने चातुंमासिये चातुं-मासि-पखाये अस्वस गोनस
११ लखने नो कटविये (।★) याव-सडुवीसति-वसाभिसितेन मे एताये अंतलिकाये पंनवीसति बंधन-मोखानि कटानि (।।★)

[६]

वही वही

१ देवानंपिये पियदसि लाज हेवं आह (।★) दुवाडस-वसाभिसितेन मे धंमलिपि लिखा-पित लोकस हित-सुखाये (।★) से तं अपहट
२ तं तं धंम-वढि पापोव (।★) हेवं लोकस-हित-सुखे ति पटिवेखामि अथ इयं नातिसु हेवं पत्यासंनेसु हेवं अपकठेसु किमं कानि
३ सुखं आवहामी ति तथा च विदहामि (।★) हेमेव सव-(नि) कायेसु पटिवेखामि (।★) सव-पासंडा पि मे पूजित विविधाय पूजाय (।★) ए चु इयं
४ अतन पचूपगमने से मे मोख्य-मुते (।★) सडुवीस (ति)-वसाभिसितेन मे इयं धंम-लिपि लिखापित (।।★)

[७]

भाषा—प्राकृत प्राप्ति-स्थान—दिल्ली
लिपि—ब्राह्मी काल—ई० पू० चौथी शता०

१ देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (।★) ये अतिकंतं
२ अंतलं लाजाने हुसु हेवं इछिसु कथं जने
३ धंम-वढिया वढेया नो चु जने अनुलुपाया धंम-वढिया
४ वढिया (।★) एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (।★) एस मे
५ हुथा (।★) अतिकंतं च अंतलं हेवं इछिसु लाजाने कथं जने
६ अनुलुपाया धंम-वढिया वढेया ति नो च जने अनुलुपाया
७ धंम-वढिया वढिया (।★) से किनसु जने अमु (प) टिपजेया (।★)
८ किनसु जने अनुलुपाया धंम-वढिया वढेया ति (।★) (कि) कनसु कानि

९ अभ्युंनामयेहं धंम-वढिया ति (।★) एतं देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं

१० आहा (।★) एस मे हुथा (।★) धंम-सावनानि सावापयामि धंमानुसथिनि

११ अनुस (ा) सामि (।★) एतं जने सुतु अनुपटीपजीसति अभ्युंनमिसति

१२ धंम-वढिया[1] च बाढं वढिस (ति) (।★) एताये मे अठाये धंम-सावनानि सावापितानि धंमानुसथिनि विविधानि आनपितानि य (था★) (पुलि★) (स) ा पि बहुने जनसि आयता एते पलियोवदिसंति पि पवि थलिसंति पि (।★) लजूका पि बहुकेसु पान-सत-सहसेसु आयता (।★) ते पि मे आनपिता हेवं च हेवं च पलियोवदाथ

१३ जनं धंम-यु (त) (।★) (देव)ा नंपिये पियदसि हेवं आहा (।★) एतमेव मे अनु-वेखमाने धंम-थंभानि कटानि धंम-महामाता कटा धं (म) (सावने★) कटे (।★) देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (।★) मगेसु पि मे निगोहानि लोपा-पितानि छायो-पगानि होसंति पसु-मुनिसानं अम्बा-वडिक्या लोपापिता (।।★) अढ (कोसि) क्यानि पि मे उदुपानानि

१४ खानापापितानी निंसि (ढ) या-च कालापिता (।★) आपानानि मे ब (हु) कानि तत तत क (ा) लापितानि पटीभोगाये पसु-मुनिसानं (।★) (ल) (हुके★) (चु★) एस पटीभोगे नाम (।★) विविधाया हि सुखायनाया पुलिमेहि पि लाजीहि ममया च सुखयिते लोके (।★) इमं चु धम्मानुपटीपती अनुपटीपजंतु ति एतदथा मे

१५ एस कट (।★) देवानंपिये पियदसि हेवं आहा (।★) धंम-महामाता पि मे ते बहुविधेसु अठेसु आनुगहिकेसु वियापटासे पवजीतानं चेव गिहिथानं च सव-(पासं★)-डेसु पि च वियापटासे (।★) संघठसि पिमे कटे इमे वियापटा होहंति ति हेमेव बाभनेसु आ (ज) ीविकेसु पि मे कटे

१६ इमे वियापटा होहंति ति निगंठेसु पि मे कटे इमे वियापटा होहंति नानापासंडेसु पि मे (क) टे इमे वियापटा होहंति ति पटिविसिठं पटीविसिठं तेसु तेसु (ते) (ते) (★) (महा★) माता (।★) धमं-महामाता चु मे एतेसु चेव विया (प) टा सवेसु च अंनेसु पासंडेसु (।★) देवानंपिये पियदसि लाजा हेवं आहा (।★)

१७ एते च अंने च बहुका मुखा दान-विसगसि वियापटासे मम चेव देविनं च (। ★) सवसि च मे ओलोधनसि ते बहुविधेन आ (का) लेन तानि तुठायतन (ा) नि पटी····हिद चेव दिसासु च (।★) दालकानां पि च मे कटे अंनानं च देवि-कुमालानं इमे दान-विसगेसु वियापटा होहंति ति

१८ धंमापदानठाये धंमानुपटिपतिये (।★) एस हि धंमापदाने धंम-पटीपति च या इयं दया दाने सचे सोचवे मदवे साध (वे) च लोकस हेवं वढिसति ति (।★) देवानंपिये (पियदसि★) लाजा हेवं आहा (।★) यानि हि (क) ा निचि ममिया साधवानि कटानि तं लोके अनूपटीपंने तं च अनुविधियन्ति (।★) तेन वढिता च

१९ वढिसंति च मातापितिसु सुसुसाया गुलुसु सुसुसाया वयो-महालकानं अनुपटीपतिया बाभन समनेसु कपन-वलाकेसु आव दास-भटकेसु संपटीपतिया (।★) देवानंपि (ये★) (पि★)

---

[1]. १२ से स्तम्भ की गोलाई में खुदा है ।

(थ) वसि लाजा हेवं आहा (।*) मुनिसानं चु या इयं धंम-वढि वढिता दुवेहि येव आकालेहि धंम-नियमेन च निझतिया च (।*)

२० तत चु लहु से धंम-नियमे निझतिया व भुये (।*) धंम नियमे चु खो एस ये मे इयं कटे इमानि च इमानि जातानि अवधियानि (।*) अंनानि पि चु बहु-(कानि*) धंम-नियमानि यानि मे कटानि (।*) निझतिया व चु भुये मुनिसानं धंम-वढि वढिता अविहिंसाये भूतानं

२१ अनालंभाये पानानं (।*) से एताये अ (थ) ये इयं कटे पुता-पपोतिके चंदमसुलियिके होतु ति तथा च अनुपटीपजंतु ति (।*) हेवं हि अनुपटीपजंतं हि (द) त-(पाल) ते आलधे होति (।*) सतविसति वसाभिसितेन मे इयं धम्मलिबि लिखापापिता ति (।*) एतं देवानंपिये आहा (।*) इयं

२२ धम्म-लिबि अत अथि सिला-थंभानि वा सिला-फलकानि वा तत कटविया एन एस चिल-ठितिके सिया (।।*)

(५) गौड़ स्तम्भ लेख

रानी का स्तम्भ लेख

भाषा—प्राकृत | प्राप्ति-स्थान—कौशाम्बी उ० प्र०

लिपि—ब्राह्मी | काल—ई० पू० चौथी शताब्दी

१ देवानंपियसा वचनेना सवत महमता
२ वतविया (।*) ए हेता दुतिया देवीये दाने
३ अंबा-वडिका वा आलमे व दान-(गहे) (व) (ए) (वा) (पि) (अ) ंने
४ कीछि गनीयति ताये देविये से (।*) नानि (हे) वं (ग*) (न) (तविये*)
५ दुतीयाये देविये ति तीवल-मातु कालुवाकिये (।।*)

कौशाम्बी स्तम्भ लेख

वही | वही

१ (देवानं*) (पि) ये आनपयति (।*) कोसंबिय महाम (ा) त
२ ····(स) म (गे) (कटे) स (ं) घसि नो लहिये
३····(संघं) (भा) खति-भि (खु) व (ा) भि (खु) नि वा (से) (पि) चा
४ (ओ*) दाता (ा) नि दुसानि (स) नंधापयितु अ (नावा) स (सि) (आ) व (ा) सयि (ये) (।।*)

सांची स्तम्भ लेख

भाषा—प्राकृत | प्राप्ति-स्थान—सांची, विदिसा, मध्य प्रदेश

लिपि—ब्राह्मी | काल—ई० पू० चौथी शता०

१ ....
२ ....(य) ा मे (त)....(।*) (सं*) (घे) (स*) मगे कटे
३ (भि*) खून (ं) च भि (खुनी) नं चा ति (पु) त- प-
४ (पो*) तिके चं (द) म- (सू) रि (यि) के (।*) ये संघं
५ भ (ा) खति- भिखु वा भिखुनि वा ओदाता-

६ नि दुस (ानि) सनं (धापयि) तु अना (वा)-
७ससि वा (सा) पेतवि (ये) (।★) इछा हि मे कि-
८ ति संघे समगे- चिल-थतीके सिया ति (।।★)

सारनाथ स्तम्भ लेख

भाषा–प्राकृत **प्राप्ति-स्थान–सारनाथ बनारस उ० प्र०**
लिपि–ब्राह्मी **काल–ई० पू० चौथी शता०**

१ देवा (नंपिये–) ....
२ ए ल.... ....
३ पाट ....ये- केन पि संघे भेतवे (।★)
ए चु खो

४ (भिखू) (वा) (भिखु) नि वा संघं भ (खति) (से) ओदातानि दुस (ानि) (स) ं- नंधापयिया आनावाससि
५ आवासयिये (।★) हेवं इयं सासने भिखु-संघसि च भिखुनि-संघसि च विंनपयितवियें (।★)
६ हेवं देवानंपिये आहा (।★) हेदिसा च इका लिपी तुफाकंतिकं हुवा ति संसलनसि नि खिता (।★)
७ इकं च लिपि हेदिसमेव उपासकानंतिकं निखिपाथ (।★) ते पि च उपासका अनु-पोसथं यावु
८ एतमेव सासनं विस्वंसयितवे (।★) अनपोसथं च धुवाये इकिके महामाते पोसथाये
९ याति एतमेव सासनं विस्वंसयितवे आजानितवे च (।★) आवते चतुफाकं आहाले
१० सवत विवासयाथ तुफे एतेन वियंजनेन (।★) हेमेव सवेसु कोट-विषवेसु एतेन
११ वियंजनेन विवासापयाथा (।।★)

(६) स्मारक स्तम्भ लेख

सम्भनदेई स्तम्भ लेख

भाषा–प्राकृत **प्राप्ति-स्थान–सम्भनदेई नेपाल तराई**
लिपि–ब्राह्मी **काल–ई० पू० चौथी शता०**

१ देवानंपियेन पियदसिन लाजिन वीसति-वसाभिसितेन
२ अतन आगाच महीयिते हिद बुधे जाते सक्य-मुनी ति (।★)
३ सिला-विगड-भीचा- कालापित सिला-थभे च उसपापिते (।★)
४ हिद भगवं जाते ति लुंमिनि-गामे उबलिके कटे
५ अठ-भागिये च (।।★)

निगाली सागर स्तम्भ लेख

भाषा–प्राकृत **प्राप्ति-स्थान–निगलिव नेपाल तराई**
लिपि–ब्राह्मी **काल–ई० पू० चौथी शता०**

देवानं पियेन पियदसिन लाजिन चोदस वसा (यिसितेज) बुधस कोनाकयनस थुबे दुतियं वढति (वीसती) वसाभिसितेन च अतन अगाच महीयिते सिलाथमचउसपापिते

अशोक का रुम्मनदेई स्तम्भ लेख

(७) गुहा लेख

बराबर

भाषा–प्राकृत
लिपि–ब्राह्मी

प्राप्ति-स्थान–गया, बिहार
काल–ई० पू० चौथी शता०

I

१ लाजिना पियदसिना दुवाडस-वसा (भिसितेना)
२ (इयं) (निगोह) -कुभा दि (ना) (आजीविकेहि) (॥★)

II

१ लाजिना पियदसिना दुवा-
२ डस-वसाभिसितेना इयं
३ कुभा खलतिक-पवतसि
४ दिना (आजीवि) केहि (॥★)

III

१ लाजा पियदसी एकुनवी-
२ सति-वसा (भि) सिते (।★) ज (लघो)-
३ (सागम) थात (मे) इ (यं) (कुभा)
४ सुपि (ये) ख (लतिकपवतसि★) (दि)
५ ना (॥★)

नागार्जुनी गुहा लेख
(मौर्य राजा दशरथ)

I

वही

वही

१ वहियक (ा) कुभा दषलथेन देवानंपियेना
२ आनंतलियं अभिषितेना (आजीविकेहि)
३ भदंतेहि- वाष-निषिदियाये निषिठे
४ आ-चंदम-षूलियं (॥★)

II

१ गोपिका कुभा दषलथेना देवा (नं) 'पि-
२ येना आनंतलियं अभिषितेना आजी-
३ विके (हि) (भदं) तेहि वाष-निषिदियाये
४ निषिठा आ-चंदम-षूलियं (॥★)

III

१ वडथिका कुभा दषलथेना देवानं
२ पियेना आनंतलियं अ (भि) षितेना (आ)-

३ (जी) विके हि भदंतेहि वा (ध-लिपि) दियाये
४ निषिठा आ-चंदम-षूलियं (॥★)

(८) बैराट-शिला लेख

भाषा–प्राकृत | प्राप्ति-स्थान–भाब्रू जयपुर, राजस्थान
लिपि–ब्राह्मी | काल–ई० पू० चौथी शता०

१ पि (प्रि) यदसि लाजा मागधे संघं अभिवादे (तू) नं आहा अप (ा) बाधतं च फासुविहालतं चा (।★)
२ विदिते वे भंते आवतके हमा बुधसि धंमसि संघसी ति गालवे चं पं (प्र)- सादे च (।★) ए केचि भंते
३ भगवता बुधे (न) भासिते सवे से सुभासिते वा (।★) ए चुखो भंते हमियाये दिसेया हेवं सधंमे
४ चिल- (ठि) तीके होसती ति अलहामि हकं तं व (ा) तवे (।★) इमानि भंते (धं) म-पलियायानि विनय-समुकसे
५ अलिय-वसाणि अनागत-भयानि मुनि-गाथा मोनेय-सूते उपतिस-पं (प्र) सिने ए चा लाघुलो-
६ वादे मुसा-वादं अधिगिच्य भगवता बुधेन भासिते एतानि भंते धंमपलियायानि इछामि
७ किंति बहुके भिखु (प) ाये चा भिखुनिये चा अभिखिनं सु (ने) यु चा उपधालयेयू चा (।★)
८ हेवंमेवा उपासका चा उपासिका चा (।★) एतेनि भंते इमं लिखा (प) यामि अभिपेतं मे जानंतू ति (॥★)

•

अध्याय १४

शुङ्गकालीन अभिलेख

मौर्यवंश के पश्चात् शुङ्ग नरेश पुष्यमित्र शक्तिशाली शासक माना जाता है जिसने मौर्य कुल के अंतिम राजा बृहद्रथ को मारकर सिंहासन प्राप्त किया। उसके जीवन-काल में भारतीय यूनानी राजाओं ने भी भारत पर आक्रमण किया था जिसका उल्लेख गार्गी संहिता में मिलता है। पतंजलि ने भी महाभाष्य में 'अरुणद यवन: साकेतम्' अरुणद् यवनो माध्यमिकाम्' का उल्लेख किया है। यूनानियों ने अयोध्या तथा चित्तौड़गढ़ के समीप भाग पर आक्रमण किया था। उसमें सफलता किसके हाथों आई। यह निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता। परन्तु पुष्यमित्र द्वारा अश्वमेध करने से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि विजयलक्ष्मी शुंगों को प्राप्त हुई थी। अयोध्या के लेख में पुष्यमित्रको "द्विरश्वमेधयाजिन:" (दो अश्वमेध करने वाला) कहा गया है जो उसके विजयी होने की वार्ता का समर्थन करता है। पुष्यमित्र के समकालीन महाभाष्यकार पतंजलि ने भी 'इह पुष्यमित्र: याजयाम:' (यहाँ पुष्यमित्र ने यज्ञ किया) लिखकर अयोध्या लेख में उल्लिखित घटना (अश्वमेध) को प्रमाणित किया है। घोसुडी लेख में भी सर्वतात नामक शासक द्वारा अश्वमेध का उल्लेख है। विशेष बात यह है कि शुंगकालीन अभिलेखों में अशोक द्वारा प्रचारित विचारधारा का विरोध किया गया है। इन अभिलेखों में बुद्धधर्म की कहीं चर्चा तक नहीं है। अपितु वैदिक धर्म के प्रचार की कथा सुनाते हैं। पुष्यमित्र के अश्वमेध के अतिरिक्त अन्य लेख ब्राह्मणधर्म विशेषतया वैष्णव धर्म का उल्लेख करते हैं। बेस नगर के गरुड़स्तम्भ लेख में वासुदेव की चर्चा है तथा यूनानी दूत हेलियोडोरस स्वयं वैष्णव हो गया था जिससे हेलियोडोरस ने अपने को भागवत कहा है। यह वैष्णव पदवी थी जिसे कालान्तर में गुप्त शासकों ने धारण किया था। राजस्थान का घोषुडी लेख भी संकर्षण वासुदेव (विष्णु का व्यूह स्वरूप) के पूजा प्रकार की ओर संकेत करता है। तात्पर्य यह है कि अशोक के पश्चात् बौद्धमत का ह्रास हो गया और शुंगकाल में वैदिक प्रणाली को अपनाया गया। इस स्थान पर रानी नागनिका के नानाघाट लेख का वर्णन आवश्यक प्रतीत होता है। उस लेख में अनेक वैदिक यज्ञों का वर्णन है तथा हजारों कार्षापण (सिक्के) दान (दक्षिणा रूप में) का उल्लेख है। तात्पर्य यह है कि उत्तरी से दक्षिणी भारत तक वैदिक परम्परा का शुभारम्भ हो गया था। अशोक के विचार का नकारात्मक उत्तर इन लेखों में पाया जाता है। बुद्धमत के स्थान पर वैदिक यज्ञ ने स्थान लिया जिसमें हिंसा अनिवार्य थी। अशोक ने पहले शिलालेख में ही आदेश दिया था कि "इध न किंचिजीवं आरभित्वा प्रजूहितव्यं" जीवहत्या न हो। किन्तु उसके मरते भारत में यज्ञों की बहुलता दीख पड़ती है। हाथी गुहा लेख में खारवेल ने प्रजा के अभिनन्दन तथा मनोरंजन के लिए संगीत का आयोजन किया था जिसे अशोक ने बंद कर दिया था (न च समाजो कतव्यो) इस प्रकार वैदिक रीति

एवं समाज की मान्यताओं का प्रारंभ शुङ्ग काल में हुआ। वैष्णवमत के प्रचार के प्रबल प्रमाण मिलते हैं।

तिथि

यह कहा जा चुका है कि बेसनगर स्तम्भ लेख में हेलियोडोरस के वैष्णव होने का उल्लेख मिलता है किन्तु इस घटना की तिथि का भी निश्चय इसी आधार पर किया जा सकता है। यूनानी दूत हेलियोडोरस तक्षशिला का यूनानी शासक अन्तलिकित के शासनकाल में विदिसा आया जहाँ स्वयं स्तम्भ खड़ा किया। इस यूनानी राजा के सिक्के उत्तर-पश्चिम भारत से (गन्धार का भूभाग) अधिक संख्या में प्राप्त हुए हैं। उनके विश्लेषणात्मक परोक्षण से पता चलता है कि ईसा पूर्व द्वितीय सदी में वह शासन करता होगा। पुष्यमित्र के राज्य पर भी यूनानी लोगों ने आक्रमण किया था जो उसी के समीप की घटना है। अतएव शुंगकालीन अभिलेखों के अनुशीलन से ब्राह्मण मत के पुनः प्रचार का परिज्ञान हो जाता है जो अशोक के पश्चात् सम्भव हुआ।

वैदिक यज्ञ का प्रचलन

वैदिक यज्ञ के प्रसंग में दो शब्द कहना नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है। शुंग लोगों ने जिस वैदिक परम्परा को जीवित किया वह सदियों तक उत्तर भारत में प्रचलित रहा। ईसवी सन् के आरम्भ से यद्यपि कनिष्क गन्धार पर शासन कर रहा था और वह बौद्ध हो गया था किन्तु बुद्ध धर्म का प्रभाव सर्वत्र फैल न सका। दक्षिण भारत में सातवाहन ब्राह्मण मत के समर्थक थे। उत्तर में नागवंशी नरेशों ने अश्वमेध किया। जायसवाल के मतानुसार भारशिव लोगों ने वाराणसी में दस अश्वमेघ किया इसी कारण एक स्थान का नाम दशाश्वमेध प्रसिद्ध है। राजपुताना में कोटा के बडवा स्थल से भी मौखरियों का लेख मिला है। वह यूप पर अंकित है। अतएव मौखरियों ने वैदिक यज्ञ किया और हजारों गाय दक्षिणा में दी थी।

मोखरेः बलपुत्रस्य सोमदेवस्य यूपः। त्रिरात्र संमितस्य दक्षिण्यं गवा सहस्रं १००० ॥

(बडवा यूप लेख)

दक्षिण भारत में इक्ष्वाकुवंशी नरेश पुरुषदत्त ने भी वैदिक यज्ञ सम्पन्न किया था। इससे प्रकट होता है कि वैदिक मत के कारण बौद्धमत का अधिक प्रसार न हो सका। शुंग काल से समाज में उसके अनुयायी कम हो गए। नाग, मौखरि तथा सातवाहन ब्राह्मण मत के पालक थे। उसी परम्परा को गुप्त नरेशों ने भी अपनाया और वैष्णव मत राजधर्म हो गया। समुद्रगुप्त ने अश्वमेध भी किया। पश्चिम भारत के क्षत्रप शासक शनैः शनैः ब्राह्मण धर्म (पौराणिक विचार) के अनुयायी हो गए। संक्षेप में यह कहना उचित होगा कि पुष्यमित्र द्वारा प्रचारित वैदिक यज्ञ एवं ब्राह्मण धर्म ईसवी सन् की कई सदियों तक जीवित रहा।

विदेशी बौद्ध मतानुयायी

इसका यह अर्थ नहीं कि बौद्धमत का ह्रास हो रहा था अपितु विदेशी इस मत को अङ्गीकार करने लगे। भारत में आने वाले यूनानी शासकों के मुद्रा लेख यह बतलाते हैं कि उन लोगों ने भारतीयता को अपनाने का प्रयत्न किया। हेलियोडोरस के नाम का उल्लेख किया गया है। ईसा पूर्व सदियों में मिलिन्द नामक यूनानी राजा ने बौद्धमत को स्वीकार कर लिया। कुछ
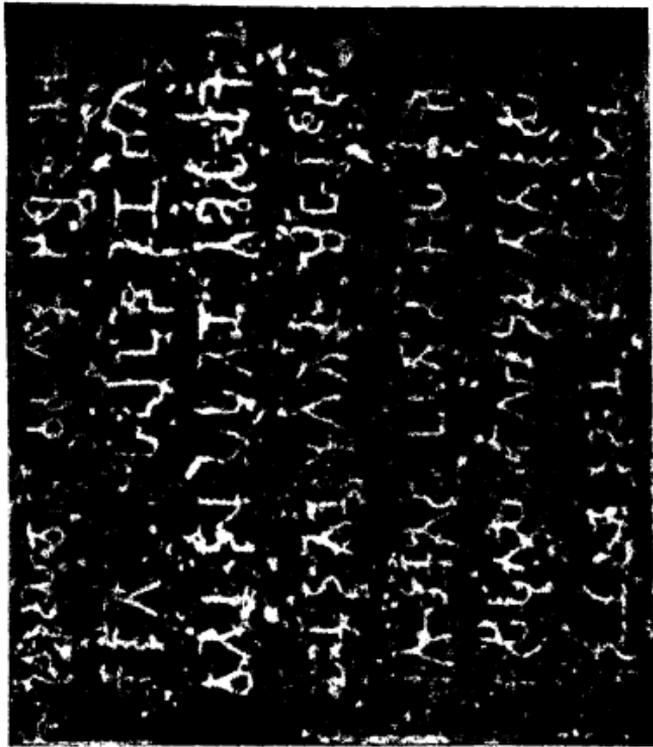
बेसनगर गरुड़स्तम्भ लेख

विद्वानों का मत है कि शुंगकाल में मिलिन्द ने ही भारत पर आक्रमण किया था। मिलिन्द के शासन में बुद्ध के भस्म पात्र लेख अंकित किया गया था। मिलिन्द पन्हो नामक प्राकृत ग्रंथ में बौद्ध साधु नागसेन तथा मिलिन्द के प्रश्नोत्तर का संकलन मिलता है। जिससे स्पष्ट प्रकट होता है कि बौद्धमत की ओर यूनानी आकृष्ट हो रहे थे। इस कारण वैदिक मत के साथ बौद्ध-धर्म का भी प्रसार था।

शुंग कालीन अभिलेख

कनिंघम-भरहुत स्तूप फ० १२

भरहुत वेदिका स्तम्भ लेख

भाषा–प्राकृत | प्राप्ति-स्थान–भरहुत, सतना समीप मध्यप्रदेश
लिपि–ब्राह्मी | काल–ई० पू० दूसरी शता०

१ सुगनं रजे रञो गागी-पुतस विसदेवस
२ पौतेण गोति-पुतस आगरजुस पुतेण
३ वाछि-पुतेन धनभूतिन कारितं तोरनां
४ सिला-कंमंतो च उपंण (॥*)

बेसनगर का गरुडस्तम्भ लेख

अ० एन० इ० वा० रि० १९०८-९

भाषा–प्राकृत | प्राप्ति-स्थान विदिसा, मध्य प्रदेश
लिपि–ब्राह्मी | काल–ई० पू० दूसरी शता०

[१]

१ (दे) वदेवस वा (सुदे*)वस गरुडध्वजे अयं
२ कारिते इ (अ) हेलिओदोरेण भाग-
३ वतेन दियस पुत्रेण तख्खसिलाकेन
४ योन-दूतेन (आ) गतेन महाराजस
५ अंतलिकितस उप (ं *) तकास रञो
६ (को) सीपु (त्र) स (भ)गभद्रस त्रातारस-
७ वसेनच (तु) दसेंन राजेन वंधमानस (॥ *)

[२]

१ त्रिनि अमुत-पदानि (इअ*) (सु)-अनुठितानि
२ नेयंति (स्वगं) दम चाग अप्रमाद (॥*)

घोसुंडी शिला लेख

ए० इ० भा० १६ पृ० २७

भाषा-संस्कृत — प्राप्ति-स्थान—उदयपुर राजस्थान

लिपि–ब्राह्मी — काल–ई० पू० दूसरी शता०

१ (कारितो अयं राज्ञा भागव*) (ते) न गाजायनेन पाराशरी-पुत्रेण स-

२ (र्वतातेन अश्वमेध-या*) जिना भगव (द्*) भ्यां संकर्षण-वासुदेवाभ्यां

३ (अनिहताभ्यां सर्वेश्वरा*) भ्यां पूजा-शिला-प्राकारो नारायण-वाटका (॥*)

धनदेव का अयोध्या शिला लेख

ना० प्र० प० भा० ५ क १

भाषा–संस्कृत — प्राप्ति-स्थान–अयोध्या उ० प्र०

लिपि–ब्राह्मी — काल–ई० पू० पहली शताब्दी

१ कोसलाधिपेन द्विरश्वमेध-याजिनः सेनापतेः पुष्यमित्रस्य षष्ठेन कौशिकी पुत्रेण धन....

२ धर्मराज्ञा पितुः फल्गुदेवस्य केतनं कारितं (॥*)

मिलिन्द कालीन लेख

ए० इ० भा० २४ पृ० ७

(शरीर के भस्मपात्र पर उत्कीर्ण)

भाषा–प्राकृत — प्राप्ति-स्थान–शिनकोट बीस मील पश्चिम बिशा सरहदी सूबा

लिपि–खरोष्ठी — काल–ई० पू० ११५

[१]

........मिनेद्रस महरजस कटिअस दिवस ४[+*] ४[+*] ४[+*]१ [+*]१ प्र (ण-(स)मे(द).... (शरीर)

A

....(प्रति*) (थवि)त (।*)

A

प्रण-समे (द) (शरिर*) (भगव*) (तो) शकमुनिस (।*)

B

वियकमित्र अप्रच-रजस (।*)

[२]

C

१ विजय (मित्रे)ण.... — २ पते प्रदियविदे

D (पात्र के भीतर)

१ इमे शरीर पलुग भुद्रओ न सकरे अत्रित (।*) स शरिअत्रि कलद्रे नो शध्रो न पिडोय-केयि पित्रि प्रिणयत्रि (।*)

२ तस ये पत्रे अपोमुअ (।*) बखये पंचमये ४[+ *]१ वेअवअस मसस दिवस पंच-
विशये इयो

३ पत्रियविन्रे विजयमित्रेन अप्रचरजेन भग्रवतु शकिमुणिस सम-स्र (ं) बुधस शरिर (।*)

E

विश्पिलेन अणंकतेन लिखित्रे (।*)

खारवेल का हाथी गुम्फा लेख

ए० इ० भा० २० पृ० ७२

भाषा—संस्कृत | प्राप्ति-स्थान—उदयगिरि भुवनेश्वर उड़ीसा

लिपि—ब्राह्मी | काल—ई० पू० पहली शता०

१ नमो अरहंतानं (।*) नमो सव-सिधानं (।।*) ऐरेण महाराजेन महामेघवाहनेन
चेति-राज-व (ं) स-वधनेन पसथ-सुम-लखनेन चतुरंत-लुठ-(ण)-गुण-उपितेन कलिंगा-
धिपतिना सिरिखारवेलेन

२ (पं) दरस-वसानि सीरि-(कडार)-सरीर-वता कीडिता कुमार-कीडिका (।।*)
ततो लेखरूप-गणना-ववहार-विधि-विसारदेन सव-विजावदातेन नव-वसानि योवराज
(प) सा-सितं (।।*) संपुंण-चतुवीसति-वसो तदानि वधमानसेसयो-वेनाभिविजयो ततिये

३ कलिंग-राज वसे पुरिस-युगे महाराजाभिसेचनं पापुनाति (।।*) अभिसितमतो च पधमे
वसे वात-विहत-गोपुर-पाकार-निवेसनं पटिसंखारयति कलिंग-नगरि-खिबी (रं) (।*)
सितल-तडाग-पाडियो च बंधापयति सवूयानप (टि) संथपनं च

४ कारयति पनति (सि?) साहि सत-सहसेहि पकतियो च रंजयति (।।*) दुतिये च
वसे अचितयिता सातकंनि पछिम-दिसं हय-गज-नर-रध-बहुलं दंडं पठापयति (।*)
कन्हबेंणा-गताय च सेनाय वितासिति असिकनगरं (।।*) ततिये पुन वसे

५ गंधव-वेद-बुधो दप-नत-गीत-वादित-संदसनाहि उसव-समाज-कारापनाहि च कीडापयति
नगरिं (।।*) तथा चवुथे वसे विजाधराधिवासं अहतपुवं कलिंग (?-) पुव-राज-(निवे-
सितं)············वितध-म (कु) ट ················च निखित-छत (?)-

६ भिंगारे (हि) त-रतन-सपतेये सव-रठिक-भोजके पादे वंदापयति (।।*) पंचमे च दानी
वसे नंद-राज-ति-वस-सत-ओ (घा) टितं तनसुलिय-वाटा पणाडिं नगरं पवेस (य) ति
सो··········(।*) (अ*) भिसितो च (छठे-वसे*) राजसेयं संदंसयंतो सवकर-वण—

७ अनुगह-अनेकानि सत-सहसानि विसजति पोर-जानपदं (।।*) सतमं च वसं (पसा) सतो
वजिरघर.......स मतुक पद........(कु) प........(।*)........अठमे च वसे महता सेन
(ा)........गोरधगिरिं

८ घातापयिता राजगहं उपपीडपयति (।*) एतिन (ा) च कंमपदान-स (ं) नादेन....
सेन-वाहने विपमुंचितुं मधुरं अपयातो यवनरा (ज) (डिमित ?)....यछति....पलव....

९ कपरुखे हय-गज-रध-सह यति सव-घरावास....सव-ग्रहणं च कारयितुं ब्राह्मणानं ज (य)
परिहारं ददाति (।*) अरहत ....(नवमे च वसे*) ....

१० …………महाविजय-पासादं कारयति अठतिसाय सत-सहसेहि (।।★) दसमे च वसे दंड-संधी-सा (ममयो) (?) (भरधवस-पठा (?) न मह (ि) जयनं (?)……..कारा-पयति (।।★) [एकादसमे च वसे★)……..प (ा) यातानं च म (नि)-रतनानि उपलभते (?)

११ ……..पुवं राज-निवेसितं पीथुंडं गदभ नंगलेन कासयति (।★) जन (प) द-भावनं च तेरस-वस-सत-कतं भि (ं) दति त्रमिर-दह (?)-संघातं (।★) बारसमे च वसे………… (सह) सेहि वितासयति उतरापथ-राजानो…

१२ म (ा) गधानं च विपुलं भयं जनेतो हथसं गंगाय पाययति (।★) म (ग) ध (ं) च राजानं बहसतिमितं पादे वंदापयति (।★) नंदराज-नीतं च का(लि)ंग-जिनं संनिवेस….अंग-मगध-वसुं च नयति (।।★)….

१३ ….(क) तु (ं) जठर-(लखिल-(गोपु) राणि सिहराणि निवेसयति सत-विसिकनं (प) रि-हारेहि (।★) अभुतमछरियं च हथी-निवा(स)परिहर….हय-हथि-रतन-(मानिकं) पंडराजा….(मु)त-मनि-रतनानि आहरापयति इध सत-(सहसानि)

१४ ….सिनो वसोकरोति (।★) तेरसमे च वसे सुपवत-विजय-चके कुमारीपवते अरहते [हि★] पखिन-सं(सि)तेहि कायनिसीदियाय यापूजावकेहि राजभितिनि चिन-वतानि वास (ा) (सि)तानि पूजानुरतउवा (सग-खा)रवेलसिरिना जीवदेह(सयि)का परिखाता (।।★)

१५ ….सकत-समण सुविहितानं च सव-दिसानं ञ(नि) नं (?) तपसि-इ(सि)न संघियनं अरहतनिसीदिया-समीपे पाभारे वराकार-समुथा-पिताहि अनेकयोजना-हिताहि….सिलाहि..

१६ ……..चतरे च वेडुरिय-गभे थमे पतिठापयति पानतरीय-सत-सहसेहि (।★) मु(खि)-य कल-वोछिनं च चोय(ठि)-अंग संतिक (ं) तुरियं उपादयति (।★) खेम-राजा स वढ-राजा स भिखु-राजा धम-राजा पसं(तो) सुनं-(तो) अनुभव (तो) कलानानि

१७ ….गुण-विसेस-कुसलो सव-पासंड-पूजको सव-दे(वाय)तन-सकारकारको अपतिहत-चक-वाहनबलो च धरो गुतचको पवतचको राजसिवसू-कुल-विनिश्रितो महाविजयो राजा खारवेलसिरि (।।★)

खारवेली महिषी का मचपुरी लेख

बही | बही

१ अरहंत पसादाय कलिंगा(न) (सम)नानं लेन कारितं (।★) राजिनो ललाक(स)

२ हथि(सि)हस पपोतस धु(तु)ना(या?) कलिंग-च (कवतिनो सिरिखार★)वेलस

३ अगमहिसि(य?)ा (कारितं) (।।★)

मौखरि वंशी बड़वा यूप लेख

ए० इ० भा० २३ पृ० ५२

भाषा—संस्कृत
लिपि—ब्राह्मी

प्राप्ति-स्थान—राजस्थान
काल—ई० पू० दूसरी शता०

[१]

१ सिद्धं (★।) क्रितेहि २०० [+ ★]९०[+ ★] ५ फ(।–)ल्गुणशुक्लस्य पञ्चे दि० श्रि-महासेनापतेः मोखरेः बल-पुत्रस्य बलवर्द्धनस्य यूपः (।★) त्रिरात्र-संमितस्य दक्षिण्यं गवां सहस्त्रं (१०००) (।★)

[२]

१ सिद्धं (।★) क्रितेहि २००[+ ★]९०[+ ★]५ फ(ा)ल्गुण-शुक्लस्य पञ्चे दि० श्री-महासेनापतेः मोखरेः बल-पुत्रस्य सोमदेवस्य यूपः (★।) त्रिरात्र-संमितस्य दक्षिण्यं गव (ां) सह (स्रं) (१०००)-(।★)

[३]

१ क्रितेहि २००[+ ★]९०[+ ★]५ फ(★ा)ल्गुण-शुक्लस्य पञ्चे (f)-द० श्रीमहा-सेनापते (:★) (मो)खरे-

२ बल-पुत्रस्य बलसिंहास्य यूपः (★।) त्रिरात्र-संमितस्य दक्षिण्यं गवां सहस्रं (१०००) (।★)

सातवाहन अभिलेख

मौर्यों के पश्चात् दक्षिण भारत पर प्रभुत्व स्थापित करने वाले शासक सातवाहन नाम से प्रसिद्ध हैं। पुराणों में इन्हें आंध्रभृत्य कहा गया है। किन्तु अभिलेखों के आधार पर इसे सातवाहन वंश पुकारते हैं। डा० मिराशी का मत है कि इस वंश के आदिपुरुष का नाम सातवाहन था जिस कारण इस वंश का यह नाम पड़ा। जैसे गुप्त के नाम से ही गुप्तवंश विख्यात हुआ। इस निर्णय पर पहुँचने में मुद्रा लेख सहायता करते हैं। एक सिक्के पर 'सडवाहनस' खुदा मिला है जिसका सातवाहन रूप बन सकता है। इतना ही नहीं नासिक गुहा लेख में गोतमीपुत्र शातकर्णि "सातवाहन कुल यस पतिथापन करस" (सातवाहन कुल की मर्यादा को स्थापित करने वाला) पदवी से विभूषित किया गया है। इसलिए पुराण के आंध्रजातीय तथा अभिलेखों के सातवाहन दोनों एक ही प्रतीत होते हैं।

तिथियाँ

सातवाहन अभिलेखों में तिथियाँ राज्यकाल में दी गई हैं। गोतमीपुत्र शातकर्णि के नासिक लेख में १८ तथा २४ तिथि उल्लिखित हैं। पुलमावि के नासिक लेख १९ तथा २२वें वर्ष में खोदे गये थे। उसके कार्ले गुहा लेख में २४ तिथि मिलती है। वहीं उसके उत्तराधिकारी यज्ञश्री के लेख में ७ का अंक मिलता है। अमुक राजा ने १९, २२ या २४ वर्ष तक राज्य किया। इन तिथियों का सम्बन्ध किसी संवत् से नहीं है। सातवाहन राजाओं की क्षत्रप शासकों से समकालीनता के आधार पर तिथि निश्चित की जाती है। इसमें नासिक गुहा लेख तथा गिरनार का शिलालेख का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। नहपान के लेखों में तथा सिक्कों की तिथियाँ शक संवत् (ई० स० ७८) में दी गई हैं अतएव नासिक गुहा लेख की तिथि ४२ तथा जूनार के लेख में उल्लिखित ४६ का सम्बन्ध शक काल से जोड़ा जाता है। इस प्रकार ई० स० १२० (४२ + ७८) तथा ई० स० १२४ (४६ + ७८) की तिथि नहपान के लिए निश्चित हो जाती है। सातवाहन नरेश पुलमावि के नासिक गुहा लेख से ज्ञात होता है कि

गोतमीपुत्र शातकर्णि ने नहपान को परास्त किया था। खखरात बस निरवसेस करस (क्षहरात यानी नहपान के वंश को नष्ट कर दिया) का उल्लेख क्षत्रपों के पराजय को पुष्ट करता है। इस कारण नहपान को परास्त कर ई० स० १२४ के पश्चात् गोतमीपुत्र शातकर्णि का अधिकार महाराष्ट्र पर सिद्ध हो जाता है। इसके पश्चात् वाशिष्ठीपुत्र पुलमावि (शातकर्णि का पुत्र) सिंहासन पर आया। उसके नासिक गुहा लेख में १९ तिथि (शासन वर्ष) का उल्लेख है यानी पुलमावि उन्नीस वर्षों तक शासन करता रहा। वह ई० स० १३० के आसपास सिंहासन पर बैठा और १९ वर्ष राज्य किया जिस कारण गुहा लेख ई० स० १४९ (१३० + १९) में अंकित किया गया होगा। क्षहरात नहपान के पश्चात् तथा सातवाहन पराजय के बाद कार्दमक वंश (रुद्रदामन का वंश) का अधिकार मालवा, गुजराज, काठियावाड़ पर हो गया था। (जूनागढ़ के लेख का विस्तृत अध्ययन करें)

तात्पर्य यह है कि शक लोगों ने सातवाहन राजा शातकर्णि के वंशज को हरा कर पुनः क्षत्रपों का स्वामित्व स्थापित कर दिया। इसी बात की पुष्टि रुद्रदामन के गिरनार लेख से होती है। उसमें वर्णन आता है कि रुद्रदामन ने दक्षिणापथपति सातकर्णि (पुलमावि) को दो बार युद्ध में परास्त किया किन्तु सम्बन्धी (जामाता) होने के कारण निर्मूल नहीं किया। रुद्रदामन ने पुलमावि को हराया जिसकी तिथि शककाल ७२ यानी ई० स० १५० (७२ + ७८) का उल्लेख किया गया है। अतएव रुद्रदामन तथा वाशिष्ठी पुत्र पुलमावि समकालीन हुए। ऊपर सातकर्णि के उन्नीस वर्ष बाद पुलमावि ई० स० १४९ में शासक था और रुद्रदामन ने उसे ई० स० १५० में परास्त किया। इस रीति से नहपान के तथा रुद्रदामन के समकालीन क्रमशः गोतमीपुत्र शातकर्णि तथा वाशिष्ठी पुत्र पुलमावि हो जाते हैं। कार्ले गुहालेख के आधार पर पुलमावि की तिथि २४ = ई० स० १५४ हो जाती है।

क्षत्रप-सातवाहन संघर्ष

ऊपर इस बात की चर्चा की जा चुकी है कि ई० सन् के पूर्व सदियों में सातकर्णि मालवा, महाराष्ट्र एवं आंध्र प्रदेश का शासक था जिसका नाम नानाघाट के गुहा लेख में मिलता है। रानी नायनिका ने वैदिक यज्ञ के सम्बन्ध में सातकर्णि का नामोल्लेख किया है। उसी के पश्चात् क्षत्रप उत्तर पश्चिम भारत से आकर पश्चिमी भारत में शासन करने लगे। नहपान के गुहालेख (नासिक, कार्ले तथा जूनार) उसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। उन वंशों के अभिलेखों का अध्ययन राजनैतिक उथल पुथल या उत्थान एवं पतन का इतिहास बतलाता है। नहपान को गौतमीपुत्र शातकर्णि ने परास्त किया तथा महाराष्ट्र पर पुनः सातवाहन अधिकार सुदृढ़ हो गया। यह शत्रुता यहीं समाप्त न हो सकी। शातकर्णि के पुत्र वाशिष्ठी पुत्र पुलमावि (ई० स० १५०) पुनः रुद्रदामन द्वारा हराया गया—

दक्षिणापथपतेः सातकर्णि द्विरपि नीर्व्याजमवजीत्यावजीत्य संबंधावि सुरतया अनुत्साहन-प्राप्त यशसा प्राप्त विजयेन (जूनागढ़ का शिलालेख) इस प्रकार क्षत्रपों का पुनः अधिकार हो गया। वाशिष्ठी पुत्र पुलमावि के हार जाने पर क्षत्रप शासक शान्त न रह सके। उनको दुबारा सातवाहन नरेश से युद्ध करना पड़ा। रुद्रदामन को पराजित कर यज्ञश्री शातकर्णि ने सातवाहन प्रतिष्ठा पुनः वापस ली। नासिक लेख तथा कार्ले लेखों से महाराष्ट्र पर उसके विजय की बातें प्रमाणित होती हैं। इसकी पुष्टि यज्ञश्री के चाँदी के सिक्कों से होती है जो

क्षत्रप मुद्रा के अनुकरण पर चलायी गयी थी। सातवाहन चाँदी के सिक्के यज्ञश्री ने चलाया जिसका आकार तथा तौल (अर्द्धद्रम = ३२ ग्रेन) क्षत्रप सिक्कों के सदृश है। अतएव वंश परम्परागत शत्रुता का बदला यज्ञश्री शातकर्णि ने लिया तथा क्षत्रपों को हानि पहुँचाई। यज्ञश्री द्वारा पराजित होकर क्षत्रप निर्मूल न हो सके। गुजरात, काठियावाड़ में शासन करते रहे। सातवाहन वंश में यज्ञश्री शातकर्णि के उत्तराधिकारी राजा शक्तिहीन थे। अतः क्षत्रपों को अवसर मिला। उन्होंने ई० स० २०० के समीप क्षत्रप शक्ति को पुनः प्राप्त किया। सातवाहन वंश के विभक्त हो जाने के कारण उन शासकों को शक्ति संचार का अवसर न मिल सका। ऐसी परिस्थिति में क्षत्रप दो सौ वर्षों तक पश्चिमी भारत में राज्य करते रहे। अंत में गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य ने क्षत्रप शासन का अन्त कर दिया। यह घटना ई० स० ४०२ में हुई (उदयगिरि गुहालेख)

सातवाहन शासक ब्राह्मण थे जिसका उल्लेख नासिक गुहालेख में "एक ब्राह्मण" शब्द द्वारा किया गया है। उसी स्थान पर "खतिय दय मान मदनस" वाक्य भी उल्लिखित है। क्षत्रियों से उनकी शत्रुता का आभास मिलता है। अस्तु, 'विनिवतित चातुवण संकरस, वाक्य से यह स्पष्ट प्रकट होता है कि समाज में चार वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) की स्थिति अवश्यमेव थी। अन्तर्जातीय विवाह (वर्णसंकर) का सातवाहन नरेश ने निषेध किया था। इसका विस्तृत ज्ञान तत्कालीन नासिक लेखों के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है। उनके अनुशीलन से प्रकट होता है कि पौराणिक मतों का समाज में आदर था। महापुरुषों का सम्मान था, इसी कारण नाभाग, नहुष, जनमेजय, राम, केशव आदि का विवरण मिलता है। नासिक गुहालेख में गौतमी पुत्र शातकर्णि इन महापुरुषों के समान तेजस्वी कहा गया है। पौराणिक परम्परा के कारण देवताओं की पूजा अवश्य प्रचलित होगी। यद्यपि लेखों में इस बात का उल्लेख नहीं है तथापि उस संदर्भ में यह सुझाव मान्य होगा।

सामाजिक तथा धार्मिक दशा

अभिलेखों में ऐसे वर्णन की स्थिति में यह कथन युक्तिसंगत होगा कि सातवाहन नरेश वैदिक परम्परा के मानने वाले थे। नानाघाट लेख में अनेक वैदिक यज्ञ तथा दक्षिणा का विवरण आया है। नासिक गुहालेख में ब्राह्मण मत के प्रचार की बातें उल्लिखित हैं। ऐसी परिस्थिति में भी शासक सहिष्णु थे। गुहा निर्माण कर बौद्ध भिक्षु संघ को दान में दे दिया था।

एत च लेण महादेवी—ददाति निकाय भदावनीयान भिखु सघस।

सस च भिखुसघस आवासो दसोति (नासिक गुहालेख)

बौद्धधर्म के प्रचार की बातें वास्तुकला से भी प्रमाणित होती हैं। सातवाहन राज्य में (आंध्र प्रदेश में) अमरावती का प्रसिद्ध स्तूप बनाया गया। सांची के दक्षिण तोरण का निर्माण सातकर्णि के शासन काल में हुआ था। उन नरेशों ने ब्राह्मण धर्म का पालन करते हुए लेखों को प्राकृत में ही खुदवाया था संस्कृत में नहीं इससे प्रकट होता है कि परिस्थिति को ध्यान में रख कर राजा कार्य करता रहा (क्षत्रप लेख प्राकृत में खुदे थे) शासक वैदिक परम्परा तथा ब्राह्मण मत का अनुयायी होकर भी सहिष्णु था। इसी कारण सातवाहन अभिलेखों में लेण (गुहा) दान का पर्याप्त विवरण मिलता है। नासिक गुहा लेखों में भिक्षुसंघ

(भदावनीय शाखा) को लेणदान का उल्लेख है। कार्ले लेख में बलूरक शाखा (संघ) को गुहादान का वर्णन है। मण्डपदान का भी विवरण पुलमावि के लेखों में है। ग्रामदान का वर्णन तो सर्वत्र मिलता है। सातवाहन नरेशों की यही विशेषता थी।

सातवाहन वंशी लेख

दक्षिण पश्चिम भारत

नानाघाट गुहा चित्र लेख

आ. स. पश्चिमी भारत भा. ५ पृ० ६४

भाषा—प्राकृत | प्राप्ति-स्थान—पूना के समीप

लिपि—ब्राह्मी | काल—ई० पू० पहली शता०

[१]

१ राया सिमुक-सातवाह- २ नो सिरिमातो (।।★)

[२]

१ देवि-नायनिकाय रञो २ च सिरि-सातकनिनो (।।★)

[३]

१ कुमारो भा- २ य....(।।★)

[४]

महारठि त्रनकयिरो (।।★)

[५]

कुमरो हकुसिरि (।।★)

[६]

कुमारो सातवाहनो (।।★)

नागनिका का नानाघाट गुहालेख

वही | वही | वही

१ (सिधं ।★)....नो धंमस नमो ईदस नमो संकंसन-वासुदेवानं चंद-सूरानं (महि) मा (व) तानं चतुं नं चं लोकपालानं यम-वरुन-कुबेर-वासवानं नमो (।।★) कुमारवरस ख (व) सिरिस र (ञो)

२ ....(व) ीरस थेरस अ-प्रतिहत-चकस दखि (नप★) ठ-(पतिनो★)....

३ (मा)....(बाला★) य महारठिनो अंगिय-कुल-वधनस सगर-गिरिवर-वल (या) य पथविय पथम-वीरस वस....य व अलह (वंतठ ?)....सलसु....महुतो मह....

४ सिरिस....भारिया देवस पुतदस वरदस कामदस धनदस (सब) सिरि-मातु सतिनो सिरिमतस च मातु (य) सीम........

५ वरिय...। (न) ागवर-दयिनिय मासोपवासिनिय गह-तापसाय चरित ब्रह्मचरियाय दिख व्रत-यंञ-सुंडाय यञा हुता धूपन-सुगंधा य निय........

६ रायस....(य★) ञेहि यिठं (।★) वनो । अगाधेय यंञो द (खि) ना दिना गावो बारस १० [+ ★] २ असो च १ (।★) अनारभनियो यंञो दखिना धेनु....

७ ....दखिनायो दिना गावो १००० [+ ★] ७०० हथी १०.......

८ ....स....ससतरय (व) ासलठि २०० [+ ★] ८० [+ ★] ६ कुभियो रुपामयियो १० [+ ★] ७ भि........

९ ....रिको यंञो दखिनायो दिना गावो १०००० [+ ★] १००० असा १००० पस (पको★)....

१० ....१० [+ ★]२ गमवरो १ दखिना काहापना २०००० [+ ★] ४०००[+ ★] ४०० पसपको काहापना ६०००।-राज (सुयो यंञो★)........सकटं द्वितीय अंश

११ धंञगिरि-तंस-पयुतं सपटो १ असो १ अस-रथो १ गावीनं १०० (।★) असमेधो यंञो बितियो (यि★) ठो दखिनायो (दि) ना असो रुपाल- (का) रो १ सुवंन....नि १० [+ ★] २ दखिना दिना काहापना १०००० [+ ★] ४००० गामो १ (हुठि).... (दखि) ना दि (ना)

१२ गावो—सकटं धंञगिरितस-....पयुतं....(।★) ★ोवायो यंञो........१० [+ ★] ७ (धेनु?) ....(★) ो (★) ोवाय....सतरस

१३ ....१० [+ ★]७ अच....न....लय....पसपको दि (नो)........(दखि) ना दिना सु....पीनि १० [+ ★] २ अ (?) सो रुप (ाल) कारो १ दखिना काहाप (ना) १००००........२

१४ ....गावो २०००० (।★) (भगल)-दसरतो यंञो यि (ठो) (दखिना) (दि) ना (गावो) १०००० । गर्गतिरतो यञो यिठो (दखिना)........पसपको पटा ३०० । गवामयनं यञो यिठो (दखिना दिना) गावो १००० [+ ★] १०० । ....गावो १००० [+ ★] १०० (?) पसपको काहापना....पटा १०० (।★) अतुयामो यञो....

१५ ....(ग) वामयनं य (ञो) दखिना दिना गावो १०००० [+ ★] १०० । अंगीरस (ा) मयनं यञो यिठो (द) खिना गावो १००० [+ ★] १०० । त........(दखिना दि) ना गावो१००० [+ ★] १०० । सतातिरतं यञो......१००....(।★)....(य)ञो दखिना ग (ा) (वो) १००० [+ ★] १०० (।★) अंगिरस (ति) रात्र: यञो यिठो (दखि) ना गा (वो)....(।★)....

१६ ....(गा) वो १००० [+ ★] २ (।★) छन्दोमप (व) मा (नतिरात्र:) दखिना गावो १००० । अं (गि) र (सतिर) तो यं(ञो) (यि) ठो द (खिना).... रतो यिठो यञो दखिना दिना....(।★)....तो यंञो यिठो दखिना....(।★)....यञो यिठो दखिना दिना गावो १००० ।

१७ ....न स सयं........दखिना दिना गावो........त....(।★) (अं) गि (रसा) मयनं छवस........(दखि) ना दिन गाव १०००....(।★)....(दखिना) दिना गावो १००० । तेरस........अ....(।★)

१८ ......(।★) तेरसरतो स....छ....(अ)ग-दखिना दिना गावो....(।★)....वसरतो म....(दि) ना गावो १०००० । उ...........१००० । द....

१९ ....(यं) ञो दखिना दि (ना) ....

२० ....(द) खिना दिना........

गोतमी पुत्र शातकर्णि का नासिक गुहालेख

भाषा—प्राकृत | प्राप्ति-स्थान—नासिक, महाराष्ट्र

लिपि—ब्राह्मी | काल—ई० स० दूसरी शताब्दी

(तिथि १८ वें वर्ष)

ए० इ० भा० ८ पृ० ७१

१ सि (धं ((॥★) सेनाये (व) जयं (त) ये विजय-खधावारा (गो) वधनस बेना-कटक-स्वामि गोतमि-पुतो सिरि-सदकणि

२ आनपयति गोवधने अमच (बिराहु) पालितं (।★) गामे अपर-कखडि (ये) (य) खेतं अजकालकियं उसभदातेन भूतं निवतन

३ सतानि बे २०० एत अम्ह-खेत निवतण-सतानि बे २०० इमेस पवजितान तेकिरसिण वितराम (।★) एतस चस खेतस परिहार

४ वितराम अपावेसं अनोमस अलोण-खा (दकं) अरठसविनयिकं सवजा-तपारिहारिक च (।★) ए(ते)हि नं परिहारेहि परिह (र) हि (।★)

५ एते चस खेत-परिहार (रे) च एथ निबधापेहि (।★) अवियेन आणतं (।★) अम-चेन सिवगुतेन छतो (।★) महासमियेहि उपरखितो (।★)

६ दता पटिका सवछरे १० (★।) ८ वास-पखे २ दिवसे १ (।★) तापसेन कटा (॥★)

गोतमी पुत्र शातकर्णि का नासिक गुहालेख

(तिथि २४वें वर्ष) वही

वही | वही

१ सिद्धं (॥★) गोवधने अम(च)स सामकस (दे)यो (रा)जाणितो (।★)

२ रञो गोतमिपुतस सातकणि (स) म(ह) देवोय च जीवसुताय राजमातुय वचनेन गोवधने (अम★) चो सामको आरोग वतव (।★) ततो एव च

३ वतवो (।★) एथ अम्हेहि पवते तिरण्हुम्हि अम्ह-धमदाने लेणे पतिवसतानं पवजितान भिखन गा(मे) कखडीसु पुव खेतं दत (।★) त च खेत

४ (न) कसते (।★) सो च गामो न वसति (।★) एवं सति य दानि एथ नगर-सीमे राजकं खेतं अम्ह-सतकं ततो एतेस पवजितान भिखूनं तेरण्हुकानं दद(म)

५ खेतस निवतण-सतं १०० (।*) तस च खेतस परिहार वितराम अपावेस अनोमस अ-लोण-खादक अ-रठ-सविनयिक सव-जात-पारिहारिक च (।*)

६ एतेहि न परिहारेहि परिहरेठ (।*) एत चस खेतपरीहा(रे) च एथ निबधापेथ (।*) अवियेन आणत (।*) पटिहार (र*)-रखिय लोटाय छतो लेखो (।*) सवछरे २० [+ *] ४

७ वासान पखे ४ दिवसे पचमे ५ (।*) सुजिविना कटा (।*) निबधो-निबधो सवछरे २० [+ *] ४ गिहान पखे २ दिवसे १० (॥*)

पुलमावि का कार्ले गुहालेख

वही वही

(तिथि ७वें वर्ष)

१ रञो वासिठिपुतस सामि-सिरि-(पुलुमाविस*) सवछरे सतमे ७ गिम्ह-पखे पचमे ५

२ दिवसे पथमे १ एताय पुवाय ओखलकियानं महार(थि) स कोसिकिपुतस मित-देवस पुतेन

३ (म*) हारथिना वासिठिपुतेन सोमदेवेन गामो दतो वलुरक-संघस वलुरक-लेनस स-करुकरो स-देय-मेयो (॥*)

पुलमावि का नासिक गुहालेख

वही वही

(तिथि १९वें वर्ष)

१ सिद्धं (॥*) रञो वासिठीपुतस सिरि-पलुमायिस सवछरे इकुनवीसे १० [+ *] ९ गीम्हाणं पखे बितीये २ दिवसे तेरसे १० [+ *] ३ राजरञो गोतमी-पुतस हिमव (त)-मेरु

२ मंदर-पवत-सम-सारस असिक-असक-मुलक-सुरठ-कुकुरापरंत-अनुप-विदभ-आकारावंति-राजस विभछवत-पारिवात-सय्ह (ह्य)-कण्हगिरि-सचसिरि-टन-मल-यमहिव-

३ सेटगिरि-चकोर-पवत-पतिस सवराज (लोक) म (ं) डल-पतिगहीत-सासनस दिवसकर-(क) र-बिबोधित-कमलविमल-सविस-वदनस तिसमुद-तोय-पीत-वाहनस पतिपू (ं) ण-चद-मडल-ससिरीक-

४ पियदसनस वर-वारण-विकम-चारु-विकमस भुजगपति भोग-पीन-वाट-विपुल-दीघ-सुद (र*)-भुजस अभयोदकदान-किलिन-निभय-करस अविपन-मातु-सुसूसाकस सुविभत-तिवग-देस-कालस

५ पोरजन-निविसेस-सम-सुख-दुखस खतिय-दप-मान-मदनस सक-यवन-पल्हव-निसूदनस धमो-पजित-कर-विनियोग-करस कितापराने पि सतु-जने अ-पाणहिसा-रुचिस दिजावर-कुटूब-विवध-

६ नस खखरात-वस-निरवसेस-करस सातवाहनकुल-यस-पतिथापन-करस सव-मंडला-भिवादित-च (र*) णस विनिवतित-चातुवण-संकरस अनेक-समरावजित-सतु-सघस अपराजित-विजयपताक-सतुजन-दुपधसनीय-

७ पुरवरस कुल-पुरिस-परपरागत-विपुल-राज-सदस आगमान (नि)लयस सपुरिसानं अस-यस सिरी(ये) अधिठानस उपचारान पभवस एककुसस एक-धनुधरस एक-सूरस एक-बह्मणस राम-

८ केसवाजुन-भीमसेन-तुल-परकमस छण-धनुसव-समाज-कारकस नाभाग-नहुस-जनमेजय-सकर-य(या)ति-रामाबरीस-सम-तेजस अपरिमितमखयमचितभुत पवन-गरुल-सिध-यख-राखस-विजाधर-भूत-गंधव-चारण-

९ चद-दिवाकर-नखत-गह-विचिण-समरसिरसि जित-रिपु-सघस नागवर-खधा गगनतल-मभि-विगाढस कुल-विपु(लसि) रि-करस सिरि-सातकणिस मातुय महादेवीय गोतमीय बल-सिरीय सचवचन-दान-खमाहिसा-निरताय तप-दम-निय-

१० मोपवास-तपराय राजरिसिवधु-सदमखिलमनुविधीयमानाय कारित देयधम (केलासपवत★) सिखर-सदिसे (ति)रण्हु-पवत-सिखरे विम-(ान★) वर- निविसेस-महिढीकं लेण (।★) एत च लेण महादेवो महाराज-माता महाराज-(पि)तामहो ददाति निकायस भदाव-नीयान भिखु-सघस (।★)

११ एतस च लेण(स) चितण-निमित महादेवीय अयकाय सेवकामो पिय-कामो च ण(ता) ★ ★ ★ ★ (दखिणा) पथेसरो पितु-पतियो धमसेतुस (ददा)ति गामं तिरण्हु-पवतस अपर-दखिण-पसे पिसाजिपदक सव जात-भोग-निरठि (॥★)

पुलमावि का नासिक गुहालेख

वही | वही

(तिथि २२ वें वर्ष) वही

१ सिद्धम् । नवनर-स्वामी वासिठी-पुतो सिरि- पुलुमवि (आ) नपयति गोवधने आमच

२ सिवखदिल य अ (म्हे हि) सव १० [+★] ९ गि प २ दिव १० [+★) ३ धनकट-समनेहि यो एथ (पवते) तिर (ण्हुम्हि★)....न धं (म) सेतुस (ले) णस पटिसंथरणे (दत) अखय(नीवि★)-हेतु एथ गोवधनाहारे दखिण-मगे गामो सुदिसणा भिखुहि देवि-लेण-वासीहि निकायेन भदायनियेहि (प)तिगय दतो (।★) एतस दान-गामस सुदिसन (स) परिवटके एथ गोवधन(हारे) पुव-मगे

३ गाम समलिपद ददाम (।★) एत त मह-अइरकेन ओदेन धमसेतुस लेणस पटिसंथरणे अखय-निवि-हेतु गाम सामलिप(द) (भिखुहि देवि)–लेण-(वासीहि★) (निका)-येन भदायनियेहि पति(ग)ह्-(ओ) यप (पे)हि (।★) एतस च गामस सामलि-(पदस भिखुहल-परिहार)

४ वितराम अपा(वे)स अनोमस अ(लो)णखादक अरठसविनविक सवजात-पारि-हारिक च (।★) एतेहि न परिहारेहि परिहरेहि (।★) एत च गाम- समलिपद-प (रि) हारे च एथ निबधापेहि सु (दिसन) गामस च (।★) सुदिसना (स)-विनिब (ध★) कारेहि अणता (।★) महासेनापतिना मेधुनेन....ना छतो (।★) बटि (का)....केहि ....तो (।★) दता पटिका सव २२ गि पखे★ दिव ७ (।★) ★ तकणिना कटा (।★) गोवधन-वाथवान फा(सुकाये) विराहुपालेन स्वामि-वणन णत (।★) नम भगव-सपति पवपस जिनवरस बुधस (॥★)

पुलमावि का कार्ले गुहालेख

भाषा—प्राकृत
प्राप्ति-स्थान—पूना के समीप-महाराष्ट्र
लिपि—ब्राह्मी
काल—ई० स० दूसरी शता०

(तिथि २४वें वर्ष)

ए० इ० भा० ७ पृ० ६१

१ सिध (।*) रञो वासिठिपुतस सिरि-पुलुमाविस सवछरे चतुविसे २० [+ *]४ हेमंतान पखे ततिये ३ दिवसे बि-

२ तिये २ उपासकस हरफरणस सेतफरण-पुत्तस्य सोवसकस्य अबुलामाय वथवस्य इम देयधम मडपो

३ नव-गभ माहासघियानं परिगहो सघे चातुदिसे दिन मातापितुनं पुजा-(ये*) सब-सतानं हित-सुघ-स्थतये (।*) एक (वि) से सं-

४ वछरे निठितो सहेत च मे पुन बुधरखितेन मातर चस्य दि....उपासिकाय (।*) बुध-रखितस मातु देयधंम पिठो अनो (।।*)

यज्ञ शातकर्णि का नासिक गुहालेख

वही
प्राप्ति-स्थान—नासिक महाराष्ट्र

(तिथि ७वें वर्ष)

ए० इ० भा० ८ पृ०९४

१ सिधं (।*) रञो गोतमिपुतस सामि-सिरि-यञ-सातकणिस सवंछरे सातमे ७ हेमताण पखे ततिये ३

२ दिवसे पथमे कोसिकस महासे(णा)पतिस (भ)वगोपस भरिजाय माहसेणापतिणिय वासुय लेण

३ बोपकि-यति-सुजमाने अपयवसित-समाने बहुकाणि वरिसाणि उकुते पयवसाण नितो चातुदि-

४ सस च भिखु-सघस आवसो दतो ति ।।

अध्याय १५

शक, पह्लव तथा कुषाण वंशी लेख

ईरानी तथा यूनानी लोगों के अतिरिक्त भारत पर जिन विदेशियों ने आक्रमण किया, उन सभो का मूल स्थान चीन के पश्चिमी भूभाग यानी मध्यएशिया का पूर्वी प्रदेश माना जाता है। भारत में यूनानी शासन का अन्त ईसवी सन् पूर्व पहली सदी में हुआ जिसमें मध्य एशिया के खानाबदोश जाति का विशेष हाथ था। चीन के इतिहास का अनुशीलन यह बतलाता है कि भारतीय ईरानी वंश के युईची नामक जाति मंगोलिया के उत्तरी पूर्वी भाग पर शासन कर रही थी। हूण राजा चियू युईची को बुरी तरह परास्त किया, इस कारण पराजित समूह तितर-बितर हो गया। उनके दो विभाग हो गए—बड़ा युईची तथा छोटा युईची समूह। पहला समूह पश्चिम की ओर चला गया तथा छोटे युईची तिब्बत के भूभाग में प्रवेश कर गए। बड़ी युईची जाति को पुनः पराजित होना पड़ा और पश्चिम की दिशा में उन्होंने सई (शक) लोगों पर विजय प्राप्त की ।

विदेशी जातियों का भारत आगमन

विद्वानों का मत है कि शक लोगों ने बल्ख के भूभाग पर अधिकार कर यूनानी शासन का अंत कर दिया था। किन्तु युईची जाति के लगातार आक्रमण से शक लोग शान्त न बैठ सके और उन्हें बल्ख (बैक्ट्रिया) को छोड़ना पड़ा। उसी समय शक जाति दो शाखाओं में बँट गई। एक शाखा काबुल तथा हेरात होकर सिस्तान (शकस्थान) में निवास करने लगी।

ईरान के उत्तर पश्चिम में पार्थिया नामक राज्य था। जस्टिन का कथन है कि पार्थिया के शासकों ने शक विस्तार को रोका। शक तथा पार्थिया के शासकों में युद्ध हुआ। प्रारम्भिक अवस्थामें पार्थिया के शासक पराजित हुए थे किन्तु मिथ्रिडेट द्वितीय (ई० पू० १२३-८८) के शासन में पार्थिया को शक्ति का विकास हुआ और उसकी शक्ति के कारण ही शक सिथिया (शकस्थान) छोड़कर भारत में प्रवेश कर गये। इन्होंने कन्धार से बोलन दर्रा होकर सिन्ध में अपना प्रभुत्व स्थापित किया। उस वंश का पहला राजा मोग ई० पू० पहली सदी में भारत में शासन प्रारम्भ किया था। पौराणिक गाथाओं में शक तथा मुरुण्ड के नाम आते हैं। स्टेन कोनाफ का मत है कि शक तथा मुरुण्ड एक ही जाति के नाम हैं जो पूर्वी ईरान में बसे थे। दूसरी शाखा पार्थिया होकर भारत में आई जिसे पह्लव (पार्थियन) कहते हैं।

सिथिया (शकस्थान) से जो जाति-शक बोलन दर्रा होकर सिन्ध में आयी उसी ने उत्तर पश्चिम भाग (तक्षशिला का भूभाग) के शासक भारतीय यूनानी लोगों को नष्ट कर दिया। तक्षशिला के भाग में मोग, अयस, अजिलासेस अयस द्वितीय ने शासन किया था। तक्षशिला के पटिक द्वारा प्रसारित ताम्रपत्र (तिथि ७८) में मोग का नाम उल्लिखित है। यह काश्मीर प्रान्त पर भी शासन करता रहा। इस ताम्रपत्र की तिथि विक्रम संवत् से

सम्बद्ध की जाती है (७८–५७ = २३ ई०) इतना ही नहीं उस भू-भाग में अनेक लेखों की तिथि विक्रम संवत् में मिलती है। कलवान अभिलेख (खरोष्ठी) तिथि १३४ तथा तक्षशिला सिलवर स्क्रोल लेख तिथि १३६। जिस आधार पर मोग तथा उसके उत्तराधिकारियों की तिथि निश्चित की जाती है। इन शक राजाओं के नाम उनके सामन्त (क्षत्रप या महाक्षत्रप) के लेखों में पाए गए हैं। स्यात् पूर्वी ईरान से तक्षशिला तक इनका राज्य विस्तृत था। सम्भवतः इन लोगों ने ईरानी शासन पद्धति को अपनाया जिसके फलस्वरूप विभिन्न क्षत्रप (सामन्त) नियुक्त किए गए थे।

पहली सदी में उत्तर पश्चिम भारत में एक विशेष घटना हुई। विद्वानों का मत है कि दैवी प्रकोप (भूकंप) के कारण पार्थियन लोग भारत में आकर बस गये। पार्थियन राजा गुदफर ने पूर्वी ईरान से तक्षशिला पर अधिकार कर लिया। उस समय शक राजा अयस द्वितीय राज्य करता था जिसने गुदफर के भय से कुषाणों की शरण ली। किन्तु गुदफर की मृत्यु के पश्चात् अयस ने उत्तर-पश्चिम भारत तथा पश्चिमी पंजाब पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया और राज्य करता रहा। तख्ते बहाई लेख में गुदफर (गोन्डाफरनिस) का उल्लेख मिलता है जिससे पेशावर के भाग पर उसका शासन सिद्ध हो जाता है। पूर्वी ईरान से भारत आकर गुदफर ने केवल तक्षशिला के भू-भाग पर ही राज्य नहीं किया अपितु उसका राज्य सिस्तान, सिन्ध, दक्षिण पश्चिमी पंजाब, उत्तर पश्चिम का सरहदी सूबा तथा दक्षिणी अफ़-गानिस्तान तक विस्तृत रहा (मार्शल-तक्षशिला भा० १ पृ० ६०) गुदफर के सिक्के तक्षशिला तथा काबुल की घाटी से मिले हैं। चीनी इतिहास भी बतलाता है कि काबुल का भूभाग पह्लव लोगों के अधिकार में आ गया था। स्यात् काबुल का यूनानी शासक हरमेयस का अन्त गुदफर के हाथों हुआ था। हरमेयस के सिक्कों पर अग्रभाग पर उसकी आकृति खुदी है तथा पृष्ठभाग पर 'कुजुल कडफिस कुषाण यवुग' अंकित हैं। इस आधार पर अनुमान लगाया जाता है कि हरमेयस ने कुषाण राजा कुजुल से मित्रता कर गुदफर का सम्मिलित रूप से सामना किया था।

इस झगड़े में हरमेयस का अंत हो गया और गुदफर (पह्लव) तथा कुषाण राजा कुजुल में सन्धि हो गयी। तख्ते बहाई लेख (तिथि ४५ ई०) इस सन्धि वार्ता के पश्चात् अंकित किया गया होगा क्योंकि तख्ते बहाई लेख में स्टेन कोनाफ ने कम शब्द पढ़ा है जिसे वह कुजुल से एकीकरण करते हैं। यानी गुदफर के तक्षशिला विजय पश्चात् अभिलेख खुदा गया तथा पह्लव तथा कुषाण मित्र बन गए।

पह्लव नरेश गुदफर (गोन्डाफरनिस) की मृत्यु के पश्चात् उसका राज्य कुषाणों के हाथ चला आया। बेग्राम (उत्तरी अफगानिस्तान) की खुदाई से केवल गुदफर के सिक्के प्रकाश में आए हैं। जिससे स्पष्ट प्रकट होता है कि गुदफर की मृत्यु के पश्चात् काबुल का भाग किसी अन्य राजवंश के अधीन हो गया। इसका समर्थन पंजतर लेख (ई० स० ६४) से हो जाता है जिसके प्रमाण पर काबुल का क्षेत्र कुषाण अधिकार में स्वीकृत हो जाता है। चीनी इति-हास तो बतलाता है कि प्रथम कुषाण राजा कदफिसस प्रथम ने पार्थिआ, काबुल तथा काश्मीर पर विजय प्राप्त की। यानी सिन्ध नदी के पश्चिम का भाग (पार्थिया तक) कुषाण नरेश प्रथम कदफिसस के अधिकार में आ गया था।

यहाँ इस बात का उल्लेख अप्रासंगिक न होगा कि कुषाण राजा यूईची समूह के वंशज थे जिन्हें हूण जाति ने मध्यएशिया में परास्त किया था। पश्चिम की ओर बढ़कर बल्ख में अपना प्रभुत्व स्थापित किया। यूईची समूह को कालान्तर में कुषाण नाम से सम्बोधित किया गया। बल्ख (बैक्ट्रिया) से आगे बढ़ कर भारत की ओर आकृष्ट हुए। प्रथम कदफिसस (कुजुल) की मानसिक शक्ति का पता उसके कार्यों से प्रकट होता है। प्रथम उसने काबुल घाटी में हरमेयस (यूनानी राजा) से मित्रता की। संयुक्त रूप से सिक्के प्रचलित किए। कालान्तर में गुदफर से सन्धि कर अपनी शक्ति का परिचय दिया। यही कारण था कि तख्ते बहाई लेख में उसका नामोल्लेख है। मार्शल ने तक्षशिला क्षेत्र में (सिरकप का भाग) कुजुल के सिक्कों का ढेर प्राप्त किया था (तक्षशिला भा० १ पृ० ६७) जिस आधार पर गन्धार तथा तक्षशिला के भू-भाग पर कुषाणों का अधिकार सिद्ध हो जाता है। कुजुल कदफिसस अपने सपने को साकार न कर सका यानी राज्य का विस्तार अधूरा रह गया। कालवान ताम्रपत्र (तिथि १३४–५७ = ७७ ई०) में कुषाणों का उल्लेख नहीं मिलता। अतएव यह सुझाव उचित होगा कि ई० स० ७७ के पश्चात् द्वितीय कदफिस ने तक्षशिला पर अधिकार किया होगा इसके प्रमाण में तक्षशिला सिलवर स्क्रोल लेख तिथि १३६ (= ७९ ई०) का उल्लेख आवश्यक है जो तक्षशिला के क्षेत्र में कुषाण अधिकार को पुष्ट करता है।

कोलाफ तथा मार्शल का मत था कि वीम कदफिस ई० स० ७८ में गद्दी पर आया और उसने संवत् चलाया जो शक संवत् के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसी ने गन्धार तथा तक्षशिला जीत कर अपने पिता (कुजुल कदफिस) का सपना साकार किया। अतः यह कहना उचित होगा कि (१) ई० स० ६४ (पंजतर लेख) के पूर्व सिन्ध के पश्चिम में कुषाण शासक थे।

(२) ई० स० ७६/७ के समीप किसी दुर्घटनावश तक्षशिला थोड़े समय के लिए स्वतन्त्र हो गया।

(३) ई० स० ७९ में वीम ने गन्धार तक्षशिला क्षेत्र पर विजय प्राप्त किया। परन्तु वीम को शक संवत् का प्रवर्तक या जन्मदाता नहीं माना जा सकता। ई० स० ७८ (शक) ~~काल~~ का सम्बन्ध कनिष्क से मानते हैं। यानी उसी ने शक-संवत् चलाया। इस प्रकार शक, पह्लव तथा कुषाण भारत में प्रवेश कर शासन करते रहे।

इस विषय का उल्लेख किया गया कि शक वंशी राजाओं ने भारतीय यूनानी शासन को हटाकर उत्तर पश्चिम भारत में अपना प्रभुत्व स्थापित किया तथा शासन करने लगे। किन्तु दुर्भाग्यवश पह्लव नरेश गुदफर (गोंडाफरनिस) पश्चिमी पंजाब से तक्षशिला सिन्ध तथा सिस्तान पर अधिकार कर लिया जिस कारण शक लोगों को उत्तर पश्चिम भूभाग छोड़कर हटना पड़ा। शकों ने अपदस्थ हो जाने पर यत्र-तत्र अपना निवास स्थिर किया। उसी की एक शाखा पश्चिम भारत में पहुँची जो शक क्षत्रप के नाम से प्रसिद्ध हैं। चूँकि इनकी पदवी क्षत्रप (ईरानी पदवी) का उल्लेख गुहालेख या मुद्रालेख में मिलता है, इस कारण पश्चिमी भारत के शक क्षत्रप कहलाए। इनके दो वंशों का अभिलेख प्रकाश में आया है। क्षहरात वंश जिसमें भूमक तथा नहपान विख्यात शासक हुए और नासिक गुहालेख से नहपान के विषय में हमारी जानकारी हो जाती है। सम्भवतः इनका मूल निवास स्थान तक्ष-

शिला था। वहीं से विभिन्न स्थान में गये। मथुरा के एक लेख में क्षहरात घटाक का उल्लेख है। पटिक भी तक्षशिला में मोग के अधीन था। इस प्रकार क्षहरात सिथियन वंश से सम्बद्ध किए जा सकते हैं। इस क्षहरात के वंशज तक्षशिला छोड़ कर अन्यत्र चले गये जिनके लेख मथुरा तथा पश्चिमी भारत में मिले हैं। पश्चिमी भारत के क्षहरात क्षत्रप के सिक्कों पर अंकित चिन्ह मोग या अयस के सिक्कों पर दीख पड़ते हैं जो उनका अनुकरण हो सकता है। नहपान के अतिरिक्त क्षत्रप चष्टन तथा रुद्रदामन का अधिकार सौराष्ट्र तथा मालवा क्षेत्र पर था। इन्हें कार्दमक वंशी क्षत्रप कहते हैं। इन दोनों शक वंशी राजाओं के लेख शक-संवत् से ही सम्बद्ध हैं।

ईसवी सन् पूर्व पहली सदी से शक तथा कुषाण वंशी राजाओं के अभिलेख उत्कीर्ण मिलते हैं। भारत के अन्य लेखों के सदृश इन नरेशों ने प्रस्तर शिलाखण्ड, स्तम्भ, तथा प्रतिमा के अधोभाग पर लेख खुदवाया था। इस युग से महायान मत के प्रचार के कारण बौद्ध प्रतिमायें तैयार होने लगी थीं, अतः प्रतिमा की पीठ पर लेख खुदवाना स्वाभाविक घटना थी। कुषाण नरेशों के लेख बौद्ध तथा जैन प्रतिमाओं के आधार शिलाखण्ड पर उत्कीर्ण पाए गए हैं। बौद्धमत के प्रसार के कारण पश्चिमी भारत के सह्याद्रि पर्वतमाला में अनेक गुफाएँ खोदी गई। जिनकी आवश्यकता थी। अतएव शासकों ने उस कार्य में हाथ बँटाया और गुफाओं को संघ को दान दिया। यही कारण है कि नासिक, कार्ले, अजंता, कनहेरी तथा जूनार आदि गुफाओं के दीवाल पर विभिन्न शक राजाओं के उत्कीर्ण लेख प्रकाश में आये हैं। विदेशी जातियों की यह एक विशेषता थी कि उन्होंने अपने धार्मिक विचार भी उसके माध्यम से व्यक्त किया था। स्वर्ण या रजत सिक्कों पर भी शक, पह्लव तथा कुषाणों के मुद्रा-लेख उनके इतिहास जानने में अधिक सहायता करते हैं। अभिलेखों के लिखने का कोई निश्चित आधार न था। परिस्थितियों के अनुसार शासकों ने श्लाघनीय कार्य किया था। पटिक तथा अयस के ताम्रपत्र (कालवान) उसके उदाहरण हैं।

लेखों के आधार

विदेशी जातियाँ भारत के पश्चिमोत्तर प्रांत या सिन्ध-घाटी के मुहाने पर आकर बस गईं और क्रमशः शासक बन बैठीं। गान्धार तथा पंजाब का प्रांत ईसा पूर्व कई सदियों से ईरानी, यूनानी अधिकार में रहा अतएव वहाँ ईरानी प्रभाव स्पष्ट रूप से दीख पड़ता है। ईरान के प्राचीन शासकों ने फोनिशियन लोगों की लिपि (सेमिटिक) को अपनाया जो कालान्तर में खरोष्ठी के नाम से प्रसिद्ध हुई। उसका प्रभाव कई सदियों तक बना रहा। अशोक के दो लेख—मनसेरा तथा शाहबाजगढ़ी—सीमान्त प्रदेश में खरोष्ठी लिपि में ही खोदे गये, यद्यपि अन्य सारे अशोक के धर्मलेख ब्राह्मी में लिखे गये थे। उस भूभाग की प्रचलित लिपि को शक या कुषाण राजाओं को भी अङ्गीकार करना पड़ा। यही कारण था कि पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा पंजाब में जो लेख उपलब्ध हुए हैं, सभी खरोष्ठी में हैं। इस प्रसंग में ईरानी लेख सीमा के बाहर हैं। यूनानी नरेशों ने जब उस भूभाग पर शासन आरम्भ किया तो मुद्रालेख, दो लिपियों में अंकित कराया। अग्रभाग पर यूनानी अक्षर तथा पृष्ठभाग पर खरोष्ठी लिपि में मुद्रा-लेख। यूक्रतिद, मिलिन्द, अगथुकल, अंतिलिकित तथा हरमेयस के मुद्रा-लेख खरोष्ठी में भी उपलब्ध

भाषा तथा लिपि

हुए हैं। पह्लव राजा मोग तथा अयस के सिक्कों पर खरोष्ठी में लेख अंकित है। बिजौर रियासत का लेख का खरोष्ठी में होना स्वाभाविक था। यहाँ तक कि शकों के सामंत रंजुबल तथा सोडास उस लिपि को साथ लेते गये और मथुरा में खरोष्ठी लिपि का ही प्रयोग किया (मथुरा सिंह स्तम्भ लेख) वह विचार अधिक समय तक सबल न रह पाया और सोडास को स्थानीय लिपि (ब्राह्मी) को अपनाना पड़ा। मथुरा के अन्य सभी लेख सोडास ने ब्राह्मी लिपि में खुदवाया (ए० इ० भा० ९ पृ० २४७) शकों के प्रायः अन्य सभी लेख खरोष्ठी में ही मिलते हैं—जो पंजाब या पश्चिमोत्तर प्रांत से प्राप्त हुए हैं। कुषाण नरेश इस प्रथा से अछूते न रह सके। वीम का मुद्रा-लेख खरोष्ठी में अंकित है। कुषाणवंशी अभिलेखों को लिपि के आधार पर दो विभागों में विभक्त किया जा सकता है। कनिष्क तथा उसके उत्तराधिकारियों ने जितना लेख उत्तर पश्चिम भारत में उत्कीर्ण कराया, वह सभी खरोष्ठी में हैं। पंजाब से पूर्व प्रदेशों में उन्हीं शासकों के अभिलेख (प्रस्तर खण्ड, स्तम्भ या मूर्ति की पीठ) ब्राह्मी में अंकित उपलब्ध हुए हैं।

खरोष्ठी	ब्राह्मी
स्यूविहार, जेदा, आरा मानिक्याला, कुर्रम तथा वार्डक	कनिष्क—सारनाथ कौशाम्बी सहेतमहेत हुविष्क—मथुरा, प्रतिमा लेख; लखनऊ, जैन प्रतिमा लेख

शक क्षत्रपों में नहपान का युग विशेषतया उल्लेखनीय है। यह तो निर्विवाद है कि सर्वप्रथम क्षत्रप नरेशोंने कुषाणों के सामंत होने के कारण खरोष्ठी का प्रयोग मुद्रा-लेख के लिए किया था किन्तु स्थानीय आवश्यकता के कारण नहपान ने ब्राह्मी की शरण ली। उसके नासिक गुहालेख ब्राह्मी में खुदे हैं। महाक्षत्रप रुद्रदामन के मुद्रालेख तथा प्रशस्ति (संस्कृत) ब्राह्मी में उत्कीर्ण हुई।

आश्चर्य तो यह है कि इन विदेशी जातियों को प्राकृत भाषा अपनानी पड़ी। अशोक का मानसेरा का लेख प्राकृत भाषा में है। पश्चिमोत्तर प्रांत तथा पंजाब के उपर्युक्त लेख प्राकृत भाषा में ही उपलब्ध हैं। मुद्रालेख इससे पृथक् न रह सके। यूनानी या शक नरेशों के मुद्रालेख खरोष्ठी लिपि किन्तु प्राकृत भाषा में ही हैं। पश्चिमी प्रदेश तथा मध्यप्रदेश में शकों के समस्त अभिलेख प्राकृत भाषा में हैं। (सारनाथ, मथुरा, सहेतमहेत या नासिक लेख) सम्भवतः आर्य लोगों की भाषा संस्कृत थी। किन्तु साधारण जनता प्राकृत भाषा में ही अपना विचार व्यक्त करती रही। क्रमशः आर्य भाषा संस्कृत का प्रभाव प्राकृत पर पड़ने लगा, इसलिए विदेशी शक, पह्लव तथा कुषाण नरेशों को संस्कृत ने प्रभावित किया। मथुरा के सोडाश के अभिलेख में यह दीख पड़ता है। प्राकृत 'महाक्षत्रप सोडासस' के स्थान पर 'महाक्षत्रपस्य सोडासस्य' उल्लिखित है जो संस्कृत प्रभाव व्यक्त करता है। पहली सदी से ही ऐसा प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। कनिष्क के स्यूविहार ताम्रपत्र के लेख में खरोष्ठी लिपि तथा संस्कृत प्रभावित प्राकृत का परिज्ञान होता है। लेख निम्न प्रकार है—महरजस्य रजतिरजस्य देवपुत्रस्य कनिष्कस्य लेख के प्रारम्भिक शब्द प्राकृत भाषा के हैं (महरज या रजतिरज) उनमें

षष्ठी स (प्राकृत) के स्थान पर संस्कृत स्य जुड़ा है। संस्कृत का रूप—महाराजस्य राजाति-राजस्य होना चाहिये।

उसी राजा के सहेतमहेत तथा सारनाथ प्रतिमा लेखों की भाषा मिश्रित संस्कृत है।

लेख की भाषा	शुद्ध संस्कृत
महाराजस्य देवपुत्रस्य कणिकस्य एतये पुर्वये (सहेतमहेत लेख)	महाराजस्य देवपुत्रस्य कणिष्कस्य····एतस्यां पूर्वायां
महारजस्य कणिष्कस्य········एताये पूर्वये (सारनाथ लेख)	महाराजस्य कणिष्कस्य········एतस्यां पूर्वायां

इस प्रकार का संस्कृत प्रभाव क्षत्रपों के मुद्रालेख में भी पाया जाता है।

द्वितीय शती के क्षत्रपों के गुहालेख प्राकृत भाषा में खुदे मिले हैं। उनमें संस्कृत का प्रभाव नहीं दीख पड़ता। सबसे बड़ी घटना महाक्षत्रप रुद्रदामन के शासन काल में हुई। उसने किन कारणों से जूनागढ़ का लेख काव्यमय समास सहित तथा विशुद्ध संस्कृत में लिखवाया, यह ज्ञात नहीं। किन्तु उससे विचित्र बात यह है कि महाक्षत्रप रुद्रदामन के रजत सिक्कों पर परम्परागत प्राकृत भाषा में ही निम्न प्रकार का मुद्रा लेख अंकित मिला है—

राज्ञो क्षत्रपस जयदाम पुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रदामस।

शक-पह्लव, क्षत्रप तथा कुषाण वंशी लेखों में दो प्रकार की तिथि गणना मिलती है। शक पह्लव अभिलेख प्रायः विक्रम संवत् (ईसापूर्व ५७) से सम्बन्धित हैं अतएव उनके लेखों में उल्लिखित तिथियों की (विक्रम-संवत् से) गणना से शासक के तिथियाँ तथा शक-संवत् राज्य काल का परिज्ञान हो जाता है। इस प्रसंग में पह्लव सामंत सोडास का मथुरा लेख तथा पटिक का तक्षशिला ताम्रपत्र का नामोल्लेख आवश्यक प्रतीत होता है। मथुरा लेख के आरम्भ में महाक्षत्रप सोडासस संवत्सरे ७२ (७० + २) का उल्लेख है। पटिक के ताम्रपत्र में संवत्सरये ७८ (२० + २० + २० + १० + ८) प्रारम्भ में ही अंकित है। इसे विक्रम संवत् से मुक्त कर पटिक की तिथि ई० सं० २१ (७८ – ५७) सिद्ध हो जाती है। गुदफास के लेख (तख्तेबहाई) की तिथि १०३ (१०३ – ५७ = ई० स० ४६) तथा अयस के कलवान ताम्रपत्र की तिथि १३४ (१३४ – ५७ = ई० स० ७७) उल्लिखित है। कुछ विद्वान् इसे प्राचीन शक-काल (सम्भवतः ई० पू० ८४) से सम्बन्धित करते हैं। अतः अयस की तिथि ई० स० ५० हो जाती है। किन्तु कुषाण नरेशों ने एक नए संवत् का प्रयोग किया जो शक-संवत् कहा जाता है और जिसे प्रथम कनिष्क ने ई० स० ७८ में शुभारम्भ किया था। गणना से कुषाण तथा क्षत्रप के लेख एवं सिक्के की तिथियाँ सम्बन्धित हैं। कनिष्क के उत्तराधिकारी भी इसी गणना का प्रयोग करते रहे। इस प्रकार लेखों में तिथियाँ ३ से ८० तक उल्लिखित हैं यानी ई० स० ८१ (३ + ७८) से ई० स० १५८ तक कुषाण शासन काल सुव्यवस्थित रहा। कुषाण लेखों के आधार पर निम्न तिथियाँ उल्लिखित की जा सकती हैं।

कनिष्क	वर्ष	१ –२३
वाशिष्क	,,	२४–२८

हुविष्क	"	२८–६०
कनिष्क द्वितीय	"	४१
वासुदेव	"	६७–९८

कुषाणों के क्षत्रप सामंत पश्चिमी भारत-काठियावाड़, गुजरात, मालवा एवं महाराष्ट्र पर कई सदियों तक शासन करते रहे। उनके अभिलेख तथा मुद्रालेख में उल्लिखित तिथियाँ शक-संवत् से सम्बन्धित हैं। यहाँ गणना के नामकरण के सम्बन्ध में दो शब्द कहना आवश्यक है। कुषाण सम्राट् प्रथम कनिष्क ने ई० स० ७८ में एक संवत् की स्थापना की जो कुषाण संवत् के बदले शक-संवत् के नाम से प्रसिद्ध है। स्यात् पश्चिमी भारत में बहुत समय तक शक क्षत्रप इस संवत् का प्रयोग करते रहे अतएव इसका नाम शक-संवत् प्रसिद्ध हो गया उज्जयिनि के प्राचीन गणितज्ञों ने प्रचलित शक-संवत् को ही अपने ग्रंथों में उल्लेख किया जो विक्रम संवत् के साथ पंचांग में पाया जाता है। कालान्तर में इसे सालिवाहन शक भी कहने लगे। आज हमारे राष्ट्रीय संवत् के स्थान पर शक-संवत् (काल) का प्रयोग सर्वत्र हो रहा है।

शक क्षत्रप नहपान के लेखों की तिथियाँ ४१, ४२ (नासिकलेख) या ४६ (जूनार लेख) ज्ञात हैं। उनमें शक संवत् जोड़ कर ई० स० १२४ (४६ + ७८) में + नहपान का राज्यकाल निश्चित हो जाता है। महाक्षत्रप रुद्रदामन के जूनागढ़ लेख में रुद्रदाम्नो वर्षे द्विसप्ततितमे (७२) वाक्य का उल्लेख है। यानी इसे शक काल से सम्बद्ध कर तिथि व्यक्त की जाती है। वह शासक ई० स० १५० (७२ + ७८) में राज्य करता था।

शक क्षत्रप के रजत सिक्कों पर भी जो तिथियाँ अंकित हैं उनका सम्बन्ध शक काल (ई० स० ७८) से स्थापित किया जाता है। मालवा के भूभाग में शक तथा विक्रम संवत् दोनों का प्रयोग होता रहा। द्वितीय चन्द्रगुप्त के पुत्र प्रथम कुमारगुप्त ने मंदसौर लेख में विक्रम काल का प्रयोग किया था। छठी सदी से वराहमिहिर आदि गणितज्ञों ने दोनों संवतों का प्रयोग किया जो आज भी जंत्रो में गणना के लिए प्रचलित है।

प्रारम्भ में इसकी चर्चा की जा चुकी है कि पह्लव गान्धार तथा पश्चिमी पंजाब में शासन करने लगे थे। उनके लेख तथा सिक्के भी इसी बात को पुष्टि करते हैं। गुदफरस तथा अयस के लेख खरोष्ठी लिपि में उपलब्ध हुए हैं। उनके सिक्कों पर खरोष्ठी में मुद्रालेख अंकित हैं। इस प्रकार उनका राज्य पंजाब तथा पश्चिमोत्तर प्रदेश में ही सीमित था। कुषाण वंश के राजा भी पेशावर में रहकर शासन करते थे। प्रथम कनिष्क के लेख पेशावर से कौशाम्बी तथा वाराणसी तक प्राप्त हुए हैं। हाल ही में भोपाल (मध्यप्रदेश) में भी एक लेख प्रकाश में आया है। कुषाण सम्राट् कनिष्क का स्यूबिहार ताम्रपत्र तथा कुर्रम का भस्मपात्र पंजाब तथा पश्चिमोत्तर प्रदेश से उपलब्ध हुए हैं जिसपर खरोष्ठी में लेख उत्कीर्ण हैं। सहेतमहेत कौशाम्बी तथा वाराणसी के लेख उत्तरप्रदेश में स्थित हैं। इस प्रकार कनिष्क का राज्य पेशावर से वाराणसी तक यानी पश्चिमोत्तर प्रदेश से मध्यदेश एवं मध्य प्रदेश तक विस्तृत प्रकट होता है। जहाँ तक उनके उत्तराधिकारियों का प्रश्न है सभी के लेख मथुरा (उत्तर प्रदेश) तक ही मिले हैं।

राज्य विस्तार

अतः दूसरी शती के मध्यकाल तक कुषाण राज्य पेशावर से लेकर मथुरा तक सीमित रहा।

क्षत्रप नरेशों के विषय में नई बातें सम्मुख आती हैं। उन्होंने कुषाण नरेशों के सामंत के रूप में राज्य आरम्भ किया किन्तु कालान्तर में स्वतंत्र हो गए। क्षत्रप सिन्ध के मुहाने से होकर पश्चिमी भारत में आए। क्रमशः मालवा, काठियावाड़, राजपुताना तथा महाराष्ट्र पर अधिकार कर लिया। यद्यपि नहपान के लेख नासिक, कार्ले, जूनार (महाराष्ट्र प्रदेश) से ही प्राप्त हैं किन्तु नासिक लेख के वर्णन से नहपान के राज्य सीमा का ज्ञान हो जाता है। इसी प्रकार रुद्रदामन का जूनागढ़ लेख गिरनार (काठियावाड़) पर्वत पर खुदा है, तथापि उसके वर्णन से महाक्षत्रप रुद्रदामन शक्तिशाली शासक प्रकट होता है। उसने बम्बई, काठियावाड़, मालवा, राजपुताना तथा सिन्ध नदी के मुहाने की भूमि पर राज्य किया था। इन प्रदेश या स्थान का नाम जूनागढ़ के लेख से सुलभ हो सका है पूर्वपराकरावन्ती (मालवा) अनूप (महिष्मती) आनर्त (उत्तरी काठियावाड़) सुराष्ट्र मरु (राजपुताना) कच्छ सिन्धु सौवीर कुकुरापरान्त (साबरमती-उत्तरी कोंकण निषाद (अरवली प्रदेश) आदि। उसके उत्तराधिकारी उतने सबल न थे किन्तु उज्जयिनी तथा काठियावाड़ के भूभाग पर शासन करते रहे। गुप्त सम्राट् द्वितीय चन्द्रगुप्त ने शक क्षत्रपों को जीतकर इनके शासन का अन्त कर दिया जो उदयगिरि गुहा लेख (गु० स० ८२) तथा सांची वेष्टनी अभिलेख गु० स० ९३ के वर्णन से स्पष्ट हो जाता है। विदिसा के समीप उदयगिरि पर्वत गुहा में वैष्णव मूर्तियाँ भी गुप्त अधिकार की द्योतक हैं।

शासन पद्धति

मौर्य साम्राज्य के पश्चात् कुषाण वंश ने ही विस्तृत राज्य पर शासन किया था। पह्लव उत्तर पश्चिमी सीमान्त प्रदेश पर शासन करते रहे परन्तु उनकी शासन पद्धति विशेष उल्लेखनीय नहीं है। कनिष्क ने प्रायः समस्त उत्तरी भारत (वाराणसी तक) पर शासन किया और मध्य एशिया भी उसके साम्राज्य में सम्मिलित था। शासन की परम्परा से वह विज्ञ न था क्योंकि सम्राट् होकर इतने बड़े राज्य का शासन केन्द्रीभूत न कर सका। कनिष्क ने प्रायः कई प्रांतों में अपने साम्राज्य का बंटवारा कर दिया था——

१. पूर्वीभाग-उत्तर प्रदेश का भूभाग—इसकी राजधानी मथुरा थी। सोडास तथा रंजुबल कुषाण के अधीनस्थ शासन करते रहे।

२. सबसे पूर्वीभाग का शासन केन्द्र सारनाथ में था।

३. उत्तर पश्चिमी भाग—गन्धार का भूभाग जिसकी राजधानी तक्षशिला थी। पटिक वहाँ का सामंत था जो शासन का अधिकारी था।

४. काठियावाड (पश्चिमी भारत) जिसकी राजधानी नासिक थी।

५. मालवा तथा राजपुताना का प्रदेश—इस भू-भाग की राजधानी उज्जयिनी थी।

विद्वानों का ज्ञात है कि कुषाण के सामंत (प्रांतपति) क्षत्रप की पदवी से विभूषित थे। यह शब्द ईरानी क्षत्रपावन (पृथ्वी का स्वामी) से विकृत होकर क्षत्रप बन गया किन्तु उसका भाव बना ही रहा। चारों प्रान्तों के शासक क्षत्रप कहे जाते थे। पटिक का ताम्रपत्र,

सोडास का मथुरा अभिलेख, नहपान के नासिक तथा जूनार लेख तथा रुद्रदामन के शिलालेख इस बात की पुष्टि करते हैं कि कुषाण शासन का विकेन्द्रीकरण हो गया था तथा प्रदेश के सामंत क्षत्रप थे। क्षत्रप तथा महाक्षत्रप की दो पदवियां लेखों में उल्लिखित मिलती हैं। सम्भवतः क्षत्रप अधीन परिस्थिति का तथा महाक्षत्रप स्वाधीनता का द्योतक था। परन्तु इस सम्बन्ध में वाक्य कहना कठिन है। नहपान नासिक लेख में क्षहरात क्षत्रप कहा गया है किन्तु जूनार गुहा लेख में अपने को महाक्षत्रप घोषित करता है। जूनागढ़ शिलालेख में रुद्रदामन महाक्षत्रप की पदवी से विभूषित है पर उसका पिता क्षत्रप जयदामन कहा गया है। सम्भव है रुद्रदामन स्वतंत्रता की घोषणा कर चुका था। मथुरा का शासक रंजुवस को महाक्षत्रप कहा गया है। सारनाथ के बुद्ध प्रतिमा लेख में वनस्पर क्षत्रप तथा खरपल्लान महाक्षत्रप उल्लिखित हैं। ये दोनों कनिष्क के अधीन होकर पूर्वी भाग में शासन करते थे। अतएव इन पदवियों के आधार पर कोई निर्णय नहीं किया जा सकता। यह तो निश्चित रूप से कहना उचित होगा कि कुषाण द्वारा प्रांतपति के पद पर नियुक्त होकर शासकों ने स्वतंत्र रीति से राज्य किया था।

यदि लेखों पर ध्यान दिया जाय तो ज्ञात होगा कि उपर्युक्त सभी क्षत्रप या महाक्षत्रप उत्तर पश्चिम से आये थे। यानी कुषाण राजाओं ने उन्हें नियुक्त कर शासक के रूप में भेजा था। निम्न बातों पर ध्यान देने से समस्त विषयों की जानकारी हो जाती है।

१. क्षत्रप या महाक्षत्रप के प्रारम्भिक लेख खरोष्ठी लिपि तथा प्राकृत में मिले हैं। उत्तर पश्चिम (गान्धार) भारत के खरोष्ठी का ही प्रचार था। अशोक से लेकर कुषाण नरेशों के समस्त लेख उस भाग में खरोष्ठी (लिपि) में अंकित किए गये थे। मथुरा का सिंह स्तम्भ लेख सोडास द्वारा खरोष्ठी में खुदवाया गया था। नहपान के मुद्रालेखों में खरोष्ठी का प्रयोग मिलता है। शनैः-शनैः परिस्थिति के अनुसार लिपि का परिवर्तन कर दिया और पंजाब के पूरब या पश्चिम भारत में शक लेख ब्राह्मीलिपि प्राकृत भाषा सहित खोदे गये। सोडास के अन्य मथुरा लेख, सारनाथ बुद्ध प्रतिमा लेख, नासिक गुहालेख, जूनागढ़ शिलालेख तथा मुद्रा लेख ब्राह्मी में ही मिलते हैं। यह स्थानीय परिस्थिति का फल था किन्तु क्षत्रपों का खरोष्ठी से सम्बन्ध उत्तर पश्चिम भारत से उनका नाता जोड़ता है।

२. क्षत्रपों के नाम सिथियन प्रकार के थे जो क्रमशः भारतीय शैली के हो गए। उदाहरणार्थ–नहपान, सोडास, घसमोटिक।

३. तीसरी बात जिससे क्षत्रपों का सम्बन्ध कुषाणों (उत्तर पश्चिम भारत) से प्रकट होता है, स्तूप की आकृति है जो सिक्कों पर पाई जाती है। चूंकि कनिष्क बौद्ध था, अतएव स्तूप का प्रतीक बहुत समय तक प्रयुक्त रहा।

४. भारतीय यूनानी शासकों के स्थान पर ही शक उत्तर पश्चिम में राज्य करने लगे। अतएव जितने चाँदी के सिक्के प्रचलित किए वब अर्द्धद्रम के बराबर थे। भारतीय स्थानीय बातों का समावेश न हो पाया। इन कारणों से यह कहना युक्ति संगत होगा कि भारत में क्षत्रप या महाक्षत्रप शासक कुषाण के अधीन रहे। कुषाण के विकेन्द्रीकरण के कारण कुछ स्वतंत्र हो गए।

अभिलेखों के अनुशीलन से राजाओं के कार्यों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। शक, पह्लव

अथवा कुषाणों के लेखों के प्राप्तिस्थान से शासकों के प्रभाव का विस्तार प्रकट हो जाता है। शासन प्रणाली के अतिरिक्त विशेषतया शक लेखों में युद्ध गाथा का भी वर्णन उपलब्ध होता है। पश्चिमी भारत में क्षत्रपों ने सातवाहन शासन को हटा कर अपना प्रभुत्व स्थापित किया था अतएव दोनों वंशों में युद्ध का क्रम कई सदियों तक चलता रहा। सांची के तोरण पर शातकर्णि का नामोल्लेख है जिससे प्रकट होता है कि सातवाहन वंश का राज्य मालवा तक विस्तृत था। इसी के पश्चात् शक मालवा पर अधिकार कर लिए और क्षहरात वंश का आधिपत्य कई सौ वर्षों तक बना रहा। नासिक (महाराष्ट्र) तथा जूनार (पूना के समीप) के लेखों से नहपान के प्रभाव का पता चलता है। पहले वह नासिक गुहा लेख में क्षत्रप कहा गया है—

युद्धगाथा

क्षहरातस क्षत्रपस यहपानस।

जूनार के लेख में वह महाक्षत्रप पदवी से विभूषित है—

राञो महाक्षतपस सामि नहपानस (राजा महाक्षत्रप स्वामी नहपान) इस प्रकार ई० स० १२६ तक नहपान का राज्य मालवा से पूना तक विस्तृत था। नासिक गुहा लेख में वह भरुकच्छ (भरोंच) दशपुर (मालवा) गोवर्धन (नासिक महाराष्ट्र) तथा शार्पारगे (सोपारा) एवं प्रभास (काठियावाड़) का स्वामी कहा गया है। कार्ले (पूना के समीप) लेख से पता चलता है कि राजपूताना के कुछ अंशों पर उसका प्रभुत्व था। इस प्रकार नहपान काठियावाड़, राजपूताना, मालवा एवं महाराष्ट्र का स्वामी बन गया।

यदि इसके समकालीन सातवाहन लेखों का अनुशीलन किया जाय तो प्रकट होता है कि सातवाहन नरेश गोतमीपुत्र शातकर्णि ने नहपान को परास्त कर अपने वंश की राजलक्ष्मी, वैभव एवं प्रतिष्ठा को पुनः वापस लिया था। नासिक गुहालेख (तिथि १९ = १४९ ई०) में पुलमावि ने अपने पिता की प्रशंसा करते राज्यविस्तार का भी वर्णन किया है। गौतमीपुत्र शातकर्णि के लिए निम्न वाक्यों—खखरात वश निरवसेस करस (जिसने क्षहरात वंश यानी नहपान को नष्ट कर दिया) एवं सातवाहन कुलपति थापनकरस (जिसने सातवाहन वंश की प्रतिष्ठा स्थापित की) का प्रयोग किया है। उसके लेख में शातकर्णि उन स्थानों का स्वामी कहा गया है जो पहले नहपान के अधीन थे यानी युद्ध में नहपान से सभी विजित स्थानों को वापस ले लिया। सुरठ (सौराष्ट्र) कुकुर (पूर्वी राजपूताना) अपरान्त (उत्तरी कोंकण) अनूप (महिषमति का भूभाग) विदर्भ (बरार) आकराबन्ति (मालवा) विन्ध्या का भाग, परीयात्र (अरवली) सह्य (सह्याद्रि) कन्हगिरि (कृष्णगिरि = कन्टेरी, बम्बई के समीप) आदि भाग गोतमीपुत्र शातकर्णि के अधिकार में आ गये थे। इस तरह नहपान पराजित हुआ और सातवाहन पुनः राजपूताना, मालवा, सौराष्ट्र तथा महाराष्ट्र के शासक बन गये। नासिक के समीप प्राप्त नहपान के सिक्कों-जोगलम्बी सिक्कों के ढेर से इस बात की पुष्टि होती है।

जोगलथम्बी से नहपान के चौदह हजार चाँदी के सिक्के उपलब्ध हुए हैं जिनके दस हजार को शातकर्णि ने पुनः मुद्रित किया था। नहपान के मुखपर उज्जयिनि चिन्ह मुद्रित किए गए। जिस ओर खरोष्ठी में नहपान का नाम है उसी के दाहिने भाग पर ब्राह्मी

में गोतमी पुतान सातकनिस अंकित है। अतएव नहपान के पराजय का यह सबल प्रमाण उपस्थित करता है। परन्तु यह दशा बहुत समय तक रह न सकी। सन् १५० ई० में महा-क्षत्रप रुद्रदामन ने उपरिलिखित सभी प्रांतों को जीत लिया और सातवाहन राज्य आंध्रप्रदेश में सीमित रह गया। ईसवी सन् को दूसरी सदी के जूनागढ़ शिलालेख में इन्हीं स्थानों— आकरावन्ति, अनूप, सुराष्ट्र, भरुकच्छ, कुकुरट अपरान्त आदि के नाम उल्लिखित हैं जिन पर कालान्तर में रुद्रदामन शासन करने लगा था। तात्पर्य यह है कि सातवाहन पराजित हो गये और मालव राजपूताना सिन्ध तथा काठियावाड़ में शकों का शासन स्थिर हो गया। कई सदियों तक क्षत्रप शासन करते रहे। चौथी सदी में गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त ने क्षत्रपों को नष्ट कर मालवा गुजरात आदि भागों पर गुप्त शासन स्थापित किया। इसका सारांश यह है कि क्षत्रप लेखों के अध्ययन से शासकों की युद्ध गाथा का वर्णन मिलता है।

क्षत्रप लेखों के परीक्षण से तत्कालीन आर्थिक अवस्था का परिज्ञान हो जाता है। उनके अभिलेखों में ग्रामदान का वर्णन करते समय आर्थिक दशा का अध्ययन स्वतः हो जाता है।

आर्थिक एवं धार्मिक स्थिति

ग्राम अधिक आबाद नहीं थे। परन्तु खेती का कार्य सुचारु रूप से होता रहा। खेती की उन्नति के लिए नदियों पर बाँध निर्माण कर सिंचाई के लिए नालियाँ भी निकाली गई थीं। गिरनार शिलालेख में वर्णन आता है कि महाक्षत्रप रुद्रदामन ने नदी के नष्ट बांध को तीन गुना मजबूत बनाया और नालियों का भी संस्कार किया। यह कार्य खेती के लाभार्थ शासक ने सम्पन्न किया ताकि जनता सुखी हो सके।

ईसवी सन् की सदियों में व्यापार के लिए श्रेणियां (निगम) बनी थीं जो बैंक का भी कार्य करती थीं। नासिक गुहालेख में इस बात का उल्लेख किया है कि वस्त्र निर्माण करने वाली संस्था (गोवधनं बाथवासु श्रेणिसु) के पास जनता धन जमाकर सूद लिया करती थी। उस लेख में वर्णन है कि दो हजार रुपया (कार्षापण) एक रुपया सैकड़े सूद की दर से तथा एक हजार पौन रुपया सूद की दर से ब्याज पर जमा किया गया था। इस सूद से भिक्षु संघ के भोजन तथा वस्त्र का प्रबन्ध किया जाता था। सम्भव है निगम की प्रतिष्ठा पर सूद का दर निश्चित हुआ करता था। उसी लेख में सोना चांदी के सिक्कों का अनुपात १ : ३५ बतलाया गया है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि पश्चिमी भारत में व्यापार की संस्थाएँ कार्य कर रही थीं। इन कारणों से दैनिक जीवन की वस्तुएँ अत्यन्त सस्ती थीं। तीन हजार कार्षापण का सूद करीब ३३० कार्षापण होता था जिस धन से बीस भिक्षुओं के लिए भोजन वस्त्र का साल भर का प्रबंध हो जाता था। यदि शक कुषाण सिक्कों का अध्ययन किया जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि शासक गण आर्थिक स्थिति सुधारने तथा व्यापार की अभिवृद्धि के लिए जागरूक थे। भारत यूनानी राजाओं के शासन काल में भारत से रोम तक व्यापार संगठित था। और मध्य एशिया से बल्ख होकर पश्चिमी एशिया से व्यापारीगण कार्य कर रहे थे। पह्लव नरेशों के आगमन से व्यापार में कुछ शिथिलता आ गई। इन्होंने शासन कार्य के निमित्त यूनानी सिक्कों का अनुकरण किया और पश्चिमोत्तर प्रदेश में मोग अयस या गुदफर के सिक्के प्रचलित हुए थे। उस समय चांदी के सिक्के प्रचलित थे। कुषाण नरेशों ने मध्य एशिया से भारत तथा पश्चिमी एशिया से व्यापार की वृद्धि के लिए अन्तर्राष्ट्रीय धातु सोने का सिक्का चलाया।

कुषाण वंशी राजा वीम भारतीज स्वर्ण मुद्रा का जन्मदाता माना गया है। कुषाण वंशी शासकों ने सोने तथा ताम्बे का प्रयोग सिक्कों के लिए किया था किन्तु पश्चिम भारत में क्षत्रप नरेशों ने केवल चांदी का प्रयोग किया जो अर्द्धद्रम (३२ ग्रेन) तौल में थे। इन लोगों ने गुजरात, काठियावाड़, भरोंच, सिन्ध के भूभाग पर अधिकार कर पश्चिमी एशिया से व्यापार की वृद्धि की जिससे भारत समृद्ध हो सका।

अभिलेखों के अध्ययन से धार्मिक अवस्था का विशेष परिज्ञान होता है। क्षत्रप उत्तर पश्चिम से आए थे जहाँ बुद्धमत का अधिक प्रचार था, अतः उन लोगों ने बौद्ध भिक्षुओं के लिए गुहा निर्माण किया तथा उन भिक्षुओं के भोजन वस्त्र के लिए भूमि दान की। नासिक गुहा लेख में ग्रामदान के विवरण के साथ विभिन्न धार्मिक शाखाओं के भी नाम आए हैं। क्षेत्र-दान एवं लेणदान (गुहादान) शब्दों का प्रयोग है। भिक्षु संघ से बौद्ध भिक्षुओं का तात्पर्य है। नासिक लेखों में महावनीय संघ (शाखा) तथा बलूरक संघ के नाम उल्लिखित हैं। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि बौद्धमत की अनेक शाखाएँ पश्चिम भारत में वर्तमान थीं।

शकों का भारतीयकरण

इस विषय की चर्चा हो चुकी है कि शक उत्तर पश्चिम से आकर मालवा, गुजरात तथा महाराष्ट्र में शासन करने लगे। यद्यपि उनका बुद्धमत से निकट का संबंध था किन्तु उनमें धर्म के प्रति दृढ़ता न थी। सम्भव है उनका विचार शनैः शनैः बदलता गया और ब्राह्मण मत की ओर आकृष्ट हो गया। नहपान का जामाता ऋषभदत्त ब्राह्मण मतानुयायी हो गया इसलिए उनसे अभिलेख में अनेक धार्मिक कृत्यों का वर्णन किया है—

(१) तीर्थ यात्रा—पुष्कर (राजपूताना) तथा प्रभास तीर्थों (काठियावाड़) की यात्रा का वर्णन है।

(२) अभिसेको—पुष्कर तीर्थ में ऋषभदत्त ने अभिषेक किया जो वैदिक रीति का परिचायक है। उसके उपलक्ष में तीन हजार गाय दक्षिणा में ब्राह्मणों को दिया था। उसी के साथ ऋषभदत्त ने ग्राम भी दान किया था।

(३) ब्राह्मण कन्या का दान—कार्ले लेख में वर्णन आता है कि "पभासे पूततिथे ब्राह्मणा अठ भाया पदेन" यानी प्रभास तीर्थ में शक शासक ने आठ ब्राह्मण कन्या के विवाह निमित्त धन दान किया था। नासिक लेख में भी "अष्ट भार्या प्रदेन" वाक्य उसी बात को पुष्टि करता है। पुराणों में एक वाक्य मिलता है—"सालङ्कारा द्विज श्रेष्ठ कन्या यच्छति यो नरः। स गच्छेद् ब्रह्म सदनं पुनर्जन्म न विद्यते।' तात्पर्य यह है कि शक नरेश ब्राह्मण कन्या के विवाह निमित्त धन देकर पुण्य लाभ करते थे। यानी ब्राह्मण मत का उन पर पूर्ण प्रभाव हो गया था।

(४) धर्मशाला निर्माण—तीर्थ में निवास करने वालों के लिए विश्राम गृह बनाया गया (चतु शाला वसध प्रतिश्रय प्रदेन) तथा नदी किनारे आरामघर तैयार किया था (आराम तडाग उदपान करेण) उन स्थानों में पानी का प्रबन्ध किया जिससे यात्रियों को सुख मिले।

५) नदी तीर को निःशुल्क करना—नदी के घाट को पार करने के लिए शुल्क

लगता है परन्तु शक राजा ने कई नदियों पर पार करने की निःशुल्क व्यवस्था की थी। इवा पारदा दमण तापी करवेण दाहनुका नावा पुण्यतर करेण।

(६) धार्मिक कर ग्रहण—जूनागढ़ लेख में रुद्रदामन ने उल्लेख किया है कि वह भूमि-कर आदि टैक्स (शुल्क) धार्मिक रीति से वसूल करेगा (अर्जित धर्मानुरागेन) यह भारत की प्राचीन परिपाटी थी। जिसका पालन शकों ने किया।

(७) धर्मसेतु—शक लेखों में दान को धर्मसेतु कहा गया है जिससे स्वर्ग के मार्ग में सरलता होती है। यह पौराणिक विचारधारा उस समय काम कर रही थी। नासिक लेखों में दान के अतिरिक्त पौराणिक महापुरुषों का नामोल्लेख है। राम केशव जनमेजय आदि। इस सर्वेक्षण का तात्पर्य यह है कि शक काल में ब्राह्मण मत का प्रचार था। यद्यपि बुद्धमत के विचार को लेकर शक आए थे, स्तूप चिन्ह को सिक्कों पर अपनाया, गुहा निर्माण किया तथा भिक्षुओं को दान दिया किंतु उनका भारतीयकरण ब्राह्मण मत को स्वीकार करने से पूर्ण हो गया। शक लेख इनके प्रमाण हैं।

कुषाण तथा क्षत्रप लेख

कनिष्क का सारनाथ प्रतिमा लेख

(तिथि वर्ष तीसरा)

[१]

भाषा-संस्कृत मिश्रित प्राकृत — प्राप्तिस्थान-सारनाथ (वाराणसी के समीप)

लिपि-ब्राह्मी — (तिथि—ई० स० ८१)

पू० ई० भा० ८ पृ० १७३

१ महारजस्य कणिष्कस्य सं ३ हे ३ दि २० [+★] २
२ एताये पूर्वये भिक्षुस्य पुष्यबुद्धिस्य सद्धयेवि-
३ हारिस्य भिक्षुस्य बलस्य त्रेपिटकस्य
४ बोधिसत्वो छत्रयष्टि (च) प्रतिष्ठापितो
५ बाराणसिये भगवतो च (˙) कमे सहा मात (ा★)-
६ पितिहि सहा उपद्धयायाचर्येहि सद्धयेविहारि-
७ हि अंतेवासिकेहि च सहा बुद्धमित्रये त्रेपिटिक-
८ ये सहा क्षत्रपेण वनस्परेन खरपल्ला-
९ नेन च सहा च च (तु) हि परिषाहि सर्वसत्वनं
१० हितासुखार्त्थं (।।★)

[२]

१ भिक्षुस्य बलस्य त्रेपिटकस्य बोधिसत्वो प्रतिष्ठापितो।
२ महाक्षत्रपेन खरपल्लानेन सहा क्षत्रपेन वनष्परेन ।।

स्यूविहार ताम्र-पत्र

भाषा-वही | स्यूविहार बहावलपुर प० पा०
लिपि-खरोष्ठी | तिथि पू० ई० स० ८९

का० ई० ई० भा० २

(तिथि ११वें वर्ष)

१ महरजस्य रजतिरजस्य देवपुत्रस्य क (निष्कस्य) संव(त्स)रे एकदशे सं १० [+★]१ दइसिकस्य मस (स्य) दिवसे अठविशे दि २० [+★] ४[+★]४

२ (अद्य) त्र दिवसे भिक्षुस्य नगदतस्य ध(र्म)-कथिस्य अचर्य-दमत्रत-शिष्यस्य अचर्य-भवे-प्रशिष्यस्य यठि अरोपयत इह द (म) ने

३ विहरस्वमिणि उपसिक (व) लनंदि-(कु) टिंबिनि बलजय-मत च इमं यठिप्रतिठनं ठप (इ) चं अनु परिवरं ददंरि (।★) सर्व-सत्वनं

४ हित-सुखय भवतु (।।★)

कुर्रम (ताम्र भस्मपात्र लेख)

भाषा-प्राकृत | प्राप्तिस्थान–कुर्रम पेशावर के समीप
लिपि-खरोष्ठी | तिथि–ई० स० ९९

का० इ० इ० भा० २

१ सं २० [+★] १ मस) स अवदुनकस दि २० इ (शे) क्षुनंमि श्वेइवर्म यश-पुत्र तनु (व) कंमि रंलंमि (नवविह★) रंमि अचर्यन सर्वस्तिवदन परि- (ग्रहं) मि थुवंमि भग्रवतस शक्यमुनिस

२ शरिर प्रसिठवेदि (।★) यथ वुत भग्रवद अविज-प्रचग्रसंकरं संकरं-प्रचग्र विञन (वि) ञन-प्रचग्र नम-रुव-नमरुव-प्रचग्र षड्ड (य)-(दन) षड्डयदन-प्रचग्र फष पष-प्रचग्र

३ वेदन वेदन-प्रचग्र तष्ण तष्ण-प्रचग्र उवदन उवदन-प्रचग्र भव भव-प्रचग्र जदि जदि-प्रच (ग्र) जर-मर (न)-शोग्र परिदेव-दुख-दोर्मनस्त-उपग्रस (।★) (एवं) (अस) केवलस दुख-कंधस संमुदए भवदि (।★)

४ सर्व-सत्वन पुयए अय च प्रतिच-संमुपते लिखिद महिफतिएन सर्वसत्वन पुयए (।।★)

सहेत महेत बौद्ध प्रतिमा लेख

भाषा-संस्कृत मिश्रित प्राकृत | प्राप्तिस्थान-सहेतमहेत (श्रावस्ती)
लिपि-ब्राह्मी | गोंडा, उत्तर प्रदेश, तिथि-पहली सदी

ए० इ० भा० ८

१ (महाराजस्य देवपुत्रस्य कणिष्कस्य (?) सं ★ ★ ★ ★ दि) १० [+★] ९ एतये पुर्वये भिक्षुस्य पुष्य (वु★)–

२ (द्धिस्य★) सद्धेयविहारिस्य भिक्षुस्य ब(ल)स्य त्रेपिकटस्य दान(ं) (बो) धिसत्वो छात्रं दाण्डश्च श्रावस्तिये भगवतो चंकमे

३ कोसंबकुटिये (अचर्य्या) णां सर्वस्तिवादिन परिगहे (।।★)

द्वितीय-कनिष्क का आरा लेख

भाषा-प्राकृत | प्राप्तिस्थान-आरा, अटक प० पा०
लिपि-खरोष्ठी | तिथि-ई० सं० ११९ (?)

(तिथि ४१वें वर्ष)

का० इ० इ० भा० २ पृ० १६५

१ महरजस रजतिरजस देवपु (त्रस) (क) इ (स) रस
२ व (झि) ष्प-पुत्रस कनिष्कस संवत्सरए एकचप (रि)-
३ (शए) सं २० [+ ★]२०[+ ★] १ जेठस मसस दिव(से) १ इ(थे) दिवसक्षुणमि
ख (दे)
४ (कुपे) दषव्हरेन पोषपुरिअ-पुत्रण मतर-पितरण पुय (ए)
५ (हि)रंणस सभर्य(स) (स)पुत्रस अनुग्रहर्थए सर्व (सप)ण
६ जति(षु) छ (?) तए (।★) इमो च लिखितो म (धु)....(।।★)

हुविष्क का जैन प्रतिमा लेख

भाषा-प्राकृत | प्राप्तिस्थान–लखनऊ
लिपि-ब्राह्मी | तिथि–ई० ८० १२६

(तिथि ४८ वर्ष)

ए० इ० भा० १०

१ मह (ा) राजस्य हु(वि)क्षस्य-सवचर ४० [+ ★]८ व २ दि १० [+ ★]९ एतस्य पुवायं (कोट्टिये-गणे) (बम) (दा★)–
२ (सि)ये (कु)ले पचनगरिय-शाकाय (ध)अवलस्य शिशि(निये) धज(शि)रि(ये) निवतन
३ (ब)धुकस्य वधुये शवत्रात-पो(त्रिये) यशा(ये) दान स(ं)भवस्य प्रोदिम प्र-
४ त (स्थ)पित (।।★)

हुविष्क का बौद्ध प्रतिमा लेख

भाषा-संस्कृत मिश्रित प्राकृत | प्राप्तिस्थान-वही
लिपि-ब्राह्मी | तिथि–ई० स० १२९

(तिथि ५१ वर्ष)

ए० इ० भा० ८

१ महाराजस्य दवपुत्रस्य हुवष्कस्य सवत्सरे ५० [+ ★]१ हेमन्त-मास १ दव....(एतस्यां) पु(र्व्वा)यां (भिक्षुणा) (बु)द्धवर्म(णा) (भग★)वतः श(क्य) (मुनेः★)
२ प्रतिमा प्रतिष्ठापित सर्व-बुद्ध-पूजार्थ (म्) (।★) अ (नेन) (दे)-यधर्म-परित्यागेन उपध्यायस्य सघदासस्य (निवना।वा ( ) प्तये (ऽ★) स्तु मा(तापित्रो च) (।★) (बुद्धार्थम् इदं च दानं ?)
३ बुद्धवर्मस्य सर्व-(दु) खोपशम (ा)य सर्व-सत्व-हित-सुखार्थ(ं) (म)हाराज-दे (वपुत्र-वि) हरे (।।★)

सोडास क्षत्रप का मथुरा लेख

भाषा-संस्कृत मिश्रित प्राकृत | प्राप्तिस्थान–मथुरा
लिपि-ब्राह्मी | तिथि–ई० स० दूसरी सदी

ए० इ० भा० ९

१ स्वामिस्य महाक्षत्रपस्य शोडासस्य गंजवरेण ब्राह्मणेन शेग्रव-सगोत्रेण (पुष्क★)-
२ रणि इमाषां यमड-पुष्करणीनं पश्चिमा पुष्करणि उदपानो आरामो स्तम्भो इ(मो★)
३ (शिला) पट्ट च.... ... (।।★)

पटिक का तक्षशिला ताम्रपत्र

भाषा-प्राकृत | प्राप्तिस्थान–तक्षशिला
लिपि-खरोष्ठी | तिथि–ई० स० दूसरी सदी

(तिथि ७८ वर्ष)

ए० इ० भा० ४

१ (सवत्स)रये अठसततिमए २० [+ ★] २० [+ ★] २० [+ ★] १० [+ ★] ४ [+ ★] ४ महरयस महंतस (मो)गस प(ने★)मस- मसस दिवसे पंचमे ४ [+ ★] १ एतये पुर्वये क्षहर(स)
२ चुक्सस च क्षत्रपस लिअको कुसुलुको नम तस पुत्रो (पति) (को★) तक्षशिलये नगरे (।★) उतरेण प्रचु-देशो क्षेम नम (।★) अत्र
३ (दे★) शे पतिको अप्रतिठवित भगवत शकमुनिस शरिरं (प्र★) तिथ (वेति) (सं) घरमं च सर्व-बुधन पुयए मत-पितरं पुयय (तो)
४ क्षत्रपस स-पुत्र दरस अयु-बल-वधिए भ्रतर सर्व (च) (ञतिग)-(बं★)घवस च पुययंतो (।★) महदनपति पतिक सज उव(झ)-ए (न★)
५ रोहिणिमित्रेण य इम (मि ?) संघरमे नवकमिक (।।★)

कलवान ताम्रपत्र

भाषा-प्राकृत | प्राप्तिस्थान–कलवानर (।) तक्षशिला
लिपि-खरोष्ठी | तिथि–पहली सदी

ए. इ. भा. २१

१ सवत्सरये १ [+ ★] १०० [+ ★] २०[+ ★] १० [+ ★]४ अजस श्रवणस मसस दिवसे त्रेविशे २० [+ ★] १[+ ★] १[+ ★] १ इमण क्षुणेण चंद्र उअसिअ
२ ध्रंमस प्रहवतिस धित भद्रवलस भय छ (?) डशिलए शरिर प्रइस्यवेति गहथु-
३ बमि सघ भ्रदुण नंदिवढणेण ग्रहवतिण सघ पुत्रेहि धमेण सहतेण च । धतुण च
४ ध्रमए सघ ष्णशएहि रजए इव्रए य सघ जिवणंदिण श्रमपुत्रेण अयरिएण य स(र्व)स्ति-
५ वअण परिग्रहे रत्र-णिकमो पुयइत सर्व-स्वत्वण पुयए (।★) णिवणस प्रतिअए होतु (।।★)

नहपान कालीन नासिक गुहालेख

भाषा-प्राकृत — प्राप्तिस्थान–नासिक, महाराष्ट्र
लिपि-ब्राह्मी — काल–श. का. ४२ = ई० स० १२०

ए. इ. भा० ८

१ सिधं (॥★) वसे ४० [+ ★]२ वेसाख-मासे राञ । क्षहरातस क्षत्रपस नहपानस जामा तरा दीनीक-पुत्रेन उषवदातेन संघस चातुदिसस इमं लेणं नियातितं (।★) दत चानेन अक्षय-निवि काहापण-सहस्रा-

२ नि त्रीणि ३००० संघस चातुदिसस ये इमस्मि लेणे वसांतान (˙) २ भविसंति-चिवरिक कुशाणमूले च (।★) एते च काहापणा प्रयुता गोवधनं वाथवासु श्रेणिसु (।★) कोलीक-निकाये २००० वृधि पडिक-शत अपर-कोलीक-निका-

३ ये १००० वधि पा(यू) न-(प)डिक-शत (।★) एते च काहापणा (अ)पडिदातवा वधि-भोजा (।★) एतो चिवरिक-सहस्रानि बे २००० ये पडिके सते (।★) एतो मम लेणे वसवुथान भिखुनं वीस (।) य एकीकस चिवरिक बारसक (।★) य सहस्र प्रयुतं पायुन-पडिके शते अतो कुशन-

४ मूल (।★) कापूराहारे च गामे चिखलपद्रे दतानि नालिगेरान मुल-सहस्राणि अठ ८००० (।★) एत च सर्व स्रावित (नि)गम-सभाय निबध च फलकवारे चरित्रतो ति (।★) भूयोनेन वसे ४० [+ ★]१ कातिक शुधे पनरस पुवाक वसे ४० [+ ★]५

४ पनरस नियुतं भगवता (˙) देवानं ब्राह्मणानं च कार्षापण-सहस्राणि सतरि ७००० प (˙) चत्रि (˙) शक सुत्रण कृता दिन सुवर्ण-सहस्रणं मूल्य (˙) (॥★)

६ फलकवारे चरित्रतो ति (॥★)

नहपान कालीन नासिक गुहा लेख

वही — वही

ए. इ. भा० ८

१ सोद्धम्-(॥★) राज्ञः क्षहरातस्य क्षत्रपस्य नहपानस्य जामात्रा दीनीक-पुत्रेण उषवदातेन त्रि-गोशत-सहस्रदेन नद्या बार्णासायां सुवर्णदान-तीर्थकरेण देवत (।)भ्यः ब्राह्मणेभ्यश्च षोडश-ग्रामदेन अनुवर्ष ब्राह्मण-शतसाहस्रीभोजापयित्रा

२ प्रभासे पुण्यतीर्थे ब्राह्मणेभ्यः अष्टभार्याप्रदेन भरुकछे दशपुरे गोवर्धने शोर्पारगे च चतुशाला वसध-प्रतिश्रय-प्रदेन आराम-तडाग-उदपान-करेण इबा-पारादा-दमण-तापी-करबेणा-दाह-नुका नावा पुण्य-तर-करेण एतासां च नदीनां उभतो तीरं सभा-

३ प्रपा-करेण पींडीतकावडे गोवर्धने सुवर्णमखे शोर्पारगे च रामतीर्थे चरकपर्षभ्यः ग्रामे नानंगोले द्वात्रीशत-नालीगेर-मूल-सहस्र-प्रदेन गोवर्धने त्रीरश्मिषु पर्वतेषु धर्मात्मना इदं लेणं कारितं इमा च पोढियो (॥★) भटारका-अनातिया च गतोस्मि वर्षा-रतुं मालये (हि) ★ ★ हि रुधं उतमभाद्रं मोचयितुं (।★)

४ तै च मालया प्रनादेनेव अपयाता उतमभद्रकानं च क्षत्रियानं सर्वे परिग्रहा कृता (।★) ततोस्मिं गतो पोक्षरानि (।★) तत्र च मया अभिसेको कृतो त्रीणि च गोसहस्रानि दतानि ग्रामो च (।।★) दत च (ा) नेन क्षेत्र (ं) ब्राह्मणस वाराहि-पुत्रस अश्विभुतिस हथे कीणिता मुलेन काहापण-सहस्रे हि चतुहि ४००० यो स-पितु-सतक नगरसीमायं उत-रापरा (यं दीसायं) (।★) एतोमम लेने वस-

५ तानं चातुदीसस भिखु-सघस मुखाहारो भविसतो (।।★)

नहपान का नासिक गुहालेख

वही वही वही

१ सीधं (।।★) रांञो क्षहरातस क्षत्रपस नहपानस दोहि-

२ तु दीनीक-पुत्रस उषवदातस कुडुंबिनिय दखमित्राय देयधम ओवरको (।।★)

नहपान कालीन कार्ले गुहा लेख

भाषा--प्राकृत प्राप्ति-स्थान--कार्ले पूना महाराष्ट्र

लिपि--ब्राह्मी ए० इ० भा० ७ तिथि--ई. स. १२४

१ सिधं (।।★) रञो खहरातस खतपस नहपानस जा(म)तरा (दीनीक)-पूतेन उसभ-दातेन ति-

२ गो-सतसहस(दे)ण नदीया बणासाया (सु)वण-(ति)थकरेन (देवतान★) ब्राह्म-णन च सोलस-गा

३ म-दे(न★) पभासे पूत-तिथे ब्रह्मणाण अठ-भाया प(देन★) (अ) नुवासं पितु सत-सहसं (भो)-

४ जपयित वलूरकेसु लेण-वासिनं पवजितानं चातुदिसस सघस

५ यापणय गामो (कर)जिको दतो स(वा)न (वा)स-वासितानं (?) (।।★)

नहपान कालीन जुनार गुहा लेख

अ. स. पश्चिम भारत भा० ४

(तिथि ४६ वर्ष)

वही] [वही

१ (राञो★) महखतपस सामि-नहपानस

२ (आ) मतस-वछ-सगोतस अयमस

३ (दे★) (यधम) च (पो★)ढि मटपो च पुअथय वसे ४० [+ ★] ६ कतो (।।★)

चष्टन--रुद्रदामन का अंधौ लेख

ए० इ० भा० १६

(तिथि ५२ वर्ष)

भाषा--प्राकृत प्राप्ति-स्थान--कच्छ

लिपि--ब्राह्मी तिथि--ई० स० १३०

[१]

१ (राञो) (चाष्ट)नस य्सामोतिक पुत्रस राञो रुद्रदामस जयदाम-पुत्रस

२ व(र्षे) (द्वि)प(ं)च(ाशे) (५०) [+★]२ फगुण-बहुलस (द्वि) तिय-वारे(?) मदनेन सीहिल-पुत्रेन (भ)गिनिये जेष्टवीराये

३ (सी)हि(ल-धि)त ओपशति-सगोत्राये लष्टि उथापित (।।★)

[२]

१ (राज्ञो चाष्ट)नस य्सामोतिक-

२ पु(त्र)स राज्ञो (रु)द्रदामस

३ जयदाम-पुत्रस वर्षे द्वि-प(ं)-

४ (चा) शे ५० [+★]२ फगुण-बहुलस

५ द्वितीय-वारे (?) २ ऋषभदेवस

६ सीहिल-पुत्रस ओपशति-सगोत्रस

७ भ्रात्र(ा) (मदने)न (सीहि)ल-पुत्रेन

८ लष्टि उथापित (।।★)

[३]

१ राज्ञो चाष्टनस य्सा(ा)मोतिक-पुत्रस राज्ञो रूद्रदामस जयदाम-पुत्रस वर्षे द्विपंचाशे ५० [+★]२

२ फगुण-बहुलस द्वितिय-वा २ यशदताये सोहृमित-धोता शेनिक-सगोत्राये शामणेरिये

३ मदनेन सीहिल-पुत्रेन कुटुबिनिये (लष्टि) उथापिता (।।★)

[४]

१ र(ा)ज्ञो चाष्टनस य्सामोतिक–पु(त्रस) (राज्ञो) रु(द्रदामस) ज(य)दा(म)-

२ पुत्र(स) वर्षे ५०[+★२] फगु(न)-बहुलस (द्वितिय)- वारे (?) २

३ ऋषभदेवस त्रेष्टदत-पुत्र(स) ओपश(ति)-गो (त्र)स

४ वि(त्रा(तिन?) त्रेष्टदतेन श्राम(णे)रेन लष्टि उथापित (।।★)

रुद्रदामन का गिरनार शिलालेख

ए० इ० भा० ८

(तिथि ७२ वर्ष)

भाषा—संस्कृत **प्राप्ति-स्थान—जूनागढ़ (काठियावाड़)**

लिपि—ब्राह्मी **तिथि—ई० स० १५०**

१ सिद्धं (।★) इदं तडाकं सुदर्शनं गिरिनगराद(पि) ★ ★............(मृ★) (त्ति) कोपल-विस्तारायामोच्छ्रय-निस:न्धि-बद्ध-दृढ-सर्व्व-पालीकत्वात्पर्व्वत-पा

२ द-प्रतिस्पर्द्धि-सुश्लि(ष्ट)-(बन्धं★)........(व)जातेनाकृत्रिमेण सेतुबन्धेनोपपन्नं सुप्रति-विहित-प्रनाली-परीवाह-

३ मीढविधानं च त्रिस्क (न्ध★)........नादिभिरनुग्र(है)र्महत्युपचये वर्तते (।★) तदिदं राज्ञो महाक्षत्रपस्य सुगृही-

४ त-नाम्नः स्वामि-चष्टनस्य पौत्र(स्य★) (राज्ञः क्षत्रपस्य सुगृहीतनाम्नः स्वामी-जयदा-

म्न★): पुत्रस्य राज्ञो महाक्षत्रपस्य गुरुभिरभ्यस्त-नाम्नो रु(द्र)दाम्नो वर्षे द्विसप्ततित-
(मे) ७०[+ ★]२

५ मार्गशीर्ष-बहुल-प्र(ति)(पदि–)........सृष्टवृष्टिना पर्ज्जन्येन एकार्णव-भूतायामिव पृथिव्यां कृतायां गिरेरूर्ज्जयतः सुवर्णसिकता-

६ पलाशिनी-प्रभृतीनां नदीनां अतिमात्रोद्वृत्तैर्व्वेगैः सेतुम....(यमा)णानुरूप-प्रतीकार-मपि गिरिशिखर-तरु-तटाट्टालकोपत (ल्प)- द्वारशरणोच्छ्रय-विध्वंसिना युगनिधन-सदृ-

७ श - परम - घोर - वेगेन वायुना प्रमथि(त)-सलिल-विक्षिप्त - जर्ज्जरीकृताव(दी) (र्ण★) (क्षि)प्ताश्म-वृक्ष-गुल्म-लताप्रतानं आ नदी (त) लादित्युद्घाटितमासीत् (।★) चत्वारि हस्त-शतानि वीशदुत्तराण्यायतेन एतावत्येव (वि)स्ती(र्णे)न

८ पंचसप्तति-हस्तानवगाढेन भेदेन निस्सृत-सर्व्व-तोयं मरु-धन्व-कल्पमतिभृशं दु(र्द)....(।★) ....(स्य)ार्थे मौर्यस्य राज्ञः चन्द्र(गु)(प्त★)-(स्य) राष्ट्रियेण (वै)श्येन पुष्यगुप्तेन कारितं अशोकस्य मौर्यस्य (कृ★)ते यवनराजेन तुष (ा) स्फेनाधिष्ठाय

९ प्रण(ा)लीभिरल(ं)कृत(ं) (।★) (त)त्कारित(या) च राजानुरूपकृत-विधानया तस्मिं (भे)दे दृष्टया प्रनाडया- वि(स्तृ)त-से) (तु★)........णा आ गर्भात्प्रभृत्यवि (ह) त-समुदि (ता) जलक्ष्मी-धारणागुणतस्सर्व्व-वर्णैरभिगंम्य रक्षणार्थं पतित्वे वृतेन (आ) प्राणोच्छ्वासात्पुरुषवधनिवृत्ति-कृत-

१० सत्यप्रतिज्ञेन अन्य(त्र) संग्रामेष्वभिमुखागत-सदृश-शत्रु-प्रहरण-वितरणत्वाविगुणरि (पु★)........त-कारुण्येन स्वयमभिगतजन-पदप्रणिपति (ता★) (यु) षशरणदेन दस्यु-व्याल-मृग-रोगादिभिरनुपसृष्टपूर्व्व-नगर-निगम-

११ जनपदानां स्ववीर्य्यार्जितानामनुरक्त-सर्व्व-प्रकृतीनां पूर्व्वापराकरावन्त्यनूपनीवृदानर्त्त--सुराष्ट्र-श्व(भ्र-मरु-कच्छ-सिन्धु-सौवी)र-कुकुरापरांत-निषादादीनां समग्राणां तत्-प्रभावाद्य (थावत्प्राप्तधर्मार्थ★) काम-विषयाणां विषयाणां पतिना सर्व्वक्षत्राविष्कृत-

१२ वीर-शब्द-जा(तो)त्सेकाविधेयानां यौधेयानां प्रसह्योत्सादकेन दक्षिणापथपतेस्सातकर्णेर्द्विरपि नीर्व्याजमवजीत्यावजीत्य संबंधा-(वि)दूर(त★)या अनुत्सादनात्प्राप्तयशसा (वाद)-........(प्रा★)- (स) विजयेन भ्रष्टराज-प्रतिष्ठापकेन यथार्त्थ-हस्तो-

१३ च्छ्रयार्जितोर्जित-धर्मानुरागेन शब्दार्त्थ-गान्धर्व्व-न्यायाद्यानां-विद्यानां महतीनां पारण-धारण-विज्ञान-प्रयोगावाप्त-विपुल-कीर्त्तिना तुरग-गज-रथचर्य्यासिचर्म-नियुद्धाद्या .. ....ति-परबल-लाघव-सौष्ठव-क्रियेण अहरहर्द्दान-मानान-

१४ वमान-शीलेन स्थूललक्षेण यथावत्प्राप्तैर्बलिशुल्क-भागैः कानक-रजत-वज्रवैडूर्य रत्नोपचय-विष्यन्दमान-कोशेन स्फुट-लघु-मधुर-चित्र-कान्तशब्दसमयोदारालंकृत गद्य-पद्य-(काव्य-विधान-प्रवीणे★) न प्रमाण-मानोन्मान-स्वर-गति-वर्ण्ण-सारसत्वादिभिः

१५ परम-लक्षण-व्यंजनैरुपेत-कान्त-मूर्त्तिना स्वयमधिगत-महाक्षत्रप-नाम्ना नरेन्द्रक (न्या)-स्वयं-

वरानेक-माल्य-प्राप्त-दाम्न(ा) महाक्षत्रपेण रुद्रदाम्ना वर्ष-सहस्राय गो-ब्रा(ह्म)
(ण★)............(र्थं) धर्म्मकीर्त्तिवृद्धयर्थं च अपिडयि (त्वा) ा कर-विष्टि-

१६ प्रणयक्रियाभिः पौरजानपदं जनं स्वस्मात्कोशा महता धनौघेन अनतिमहता च कालेन त्रिगुण-
दृढतर-विस्तारायामं सेतुं विधा(य स★) र्व्वत (टे)....(सु) दर्शन-तरं कारितमिति
(।★) (अस्मि)न्नर्थे

१७ (च) महा (क्ष)त्रप(स्य) मतिसचिव-कर्मसचिवैरमात्य-गुण-समुद्युक्तैरप्यति-महत्वा-
द्भेदस्यानुत्साह-विमुख-मतिभि(:) प्रत्याख्यातारंभ (ं)

१८ पुनःसेतुबन्ध-नैराश्याद्हाहाभूतासु प्रजासु इहाधिष्ठाने पौरजानपदजनानुग्रहार्थं पार्थिवेन
कृत्स्नानामानर्त्त-सुराष्ट्रानां पालनार्थंन्नियुक्तेन

१९ पह्लवेन कुलैप-पुत्रेणामात्येन सुविशाखेन यथावदर्थ-धर्म-व्यवहारदर्शनैरनुरागमभिवर्द्धयता
शक्तेन दान्तेनाचपलेनाविस्मितेनार्य्येणा-हार्य्येण

२० स्वधितिष्ठता धर्म-कीर्त्ति-यशांसि भर्तुरभिवर्द्धयतानुष्ठित(मि)ति (।★)

•

अध्याय १६

गुप्तकालीन प्रशस्तियाँ

ईसा की तीसरी शती से मगध में गुप्त राजाओं का शासन था, किन्तु प्रारम्भिक स्थिति के सम्बन्ध में गुप्त अभिलेख मौन हैं। विष्णु पुराण के आधार पर ज्ञात होता है कि प्रथम चन्द्रगुप्त साकेत एवं प्रयाग से मगध तक के भूभाग पर शासन करता रहा। गुप्तवंश का प्रथम राजा श्रीगुप्त किस स्थान का निवासी था, यह विवादास्पद प्रश्न है किन्तु तीसरे नरेश प्रथम चन्द्रगुप्त की स्वर्णमुद्रा के लेख (Coin-leqeud) यह घोषित करता है कि राजा ने मगध के सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् उत्तरी बिहार के लिच्छवि राजकुमारी श्रीकुमार देवी से विवाह सम्पन्न किया था। इसकी पुष्टि समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में उल्लिखित "लिच्छवि-दौहित्रस्य श्री कुमारदेव्यांमुत्पन्न:" वाक्य से हो जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि गुप्तवंश के लेख प्रारम्भिक अवस्था से साम्राज्य के अन्तिम दिन तक के इतिहास पर प्रकाश डालते हैं। गुप्त इतिहास के जानने के अन्य साधनों—साहित्य, यात्रा विवरण, कला-कृतियों में अभिलेख को प्रमुख स्थान दिया गया है। गुप्तवंश के पचास अभिलेखों का पता चलता है जिनके आधार पर इतिवृत्त तैयार किया गया है। यद्यपि लेखों के विभिन्न रचयिता ने अपने आश्रयदाता की प्रशंसा तथा कीर्ति को अमर बनाने के लिए काव्यमय अभिलेखों को तैयार किया किन्तु उनकी ऐतिहासिकता तथा उल्लिखित वार्ता में संदेह नहीं किया जा सकता। यह आश्चर्यजनक विषय है कि गुप्त सम्राटों के मगध में शासन करने पर भी उत्तर प्रदेश में ही अधिक संख्या में लेख उपलब्ध हुए हैं। संक्षेप में यह कहना उचित होगा कि गुप्त लेखों के अध्ययन से तत्कालीन समस्त विषयों पर प्रकाश पड़ता है।

(१) युद्ध-गाथा (२) राज्यविस्तार (३) धार्मिक चर्चा (४) सामाजिक विवरण (५) आर्थिक वर्णन (६) साहित्य तथा लिपि (७) राजा के विभिन्न कार्य—आखेट, कविता रचना, महादान, अश्वमेध (८) गुप्त साम्राज्य की अवनति एवं विभाजन (९) मगध गुप्त नरेशों का इतिहास (१०) समसामयिक शासकों का वृत्तांत (११) गुप्त लेखों की तिथि तथा राजाओं का शासन काल (१२) गुप्त-संवत्।

गुप्त अभिलेखों का अध्ययन यह बतलाता है कि समुद्रगुप्त द्वारा विजित प्रदेशों पर उसके उत्तराधिकारी सदियों तक राज्य करते रहे। उसी कारण गुप्त शासन की प्रतिष्ठा बनी रही। गुप्तवंश के उत्थान तथा अवनति के वृतांत अभिलेखों के आधार पर जाने जाते हैं।

लेख अंकन के आधार

छठीं सदी तक के गुप्त अभिलेख कई माध्यम से सामने आते हैं। प्राचीन काल में सुविधा के अनुकूल लेख, प्रस्तर खण्ड, स्तम्भ, ताम्रपत्र, सिक्के, मुद्रा तथा प्रतिमा की पीठ पर खोदे गये थे। अन्य लेखों की तुलना में गुप्त अभिलेखों की अपनी विशेषता है। प्रस्तर खण्ड के अतिरिक्त धातुओं का भी

पर्याप्त प्रयोग हुआ था। गुप्तवंश का सर्वप्रथम लेख अशोक स्तम्भ के अधोभाग पर खुदा है। जो आजकल इलाहाबाद के किले में स्थित है। सम्भव है समुद्रगुप्त ने कौशाम्बी के महत्त्व को ध्यान में रखकर अशोक लेख के नीचे अपना लेख उत्कीर्ण करवाया। दक्षिण का मार्ग प्रयाग होकर जाता है, अतएव इसी को ध्यान में रख कर समुद्रगुप्त ने अपना लेख पूर्व स्थित स्तम्भ पर खुदवाया। समुद्रगुप्त ने दिग्विजय के अवसर पर प्रयाग तथा महाकोशल होकर ही दक्षिण की यात्रा की थी। इसी प्रकार गुप्त वंश का अन्तिम सम्राट् स्कन्दगुप्त ने गिरनार पर्वत पर अशोक के धर्मलेख के नीचे अपना लेख खुदवाया था। प्रस्तर के अतिरिक्त द्वितीय चन्द्रगुप्त ने मेहरौली नामक स्थान (दिल्ली के समीप) पर लौह-स्तम्भ स्थिर कर लेख अंकित करवाया जो सैकड़ों वर्षों से धूप तथा वर्षा में ज्यों का त्यों खड़ा है। उस समय से ताम्रपत्रों का भी प्रयोग लेख अंकन के लिए होने लगा। दामोदरपुर (उत्तरी बंगाल) के ताम्रपत्र महत्त्वपूर्ण अभिलेख माने गये हैं। द्वितीय कुमारगुप्त ने चाँदी की मुहर पर भी (भीतरी राजमुद्रा) अभिलेख खुदवाया था। इस प्रकार धातु प्रयोग के अनेक उदाहरण उपस्थित किये जा सकते हैं। प्रस्तर की मूर्तियों के अधोभाग या पीठ (आसन) पर भी लेख अंकित करने की प्रथा विकसित हुई। करमदण्डा शिवलिङ्ग तथा सारनाथ की बौद्ध प्रतिमाएँ दृष्टांत स्वरूप उल्लिखित की जाती हैं जिनके अधोभाग (पीठ) पर लेख खुदे हैं। करमदण्डा शिवलिङ्ग के नीचे चौकोर प्रस्तर पर लेख अंकित हुआ था।

भाषा एवं लिपि

तीन सौ वर्षों तक अंकित गुप्त सम्राटों के लेख उत्तरी भारत से प्राप्त हुए हैं। तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव भी गुप्त लेखों पर प्रकट होता है। गुप्त-पूर्व युग में प्राकृत भाषा का प्रचार था किन्तु गुप्तों ने संस्कृत को राजभाषा स्वीकृत किया। अतः समस्त गुप्तवंशी लेख संस्कृत में लिखे गये। अशोककालीन ब्राह्मी का उत्तरोत्तर विकास हो गया था। गुप्तकालीन लिपि को 'गुप्त-लिपि' का नाम दिया गया जो ब्राह्मी का पूर्ण विकसित रूप है। इसी वंश के लेख कुटिल-लिपि में भी उत्कीर्ण हैं। जैसे मंगरांव लेख इसी से कैथी एवं नागरी विकसित हुई। गुप्त युग में संस्कृत का पठन-पाठन सर्वत्र होता रहा तथा सर्व साधारण जनता संस्कृत से विज्ञ थी। इसी लिये अभिलेखों के अतिरिक्त मुद्रा-लेखों में छंदोबद्ध संस्कृत (उपगीति आदि) लेख अंकित किये गये। तत्कालीन कवियों ने भी साहित्य (संस्कृत) का विकास कर तथा अभिलेख लिख कर अपने आश्रयदाता को अमर बना दिया। समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति चम्पूकाव्य का एक उत्कृष्ट तथा प्राचीन उदाहरण प्रस्तुत करती है। इसके रचयिता हरिषेण का नाम इस लेख के

लेखों के रचयिता

अतिरिक्त अन्यत्र नहीं मिलता। वह समुद्रगुप्त के दरबार का ऊँचा पदाधिकारी था तथा राजा की कीर्ति को अमर बनाने तथा दिग्विजय एवं अश्वमेध की चर्चा निमित्त हरिषेण ने प्रशस्ति की रचना की थी। यह काव्यशैली का सुन्दर उदाहरण है। इसमें स्रग्धरा तथा शार्दूलविक्रीडित आठ छंद हैं। हरिषेण तथा कालिदास के काव्यों में बड़ी समानता है। शब्द तथा भाव की अनोखी समता है। गुप्त लेखों से वीरसेन (उदयगिरि लेख) तथा वत्सभट्टि (मंदसोर लेख) नामक कवियों के नाम भी प्राप्त होते हैं। वीरसेन द्वितीय चन्द्र गुप्त का दरबार कवि था तथा न्याय, व्याकरण एवं राजनीति का प्रकाण्ड पंडित था। प्रथम कुमारगुप्त की मंदसोर प्रशस्ति में उसके

रचयिता वत्सभट्टि का उल्लेख मिलता है। इसकी रचना में दशपुर का मनोरम वर्णन, गृहों का सजीव चित्रण सुन्दर शब्दों में भास्कर की स्तुति पठनीय है। इसकी अलंकृत भाषा की समता कालिदास के अलकापुरी के वर्णन (प्रासादों का) से की जा सकती है। इसके मंदसोर प्रशस्ति में ऋतुओं का वर्णन कालिदास के ऋतु संहार से मिलता-जुलता है। वत्सभट्टि की कविता सरस तथा रसीली है। यह वैदर्भी रीति में लिखे गए काव्य का उत्कृष्ट नमूना है। इसके अतिरिक्त वासुल तथा रविशान्ति के नाम भी पिछले अभिलेखों में उपलब्ध होते हैं। संक्षेप में यह कहना यथार्थ होगा कि गुप्तकालीन प्रशस्तियाँ संस्कृत-साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। कुछ लेखों के रचयिता का नाम नहीं मिलता किन्तु साहित्यिक दृष्टि से पठनीय हैं। स्कन्दगुप्त का गिरनार लेख इसका एक विशिष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसमें सुदर्शन झील के संस्कार की घटना अलंकारिक भाषा में लिखी गई है। इससे जनता में कविता के प्रति अनुराग का पता चलता है।

गुप्त वंश के सभी प्रकार के लेखों की संख्या पचास के करीब है। उनके प्राप्ति-स्थान का विवेचन यह बतलाता है कि इस वंश के अधिक लेख उत्तर प्रदेश में मिले हैं। प्रयाग, मथुरा, गढ़वा, मेहरौली, बिलसद, करमदण्डा, मनकुंवार, कहोम, भितरी, इन्दौर, सारनाथ आदि स्थानों से अधिकतर लेख प्राप्त हुए हैं। इस आधार पर यह सुझाव रक्खा जा सकता है कि गुप्तों की राजधानी प्रयाग थी जिसका नाम विष्णु पुराण में भी आया है। समुद्र ने वहीं रह-कर दक्षिण भारत पर विजय प्राप्त की थी। समुद्रगुप्त का प्रयाग का स्तम्भ लेख इस वंश का सर्वप्रथम प्रशस्ति है। उसके परीक्षण से पता लग जाता है कि गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त ने उत्तरी भारत (आर्यावर्त राज) के शासकों को परास्त कर समस्त उत्तर प्रदेश, मध्यभारत तथा बंगाल के भू-भाग पर गुप्त साम्राज्य विस्तृत किया। किन्तु दक्षिण भारत के नरेशों ने उसकी आज्ञा मानने तथा कर देने की प्रतिज्ञा की थी। इसीलिए उनके (दक्षिणापथ राज ग्रहण मोक्ष) राज्य को सम्मिलित नहीं किया। मथुरा, आगरा, ग्वालियर तथा अलवर के समीप नागवंशी राजाओं को सदा के लिए नष्ट कर दिया। इसी ने प्रजातंत्र राजा—यौधेय, मालवा तथा आर्जुनायन का शासन समाप्त कर दिया। इस प्रकार शान्ति स्थापित कर अश्व-मेध सम्पन्न किया। उसके उत्तराधिकारी द्वितीय चन्द्रगुप्त के लेख विदिसा के समीप उदयगिरि की गुहा तथा साँची के तोरण पर उत्कीर्ण मिले हैं। इससे काठियावाड़, मालवा तथा गुज-रात के विजय की सूचना मिलती है। यद्यपि प्रथम कुमारगुप्त के किसी आक्रमण का उल्लेख नहीं मिलता किन्तु मालवा से लेकर उत्तरी बंगाल तक उसके अभिलेख विस्तृत हैं। मंदसोर (मालवा) प्रशस्ति तथा दामोदरपुर (उत्तरी बंगाल) के ताम्रपत्र उसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। इन प्रदेशों के मध्य अनेक लेख प्राप्त हुए हैं। इसी तरह प्रथम कुमारगुप्त के चौदह प्रकार की स्वर्ण मुद्राएं मिली हैं। उसका अश्वमेध शासक के राजसत्ता की शक्ति का सबल उदाहरण प्रस्तुत करता है। उसके पुत्र स्कन्द के अनेक प्रशस्तियों में जूनागढ़ शिलालेख (काठियावाड़) तथा भितरी स्तम्भलेख विशेष उल्लेखनीय हैं। वह स्कन्दगुप्त के जीवन वृत्त पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। सौराष्ट्र तक पश्चिम में तथा पूरब में बिहार एवं बंगाल तक राज्य विस्तृत था। उत्तर पश्चिम में दिल्ली ही गुप्त साम्राज्य की सीमा प्रकट होती है तथा मेहरौली का

प्राप्ति-स्थान तथा राज्य विस्तार

लौह स्तम्भ द्वितीय चन्द्रगुप्त की कीर्ति को घोषित करता है।

लेखों के प्राप्ति स्थान ही गुप्त साम्राज्य की सीमा बतलाते हैं तथा स्कन्दगुप्त के पश्चात् गुजरात, काठियावाड़ तथा मालवा के पृथक् हो जाने की सूचना अभिलेखों की अनुपस्थिति से मिल जाती है। स्कन्दगुप्त के उत्तराधिकारी उन पश्चिमी प्रदेशों पर अपना प्रभुत्व स्थिर न रख सके। उस भूभाग में किसी प्रकार के लेख या रजत मुद्रा (पश्चिमी शैली) का अभाव है। उस सम्राट् के पश्चात् गुप्त लेख मध्य भारत, बिहार, बंगाल तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश से प्राप्त हुए हैं। यद्यपि प्रथम कुमारगुप्त के पश्चात् उत्तराधिकारका प्रश्न विवादास्पद है किन्तु उस विवादपूर्ण प्रश्न में न जाकर यह कहना उचित होगा कि केवल बुधगुप्त ही गुप्त वंश की प्रतिष्ठा सुरक्षित रख सका। उसके लेख एरण (मध्य प्रदेश) सारनाथ (उत्तर प्रदेश) तथा दामोदरपुर (उत्तरी बंगाल) से प्राप्त हुए हैं जिस आधार पर गुप्त राज्य का विस्तार प्रकट हो जाता है। विष्णुगुप्त, वैन्यगुप्त तथा भानुगुप्त के लेख भी बिहार तथा बंगाल से उपलब्ध हुए हैं किन्तु मागधगुप्त नरेश, मगध के बाहर राज्य विस्तृत न कर सके। मुद्रालेख भी इस विषय पर प्रकाश नहीं डालते। अतएव गुप्त अभिलेखों का अनुशीलन साम्राज्य के क्रमिक विकास तथा ह्रास का चित्र उपस्थित करता है।

वंशावली

गुप्त प्रशस्तियों की एक विशेषता यह है कि जिस शासक के समय में वह प्रशस्ति लिखी जाती थी उसके पूर्वपुरुषों का नाम उसमें अवश्य उल्लिखित किया जाता था। इस वंश के पूर्व लेखों में ऐसी चर्चा नहीं मिलती है। उदाहरण के लिए स्कन्द-गुप्त की प्रशस्तियों में वंश के संस्थापक श्रीगुप्त से लेकर स्कन्द तक के वंशवृक्ष का पूरा वर्णन मिलता है। बिहार स्तम्भ लेख में निम्न प्रकार से वंशावली का उल्लेख मिलता है—'महाराज श्री गुप्त प्रपौत्रस्य महाराज श्री घटोत्कच पौत्रस्य महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त पुत्रस्य लिच्छवी दौहित्रस्य महादेव्याम् कुमारदेव्यामुत्पन्नस्य महाराजाधिराज श्री समुद्रगुप्तस्य पुत्रः तत्परिगृहीतो महादेव्याम् दत्तदेव्यामुत्पन्नः स्वयमप्रतिरथः परमभागवतो महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्तस्य पुत्रः तत्पादानुध्यातो महादेव्याम् ध्रुवदेव्या-मुत्पन्नः परमभागवतो महाराजाधिराज श्री कुमारगुप्तः तस्य पुत्रः तत्पादानुध्यातः परमभागवतो महाराजाधिराज श्री स्कन्दगुप्तः।' इस उद्धरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि गुप्त लेखों से वंश वृक्ष सरलता पूर्वक तैयार किया जाता है। इसी प्रकार आदित्यसेन के अफसाद तथा जीवित-गुप्त के देव बरनार्क लेखों से पिछले गुप्त वंश का वृक्ष तैयार किया गया है। इस मार्ग में इन लेखों से अधिक सहायता मिलती है। स्कन्द गुप्त के लेखों में प्रायः उसे 'गुप्तवंशैकवीरः' या 'गुप्तानां वंशजस्य' कहा गया है। इस प्रकार वंश की प्रशंसा स्थान-स्थान पर उल्लिखित है। इस वंश वृक्ष के विवरण में एक विशेषता यह है कि राजा के पिता का नाम सम्राज्ञी सहित मिलता है। यानी समुद्र कुमार देवी, द्वितीय चन्द्रगुप्त दत्तदेवी प्रथम कुमार गुप्त ध्रुवदेवी का पुत्र कहा गया है। स्कन्द गुप्त की माता का नामोल्लेख न होने के कारण ही उत्तराधिकार का जटिल प्रश्न उपस्थित हो जाता है।

गुप्त अभिलेखों के अध्ययन से कई जटिल प्रश्नों का उत्तर (हल) निकल आता है।

उत्तराधिकार का प्रश्न

प्रथम कुमार गुप्त के पश्चात् गुप्तवंश का कौन उत्तराधिकारी हुआ। यह विचारणीय प्रश्न है। स्कन्द गुप्त अथवा पुरुगुप्त। स्कन्द गुप्त की अन्तिम तिथि ई. स. ४६७ है तथा पुरुगुप्त के पौत्र द्वितीय कुमार गुप्त की तिथि सारनाथ प्रतिमा लेख से गु० स० १५४ (=ई० स० ४७४) ज्ञात है। उसके पश्चात् बुधगुप्त ई० स० ४७७ (गु० स० १५७ + ३२०) में शासन करता था। अतएव इन लेखों के परिशीलन से प्रकट हो जाता है कि, स्कन्द गुप्त के पश्चात् ही पुरु के वंशज राज्य करते रहे। पुरु प्रथम कुमार गुप्त के बाद गद्दी पर आया यह प्रमाणित नहीं हो पाता। भितरी स्तम्भ लेख में स्कन्द 'गुप्तवंशैक वीर' कहा गया है तथा उसी स्थान पर पुष्यमित्र (हूण) के पराजय का वर्णन हैं। अतएव प्रथम कुमार के पश्चात् स्कन्द ही सिंहासनारूढ़ हुआ उसके पश्चात् पुरुगुप्त के वंशज राज्य करते रहे।

शासन तिथियाँ तथा गुप्त सम्वत्

गुप्तवंश के प्रायः समस्त लेखों में तिथि का उल्लेख पाया जाता है। द्वितीय चन्द्रगुप्त के लिए ८२, ९२, प्रथम कुमार गुप्त के लिए ११७ तथा स्कन्द के लिए १३६ आदि का उल्लेख किया गया है। यह निश्चित् है कि ये शासन अवधि के द्योतक नहीं हैं। इनका सम्बन्ध गुप्त सम्वत् से माना जाता है। वह सम्वत् सन् ३१९ में (विशेष विवरण के लिए भूमिका देखिए लेखक का गुप्त साम्राज्य का इतिहास भाग १ परिशिष्ट) प्रारम्भ हुआ था। अतएव द्वितीय चन्द्रगुप्त ई० स० ४०१ से पहले शासक हो गया था (३१९ + ८२=४०१ ई०)। स्कन्दगुप्त के जूनागढ़ प्रशस्ति में १३६ तथा १३७ वर्षों का वर्णन है यानी (१३६ + ३१९ = स० ४५५ ई०) पाँचवीं सदी के अन्तिम भाग में सौराष्ट्र पर स्कन्द गुप्त का अधिकार था। इन्दोर ताम्रपत्र की तिथि १४६ (= सन् ४६६ ई०) मानी गई है। उसके पश्चात् स्कन्द गुप्त ने हूणों से युद्ध किया था। अतएव भितरी स्तम्भ लेख के आधार पर सन् ४६७ में युद्ध की तिथि निश्चित् की जा सकती है। यही उसकी अन्तिम तिथि थी। उसी के बाद पुरुगुप्त का शासन आरम्भ हो गया जिसका पौत्र द्वितीय कुमार गुप्त (भितरी मुद्रा लेख) सम्भवतः ई० स० ४७४ में शासन करता रहा। यह तिथि उसके सारनाथ प्रतिमा लेख (गु० स० १५४) के आधार पर स्थिर किया जाता है। बुधगुप्त गु० स० १५७ (ई० स० ४७७) में शासन करने लगा। यद्यपि गुप्त वंश की प्रशस्तियों में गुप्त सम्वत् का ही प्रयोग है किन्तु मागध गुप्त नरेशों ने इस सम्वत् में कोई गणना नहीं की। उस समय हर्षवर्धन का उत्तरी भारत में प्रभुत्व था। पिछले गुप्तों से हर्ष की मित्रता थी, स्यात् इसी कारण हर्ष सम्वत् (ई० स० ६०६) का प्रयोग शाहपुर (६६) तथा मंगरोव के (११७) के लेखों में मिलता है। इस गणना के अनुसार आदित्यसेन ई० स० ६७२ में (६६ + ६०६) तथा विष्णुगुप्त ई० स० ७२३ में शासन करता रहा। इस स्थान पर यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि गुप्तों के सामंत गुप्त सम्वत् का ही प्रयोग अपनी प्रशस्तियों में करते रहे।

गुप्तवंश के लेखों का अनुशीलन यह प्रकट करता है कि उस युग में दो प्रकार की शासन पद्धतियाँ प्रचलित थीं। गुप्त नरेश राजतन्त्र के समर्थक थे। समुद्रगुप्त तथा द्वितीय चन्द्रगुप्त ने राज्य विस्तार के लिए अथक परिश्रम किया था। प्रयाग प्रशस्ति में दिग्विजय का

वर्णन समुद्रगुप्त के विचारधारा का अनुमोदन करता है। इसी शासक ने प्रजातन्त्रों को परास्त कर यौधेय, मालव तथा आर्जुयायन आदि प्रजातन्त्र राज्यों को सदा के लिए अन्त कर दिया। उसका पुत्र द्वितीय चन्द्रगुप्त पिता के मार्ग का अनुगामी रहा और पश्चिमी भारत पर आक्रमण कर शकों को परास्त किया। अन्त में सौराष्ट्र, काठियावाड़, मालवा पर अधिकार कर लिया। अन्य गुप्त सम्राट् भी राजतन्त्र शासन प्रणाली के पालक रहे। उनके लेखों के अध्ययन से साम्राज्य के विस्तार का परिज्ञान हो जाता है। प्रायः प्रत्येक लेख में गुप्त सम्राट् को 'महाराजाधिराज' की पदवी से विभूषित किया गया है। गुप्त प्रशस्तियों के विश्लेषण से प्रकट हो जाता है कि गुप्त सम्राट् मन्त्रियों के सहारे शासन करते रहे। प्रयाग प्रशस्तिकार हरिषेण समुद्रगुप्त के शासनकाल में तीन पदों को सुशोभित कर चुका था। सन्धिविग्रहिक (विदेश मन्त्री) महादण्डनायक (मुख्य न्यायाधीश) तथा कुमारामात्य (प्रांतीय राज्यपाल का सलाहकार) की पदवियाँ हरिषेण के लिए प्रयुक्त हैं। यह सम्भव नहीं कि वह एक साथ तीनों पदों पर काम करता हो। करमदण्डा लेख में द्वितीय चन्द्रगुप्त का मन्त्री शिखर स्वामी का उल्लेख है जिसका पुत्र पृथ्वीषेण प्रथम कुमारगुप्त के मन्त्री पद पर आसीन था। स्कन्दगुप्त ने भी सौराष्ट्र के मन्त्री पद के लिए पर्णदत्त को चुना जिसके विभिन्न गुणों का वर्णन जूनागढ़ की प्रशस्ति में मिलता है। इस प्रकार मन्त्री परिषद् की सहायता से गुप्त सम्राट् शासन करते रहे।

गुप्त लेखों में शासन का वर्णन

सुशासन के लिए साम्राज्य का प्रांतों में विभक्त करना आवश्यक हो गया था। इस विचार को दृष्टि में रख कर सौराष्ट्र, मालवा, मध्यदेश (उत्तर प्रदेश) तिराभुक्ति (उत्तरी बिहार) पुण्ड्रवर्द्धन (उत्तरी बंगाल) तथा पाटलिपुत्र के नाम से प्रांतों का बँटवारा हो चुका था। लेखों में उनके नाम यथास्थान आते है। जूनागढ़ का लेख मन्दसोर प्रशस्ति, प्रयाग स्तम्भ लेख, वैशाली की मुहरें, तथा दामोदरपुर ताम्रपत्र इस सम्बन्ध में पठनीय हैं। डॉ० राखालदास बनैर्जी का मत था कि प्रत्येक प्रांत में राज्यपाल के सलाहकार थे जिन्हें कुमारामात्य कहा गया है। दामोदरपुर से प्राप्त ताम्रपत्र कई कारणों से प्रमुख समझे गये हैं। उन पर अंकित लेख शासन सम्बन्धी विषयों पर प्रकाश डालते हैं। उनमें भुक्ति प्रदेश तथा विषय जिला के लिए प्रयुक्त हैं। जिले को सलाहकार समिति का संगठन पाँच वर्ष के लिए किया जाता था। इन लेखों से कर (टैक्स) सम्बन्धी बातों पर विशेष रूप से प्रकाश पड़ता है। ताम्रपत्रों में भूमिविक्रय की बातें उल्लिखित हैं। दामोदरपुर ताम्रपत्रों में वर्णन आता है कि तीन दीनार (सोने की मुद्रा) पर एक कुल्यावाप (माप) भूमि खरीदी जा सकती थी (विशेष विवरण के लिए देखिए मेरी रचना—गुप्त साम्राज्य का इतिहास भाग २) ताम्रपत्रों के अध्ययन से आर्थिक स्थिति, भूमिकर तथा भूमि माप पर प्रकाश पड़ता है।

गुप्त अभिलेखों के अध्ययन से तत्कालीन धार्मिक प्रवृत्ति का परिज्ञान हो जाता है। गुप्त नरेश विष्णु के उपासक थे जिनके लिए प्रशस्तियों तथा मुद्रा लेख में परमभागवत की उपाधि प्रयुक्त है। वैष्णवमत राजधर्म हो गया था। इस कारण अभिलेख विष्णु प्रार्थना से प्रारम्भ दीख पड़ते हैं। मेहरौली में—विष्णोर्ध्वज: स्थापितः तथा स्कन्दगुप्त के जूनागढ़ लेख में "सजयति बिजितार्ति-विष्णुः अत्यन्त-जिष्णु" वाक्य शासकों को वैष्णव धर्मावलम्बी होने का संकेत करते हैं। भितरी

धार्मिक चर्चा

एवं विहार स्तम्भ लेखों में द्वितीय चन्द्रगुप्त, प्रथम कुमार गुप्त तथा स्कन्द को 'परम भागवतो' पदवी से विभूषित किया गया है। दामोदरपुर ताम्रपत्र में 'श्वेतवराह स्वामि' के मंदिर निमित्तदान का उल्लेख है। गुप्त नरेशों के सिक्कों पर लक्ष्मी तथा गरुड़ की आकृतियाँ वैष्णव मत से गहरा सम्बन्ध स्थापित करती हैं। रजत सिक्कों पर शासक के नाम 'परम भागवत' पदवी सहित अंकित है। ऐसे अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं जो वैष्णव धर्म के प्रचार एवं प्रसार के द्योतक हैं। गुप्त काल में वैष्णव मत का बोलबाला था और वैष्णव पूजा रीति का प्रभाव बुद्ध धर्म में भी हो गया। वैन्यगुप्त के ताम्रपत्र लेख (ई० स० ५०८) में वर्णन मिलता है कि उस समय बुद्ध प्रतिमा को गन्ध, पुष्प, धूप, दीप आदि सामग्रियों के द्वारा पूजित करते थे। वैष्णव धर्म से पृथक् व्यक्तियों को विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता थी। अतएव द्वितीय चन्द्रगुप्त के मथुरा लेख में लकुलीश (शैवमत के प्रवर्तक) के शिष्यों का वर्णन है। प्रथम कुमार गुप्त के शासन में करमदण्डा से प्राप्त शिवलिङ्ग के आधार शिला पर शैव-लेख उत्कीर्ण है। लेखों में वर्णन आया है कि सूर्य उपासना के निमित्त श्रेणी द्वारा मंदिर तैयार किया गया था और इन्द्रपुर की नैतिक श्रेणी ने दीप निमित्त दो पल तैल दान दिया था। (इन्दौर ताम्रपत्र) प्रथम कुमार गुप्त का मन्दसोर प्रशस्ति भास्कर तथा सविता की प्रार्थना से आरम्भ हुआ है एवं सूर्य मन्दिर के निर्माण का वर्णन आया है। इस प्रकार अभिलेखों का अध्ययन गुप्त युग में ब्राह्मण धर्म के प्रचार का परिचय देता है। गुप्त युग में शासकों ने धार्मिक सहिष्णुता के कारण बौद्ध कला को प्रोत्साहित किया था जिसका ज्वलन्त उदाहरण सारनाथ शैली की बौद्ध प्रतिमाएँ हैं। यों तो प्रथम कुमार गुप्त के राज्य में बुद्धमित्र ने भगवान् बुद्ध की प्रतिमा स्थापित की थी—नमो बुधान। भगवतो सम्यक सम्बुद्धस्य इयं प्रतिमा प्रतिष्ठापितो भिक्षु बुद्धमित्रेण (मन्त्रकुँआर प्रतिमा लेख)

किन्तु उसके उत्तराधिकारी इससे विमुख न हुए। सारनाथ बुद्ध प्रतिमा (गु० स० १५४ व १५७) लेखों में कुमार गुप्त तथा बुद्ध गुप्त के नाम उल्लिखित हैं। इस परीक्षण से ज्ञात होता है कि वैष्णव धर्म राजकीय मत का स्थान ले चुका था। तो भी सहिष्णुता के कारण अन्य देवताओं की पूजा होती थी।

धार्मिक भावना से प्रेरित होकर राजा तथा प्रजा विभिन्न रूप में दान दिया करते थे। साँची के लेख में बौद्ध संस्था को पचीस दीनार समर्पित करने का वर्णन आया है। ग्रामदान का अत्यधिक विवरण लेखों में मिलता है। व्यक्ति (ब्राह्मण) या संस्था को ग्रामदान का उल्लेख है। प्रथम कुमारगुप्त की प्रशस्तियाँ तथा दानपत्र के अतिरिक्त स्कन्दगुप्त के लेख,-दामोदरपुर ताम्रपत्र, बुधगुप्त का एरण लेख, वैन्यगुप्त का गुर्णधर ताम्रपत्र लेख दान की चर्चा से भरे पड़े हैं। इन उदाहरणों का अधिक विवरण अनावश्यक है किन्तु संक्षेप में यह कहना युक्तिसंगत होगा कि गुप्त अभिलेख किसी न किसी मत से सम्बन्धित अवश्य हैं। दान के विभिन्न रूपों का विशद वर्णन अप्रासंगिक होगा।

गुप्तकालीन लेखों के अध्ययन के आधार पर सामाजिक अवस्था का भी परिज्ञान हो जाता है। यों तो समाज में चारो वर्णों की स्थिति की जानकारी है पर अभिलेखों के अनुशीलन

से कई विषयों पर प्रकाश पड़ता है। ब्राह्मण जाति का सीधा वर्णन तो नहीं है किन्तु लेखों में नाना गोत्र तथा शाखाओं का उल्लेख मिलता है। गोत्र तथा कार्यों की विभिन्नता के कारण ब्राह्मणों में उपजातियाँ होती गईं। इस प्रकार समाज में क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र जातियाँ वर्तमान थीं। मथुरा के लेख में दो राजपूतों द्वारा मूर्ति दान का वर्णन मिलता है। राजपूत शासकों के शिक्षा के लिए पर्याप्त प्रबंध था। प्रयाग प्रशस्ति में समुद्रगुप्त युद्धकला में दक्ष था और कितने अस्त्र शस्त्र चलाने जानता था। वह साहित्य प्रेमी होने के कारण कविता करता था जिस कारण उसे 'कविराज' कहा गया है। दामोदरपुर ताम्रपत्र में वैश्य लोगों के व्यापार का वर्णन है जिससे उनकी सुखद स्थिति का परिज्ञान हो जाता है। समाज में सभी सुखी थे और दरिद्रता का नाम तक न था। स्कन्दगुप्त के जूनागढ़ लेख में ऐसा वर्णन आता है—'आर्तो दरिद्रो व्यसनी कदर्यो, दण्ड न वा यो भृश पीडित स्यात्।' इससे स्पष्ट प्रकट होता है कि प्रत्येक वर्ग के लोग अपना कार्य करते थे। सभी वैभवपूर्ण थे। गुप्त लेखों में सामाजिक दशा के अध्ययन के लिए प्रचुर सामग्री मिलती है। उच्च वर्ण के लोग अपनी विद्वत्ता, शुद्ध आचरण तथा व्यवहार कुशलता के लिए आदर के पात्र थे। तत्कालीन समाज में भी आमोद प्रमोद के पर्याप्त साधन थे जो प्रशस्तियों तथा मुद्राओं की समीक्षा से ज्ञात हो जाता है। गुप्तसम्राटों की दिनचर्या में आखेट को भी प्रमुख स्थान था। लेखों का अनुशीलन तथा मूर्तियों के परीक्षण से वस्त्राभूषण का परिज्ञान हो जाता है। उनमें राजाओं के गुण एवं कुशलता के उल्लेख भरे पड़े हैं। गुप्त लेखों में प्राचीन शिक्षा पद्धति का भी विवरण कुछ अंशों में उपलब्ध होता है। आचार्य शिष्य की शिक्षा का भार ग्रहण करता तथा वेद वेदांग का अध्यापन होता रहा। प्रशस्तियों में चौदह प्रकार के विद्यास्थान का वर्णन है। स्मृति तथा पुराणों के अतिरिक्त इतिहास का भी अध्ययन होता था। ताम्रपत्र में "महाभारते शतसहस्रायां संहितायां" वाक्य उल्लिखित है। शिक्षा के प्रसार के लिए गुप्तनरेशों ने अग्रहार दान में दिया। यानी राजाओं ने शिक्षा के प्रचार में हाथ बटाया था।

सामाजिक एवं आर्थिक विवरण

आर्थिक स्थिति का सुधार करने के लिए गुप्त नरेशों ने अथक परिश्रम किया। खेती में सिंचाई का प्रबंध आवश्यक समझ कर स्कन्दगुप्त ने नहरों का निर्माण किया था। पिछले गुप्तराजा आदित्यसेन की पत्नी ने कासार तैयार किया जिसका वर्णन अपसद लेख में आया है। देश की समृद्धि के लिए व्यापार का सुप्रबंध था। व्यापारिक श्रेणियाँ कार्य करती थीं। प्रथम कुमारगुप्त के मंदसोर लेख तथा वैशाली की मुहरों पर उत्कीर्ण लेख से श्रेणी तथा निगम के कार्यों का अनुमान लगाया जा सकता है। समुद्रगुप्त ने समतट डवाक जीतकर भारत से दक्षिण पूर्व एशिया का व्यापारिक सम्बन्ध दृढ़ कर दिया। ताम्रलिप्ति नामक बन्दरगाह से भारतीय पोत चीन तक जाया करते थे। द्वितीय चन्द्रगुप्त ने काठियावाड़ मालवा तथा गुजरात पर विजय कर पश्चिम के व्यापार को अभिवृद्धि की। मालवा की श्रेणियाँ व्यापार में लग गईं। ये समितियाँ जनता के धन को ग्रहण कर सूद दिया करती थीं यानी बैंक का कार्य करती थीं। यही कारण है कि गुप्तवंश के राजाओं ने सोने तथा चाँदी के सिक्कों का अधिक संख्या में प्रचलन किया। उनके सिक्कों के नाम दीनार (मथुरा लेख) तथा रूपक (बैग्राम ताम्रपत्र) का उल्लेख मिलता है। दीनार सोने तथा रूपक चाँदी के सिक्कों के लिए प्रयुक्त हुए

हैं। मूल्यवान धातुओं के अतिरिक्त ताँबा तथा लोहे पर काम किया जाता था। ताम्बे की मूर्तियाँ सुल्तानगञ्ज की बुद्ध प्रतिमा तथा लोहे का मेहरौली स्तम्भ उसके जीवित उदाहरण हैं।

गुप्तवंशी प्रशस्तियाँ

का० इ० इ० भा० इ०

भाषा—संस्कृत — प्राप्ति-स्थान—कौशाम्बी

लिपि—गुप्त लिपि — तिथि—ई० स० ३५० समीप

समुद्रगुप्त का प्रयाग स्तम्भ लेख

१ ....कुल्यैः (?)....स्वै........तस............

२ (यस्य ?)............(॥*) (१*)

३ ....मुं (?) व................

४ (स्फु) रद्वं (?)........क्षः स्फुटोद्ध (ं) सित........प्रवितत........(॥*) (२*)

५ यस्य प्र (ज्ञानु) षङ्गोचित-सुख-मनसः शास्त्र-त(त्व)त्र्थ-भर्त्तुः
— —स्तब्धो ᴗ — — ᴗ नि ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ —नोच्छृ— — ᴗ — — (।*)

६ (स*) त्काव्य-श्री-विरोधान्बुध-गुणित-गुणाज्ञाहतानेव कृत्वा
(वि) द्वल्लोके (ऽ*) वि (ना) (शि*) स्फुटबहु-कविता-कीर्त्ति-राज्यं भुनक्ति
(॥*) (३)

७ (आ*) र्य्यो हीत्युपगुह्य भाव-पिशुनैरुत्कर्णितै रोमभिः
सभ्येषूच्छ्वसितेषु तुल्य-कुलज-म्लानाननोद्वीक्षि(त): (।*)

८ (स्ने)ह-व्यालुलितेन बाष्प-गुरुणा तत्त्वेक्षिणा चक्षुषा
यः पित्राभिहितो नि(रीक्ष्य) निखि(लां*) (पाह्येव*) (मुर्व्वी) मिति ॥ ४ ।

९ (दृ*) ष्ट्वा कर्म्मण्यनेकान्यमनुज-सदृशान्य(द्भु)तोद्भिन्न-हर्षा
भ (ा*) वैरास्वादय (न्तः*) ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ— — ᴗ — — ᴗ(के*)
चित् (।*)

१० वीर्य्योत्तप्ताश्च केचिच्छरणमुपगता यस्य वृत्ते (ऽ*) प्रणामे-
(ऽ*) प्य (र्त्ति ?)- (ग्रस्तेषु ?) — — ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ — — ᴗ
— — ᴗ — —(॥*) (५*)

११ संग्रामेषु स्व-भुज-विजिता नित्यमुच्चापकाराः
श्वः-श्वो मान-प्र ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ — — ᴗ — — ᴗ — —(।*)

१२ तोषोत्तुङ्गैः स्फुट-बहु-रसस्नेह-फुल्लै-र्म्मनोभिः
पश्चात्तापं व ᴗ ᴗ ᴗ ᴗ — — ᴗम (ं ?) स्य (ा) द्वसन्त (म् ?) । ६ ।

१३ उद्वेलोदित-बाहु-वीर्य्य-रभसादेकेन येन क्षणा-
दुन्मूल्याच्युत नागसेन-ग ᴗ — — — ᴗ — — ᴗ —(*)

१४ दण्डैर्ग्राहयतैव कोतकुलजं पुष्पाह्वये क्रीडता
सूर्य्ये (?) नित्य (?)–‿ –‿ तट – – – ‿ – – ‿– (।।★) (७★)

१५ धर्म्म-प्राचीर-बन्धः शशि-कर-शुचयः कीर्त्तयः स-प्रताना
वैदुष्यं तत्त्व-भेदि प्रशम‿‿‿ ु कु—घ—‿ मु (सु ?)—‿ तार्त्थम्

१६ (अध्येयः) सूक्त-मार्ग्गः कवि-मति-विभवोत्सारणं चापि काव्यं
को नु स्याद्यो (ऽ★) स्य न स्याद्गुण-मति (वि)दुषां ध्यानपात्रं य एकः (।।★) (८)

१७ तस्य विविध-समर-शतावतरण-दक्षस्य स्वभुज-बल-पराक्रमैकबन्धोः पराक्रमाङ्कस्य परशु-
शर-शङ्कु-शक्ति-प्रासासि-तोमर-

१८ भिन्दिपाल-न (ा) राच-वैतस्तिकाद्यनेक-प्रहरण-विरूढाकुल-व्रण-शताङ्क-शोभा-समुदयो-
पचित-कान्ततर-वर्ष्मणः

१९ कौसलकमहेन्द्र-माह (ा★) कान्तारकव्याघ्रराज-कौरालकमण्टराज-पैष्टपुरक-महेन्द्रगिरि-
कौट्टूरकस्वामिदत्तैरण्डपल्लकदमन-काञ्चेयकविष्णुगोपावमुक्तक

२० नीलराज-वैङ्गेयकहस्तिवर्म्म-पालक्ककोग्रसेन-दैवराष्ट्रककुबेर-कौस्थलपुरक-धनञ्जय-प्रभृति-
सर्व्वदक्षिणापथराज-ग्रहण-मोक्षानुग्रह-जनित-प्रतापोन्मिश्र-माहाभाग्यस्य

२१ रुद्रदेव-मतिल-नागदत्त-चन्द्रवर्म्म-गणपतिनाग-नागसेनाच्युत-नन्दि-बलवर्म्मा-द्यनेकार्य्यावर्त्त-
राज-प्रसभोद्धरणोद्वृत-प्रभाव-महतः परिचारकीकृत-सर्व्वाटविक-राजस्य

२२ समतट-डवाक-कामरूप-नेपाल-कर्त्तृपुरादि-प्रत्यन्त-नृपतिभिर्म्मालवार्जुनायनयौधेय-माद्रका-
भीर-प्रार्जुन-सनकानीक-काक-खरपरिकादिभिश्च सर्व्व-कर दानाज्ञाकरण-प्रणामागमन-

२३ परितोषित-प्रचण्ड-शासनस्य अनेक-भ्रष्टराज्योत्सन्न-राजवंश-प्रतिष्ठापनोद्भूतनिखिल-भु (व)
न-(विचरण-शा) न्त-यशसः दैवपुत्रषाहिषाहानुषाहि-शकमुरुण्डैः सैंहळकादिभिश्च

२४ सर्व्व-द्वीप-वासिभिरात्मनिवेदन-कन्योपायनदान-गरुत्मदङ्कस्वविषयभुक्तिशासन (य) ा
चनाद्युपाय-सेवा-कृत-बाहु-वीर्य्य-प्रसर-धरणि-बन्धस्य पृथिव्यामप्रतिरथस्य

२५ सुचरित-शतालङ्कृतानेक-गुण-गणोत्सिक्तिभिश्चरण-तल-प्रमृष्टान्य-नरपतिकीर्त्तेः साध्व-
साधूदय-प्रलय-हेतु-पुरुषस्याचिन्त्यस्य भक्तयवनति-मात्र-ग्राह्य-मृदुहृदयस्यानुकम्पावतो-
(ऽ★) नेक-गो-शतसहस्र-प्रदायिन (:)

२६ (कृप) ण-दीनानाथातुर-जनोद्धरण-सन्त्रदीक्षाभ्युपगत-मनसः समिद्धस्य विग्रहवतो लोकानु-
ग्रहस्य धनद-वरुणेन्द्रान्तक-समस्य स्वभुज-बल-विजितानेक-नरपति-विभव-प्रत्यर्प्पणा-नित्य-
व्यापृतायुक्तपुरुषस्य

२७ निशितविदग्धमति-गान्धर्व्वललितैर्व्रीडित-त्रिदशपतिगुरु-तुम्बुरुनारदादेर्व्विद्वज्जनोप-जीव्यानेक-
काव्य-क्रियाभिः प्रतिष्ठित-कविराज-शब्दस्य सुचिर-स्तोतव्यानेकाद्भुतोदार-चरितस्य

२८ लोकसमय-क्रियानुविधान-मात्र-मानुषस्य लोक-धाम्नो देवस्य-महाराज-श्री-गुप्त-प्रपौत्रस्य
महाराज-श्री-घटोत्कच-पौत्रस्य महाराजाधिराज-श्री-चन्द्रगुप्त-पुत्रस्य

२९ लिच्छवि-दौहित्रस्य महादेव्यां कुमारदेव्यामुत्पन्नस्य महाराजाधिराज-श्री-समुद्रगुप्तस्य सर्व्व-पृथिवी-विजय-जनितोदय-व्याप्त-निखिलावनितलां कीर्त्तिमितस्त्रिदशपति-

३० भवन-गमनावाप्त-ललित-सुख-विचरणामाचक्षाण इव भुवो बाहुरयमुच्छ्रितः स्तम्भः (।★) यस्य ।
प्रदान-भुजविक्रम-प्रशम-शास्त्रवाक्योदयै-
रुपर्य्युपरि-सञ्चयोच्छ्रितमनेकमार्गं यशः (।★)

३१ पुनाति भुवनत्रयं पशुपतेर्ज्जटान्तर्गुहा-
निरोध-परिमोक्ष-शीघ्रमिव पाण्डु गाङ्गं (पयः★) (।।★) (९★)
एतच्च काव्यमेषामेव भट्टारकपादानां दासस्य समीप-परिसर्प्पणानुग्रहोन्मीलित-मतेः

३२ खाद्यटपाकिकस्य महादण्डनायक-ध्रुवभूति-पुत्रस्य सान्धिविग्रहिक-कुमारामात्य-म (हाद-ण्डनाय★) क-हरिषेणस्य सर्व्व-भूत-हित-सुखायास्तु ।

३३ अनुष्ठितं च परमभट्टारक-पादानुध्यातेन महादण्डनायक-तिलभट्टकेन ।

समुद्रगुप्त का एरण लेख

वही — प्राप्ति-स्थान—एरण, सागर म० प्र०

१ (संवा★) रिता नृपतयः पृथु-राघवाद्याः (।।★) १
२ (पुत्रो★) बभूव धनदान्तक-तुष्टि-कोप-तुल्यः
३ (पराक★) न-नयेन समुद्रगुप्तः (।★)
४ (यं प्रा★) प्य पार्त्थिव-गणस्सकलः पृथिव्याम्
५ (पर्य★) स्त-राज्य विभव-द्ध तमास्थितो (ऽ★) भूत् (।।★) २
६ (तातेे★) न भक्ति-नय-विक्रम-तोषितेन
७ (यो★) राज-शब्द-विभवैरभिषेचनाद्यैः (।★)
८ (सम्मा★) नितः परम-तुष्टि-पुरस्कृतेन
९ (सोऽयं ध्रु★) (वो) नृपतिरप्रतिवार्य्य-वीर्य्यः (।।★) ३
१० (दत्ता★) स्य-पौरुष-पराक्रम-दत्त-शुल्का
११ (हस्त्य★) श्व-रत्न-धन-धान्य-समृद्धि-युक्ता (।★)
१२ (नित्य★) ङ्गृहेषु मुदिता बहु-पुत्र-पौत्र-
१३ (स★) ङ्क्रामिणी कुलवधुः व्रतिनी निविष्टा (।।★) ४
१४ (यस्यो★) र्जितं समर-कर्म्म पराक्रमेद्धं
१५ (पृथ्व्यां★) यशः सुविपुलम्परिबम्भ्रमीति (।★)
१६ (वीर्या★) णि यस्य रिपवश्च रणोर्ज्जितानि
१७ (स्व★) प्नान्तरेष्वपि विचिन्त्य परित्रसन्ति (।।★) ५
१८ — — ᴗ — ᴗᴗᴗ — ᴗ ᴗ — ᴗ — —
(स्त★) (म्भः?): स्वभोगनगरैरिकिण-प्रदेशे (।★)
१९ — — ᴗ — ᴗᴗᴗ — ᴗᴗ — ᴗ — —

(सं★) स्थापितस्स्वयशसः परिब्रिङ्हनार्त्थम् (॥★)६

समुद्रगुप्त का नालंदा लेख

वही प्राप्ति-स्थान—नालंदा, बिहार

१ १ँ स्वस्ति (।★) महानौ-हस्त्यश्व-जयस्कन्धावारानन्दपुर-वासका-(त्स)-
र्व्वरा-(जोच्छे)त्तु (:★) पृथिव्यामप्रतिरथस्य चतुरुदधि-सलि-(लास्वा)-

२ दित-यशसो धनद-वरुणे(न्द्रा)न्त(क★)-समस्य-कृतान्त-परशोर्न्यायागतानेक-गो-हिरण्य-
कोटि-प्रदस्य (चिरोत्स (न्ना)-

३ श्वमेधाहर्त्तुर्म्महाराज-श्री-गु (प्त★)-प्रपौत्रस्य महाराज-श्री-घटोत्कचपौत्रस्य महारा
(जाधि)राज-(श्री-चन्द्रगुप्त)-पुत्र-

४ स्य लिच्छवि-दौ(हि)त्रस्य महादेव्याङ्कुमारदेव्यामुत्पन्न⌒परमभा (गवतो महाराजा-
धिराज-श्री समुद्रगु) प्तः तावि (र्गु ण्य) (?)-

५ वै (षयिक)भद्रपुष्करकग्राम-क्रिमिलावैषयिकपू(र्णना?) गग्रा (म (योः★)] ब्राह्मणपुरोग★)
ग्राम-व (ल) त्कौशम्या (?) माह (।★)

६ एव (ं★) चाह विदितम्वो भवत्वेषो ग्रा (मौ) (मया) (मा) तापित्त्रोरा (त्मनश्च) पु
(ण्याभिवृद्ध) ये जयभट्टिस्वामिने

७ ★ ★ ★ ★ (सोपरि) करो (द्देशेनाग्र) हा [रत्वे) नातिसृष्टः (।★) तद्युष्माभिर (स्य)

८ त्त्रैविद्यस्य श्रोतव्यमाज्ञा च कर्त्त (व्या) (स) र्व्वे च (स) मुचिता ग्रा- (म★)-प्रत्या-(या★)
मेय हिरण्यादयो देया न चेत ⌒प्र—

९ (भृ) त्यनेन त्त्रै (वि) द्येनान्य-ग्रामादि-करद-कुटुम्बि-(कारुक) ादय⌒प्रवेश(यित)व्या
(म) न्यथ (ा) नियतमाग्रहाराक्षेपः

१० (स्य) ादिति ॥ सम्वत् ५ माघ-दि० २ निवद्धः (।★)

११ अनुग्रामाक्षपटलाधि(कृत)-महापीलूपति-महावलाधि(कृत) त-गोप-स्वाम-(च★)ादेश-
लिखितः (।★)

१२ (कुमा★) र-श्री-चन्द्रगुप्तः (॥★)

द्वितीय चन्द्रगुप्त का मथुरा स्तम्भ-लेख

(ए. ई. भा० २१ पृ० ७)

भाषा—संस्कृत प्राप्ति स्थान-मथुरा उ०प्र०
लिपि—गुप्त तिथि—गु. स. ६१ (= ३७०)

१ सिद्धम् (।★) भट्टारक-महाराज-(राजाधि) राज-श्री-समुद्रगुप्त-स-

२ (त्पु)त्रस्य भट्टारक-म(हाराज) (रा★जाधि)राज-श्री-चन्द्रगुप्त-

३ स्य विज (य★)-राज्य-संवत्स(रे★) (पं)चमे (५) काला वर्त्तमान-सं-

४ वत्सरे एकषष्ठे ६० [+ ★] १·········(प्र)थमे शुक्लदिवसे पं
५ चम्यां (।★) अस्यां पूर्व्वा (यां) (भ)गव(त्कु)शिकाद्दशमेन भगव-
६ त्पराशराच्चतुर्थेन (भगवत्क★)पि(ल)विमल-शि-
७ ष्य-शिष्येण भगव(दुपमित★) विमल-शिष्येण
८ आर्य्योदि (ता★)चार्य्ये(ण★)-पु (ण्या★) प्यायन-निमित्तं
९ गुरूणां च कीर्त्य(र्थमुपमितेश्व)र-कपिलेश्वरौ
१० गुर्व्वायतने गुरु·········प्रतिष्ठापितो (।★) नै-
११ तत्ख्यात्यर्थमभिलि(ख्यते) (।★) (अथ★) माहेश्वराणां वि-
१२ ज्ञप्ति ✕ क्रियते सम्बोधनं च (।★) यथाका(ले)नाचार्या-
१३ णां परिग्रहमिति मत्वा विशङ्क (ं) (पू)जा-पुर-
१४ स्कार (परिग्रह-पारिपाल्यं (कुर्या)दिति विज्ञप्तिरिति (।★)
१५ यश्च कीर्त्य भिद्रोहं कुर्या(त्)द्य(श्चा)भिलिखित(मुप)र्य्यधो
१६ वा(स) पंचभिर्म्महं (।★) पातकैरुपपातकैश्च संयुक्तस्स्यात् (।★)
१७ जयति च भगवा (ण्डण्डः) रुद्रदण्डो (ऽ★) ग्र (ना)यको नित्य (ं) (।।★)

द्वितीय चन्द्रगुप्त का उदयगिरि गुहा-लेख

का. इ. इ. भा. ३.

वही

प्राप्तिस्थान–उदयगिरि विदिशा म० प्र०

तिथि–गु० स० ८२ (= ४०१ ई०)

१ सिद्धम् ।। संवत्सरे ८० (+ ★) २ आषाढ़-मास-शुक्लेकादश्याम् परमभट्टारकमहाराजाधि-(राज★)-श्री-चन्द्र (गु) प्त-पादानुद्धयातस्य ।

२ महाराज-छगलग-पौत्रस्य महाराज-विष्णुदास-पुत्रस्य सनकानिकस्य महा(राज★)
★ ★ लस्यायंदे (यधर्म्मः) ।
सिद्धम् (।।★) (संख्या २)

१ यद(ं)तज्ज्योतिरर्क्काभमुर्व्यां(म्भा) ★ ★ ◡ — ◡ ★ (।★)
★ ★ ★ ★ ◡ — व्यापि चन्द्रगुप्ताख्यमद्भुतम् (।।★) (१)

२ विक्रमावक्रयक्रीता दास्य-न्यग्भूत-पार्त्थिव (ा) (।★)
★ ★ ★ (स) न-संरक्ता धर्म्म ★ ★ ◡ — ◡ ★ (।।★) (२)

३ तस्य राजाधिराजर्षेरचि(न्त्यो)(ज्ज्वल-क★)(र्म्म)णः (।★)
अन्वय-प्राप्त-साचिव्यो व्या (पृत-सन्धि-वि★) ग्रहः (:) (।।★) ३

४ कौत्सश्शाब इति ख्यातो वीरसेनः कुलाख्यया (।★)
शब्दार्त्थ-न्याय-लोकज्ञ ✕ कवि ‿ पाटलीपुत्रकः (।।★) ४

५ कृत्स्न-पृथ्वी-जयार्त्थेन राज्ञैवेह सहागतः (।★)
भक्त्या भगवतश्शम्भोर्ग्गुहामेतामकारयत् (।।★)५

द्वितीय चन्द्रगुप्त का सांची लेख

का. इ. इ. भा. ३.

वही

प्राप्तिस्थान—सांची तोरण विदिसा म० प्र०
तिथि—गु० स० ९३ (= ४१३ ई०)

(सिद्धम् ॥★)

१ का (कना★) दबोट-श्रीमहाविहारे शील-समाधि-प्रज्ञा-गुण-भावितेन्द्रियाय परम-पुण्य-

२ क्षे(त्र) (ग★)ताय चतुर्दिगभ्यागताय श्रमण-पुङ्गवावसथायार्य्य-सङ्घाय महाराजाधि-

३ रा(ज-श्री)चन्द्रगुप्त-पाद-प्रसादाप्यायित-जीवित-साधनः अनुजीवि-सत्पुरुषसद्भाव

४ वृ (त्यर्थं★) जगति प्रख्यापयन् अनेक-समरावाप्त-विजय-यशस्पताकः सुकुलिदेश-न

५ ष्टी ★ ★ ★ वास्तव्य उन्दान-पुत्राम्रकार्द्दवो मज-शरभङ्गाम्रराट-राजकुल-मूल्य-क्री-

६ त (म) ★ ★ ★ ★ ईश्वरवासकं पञ्च-मण्डल्या(ं★) प्रणिपत्य ददाति पञ्चविंशतिश्च दीना-

७ रान् (॥★) ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ यादर्द्धेन महाराजाधिराज-श्रीचन्द्रगुप्तस्य देवराज इति प्रि-

८ य-ना (म्नः★) ★ ★ ★ ★ ★ रितस्य सर्व्व-गुण-संपत्तये यावच्चन्द्रादित्यो तावत्पञ्च भिक्षवो भुंज-

९ तां र (त्न★)-गृ (हे★) (च★) (दी★) (प) को ज्वलतु (।★) मम चापरार्द्धात्पञ्चैव भिक्षवो भुंजतां रत्न-गृहे च

१० दीपक इ(ति) (॥★) (त) देतत्प्रवृत्तं य उच्छिन्द्यात्स गो-ब्रह्म-हत्यया संयुक्तो भवे-त्पश्च-भिश्चान-

११ न्तर्य्येरिति (॥★) सं ९० (+ ★) ३ भाद्रपद-दि ४ (॥★)

द्वितीय चन्द्रगुप्त का मेहरौली स्तम्भ-लेख

वही

प्राप्तिस्थान—मेहरौली दिल्लीसे दस मील
तिथि—पाँचवीं सदी

का० इ० इ० भा० ३

१ य(स्यो)द्वर्त्तयः प्रतीपमु(र)सा शत्रून् समेत्यागता-
न्वङ्गेष्वाहव-वर्त्तिनो (ऽ★)भिलिखिता खड्गेन कीर्त्ति(र्भु)जे (।★)

२ तीर्त्वा सप्तमुखानि येन (स)म(रे) सिन्धोर्ज्जिता (व)ाह्लिकान्
यस्याद्याप्यधिवास्यते जलनिधिर्व्वीर्य्यानिलैर्द्दक्षिणः (॥★) १

३ (खि)न्नस्येव विसृज्य गां नरपतेर्गामाश्रितस्येतरां
मूर्त्या कर्म्म-जितावनिं-गतवतः कीर्त्या स्थितस्य क्षितौ (।★)

४ शान्तस्येव महावने हुतभुजो यस्य प्रतापो महा-
न्नाद्याप्युत्सृजति प्रणाशित-रिपोर्य्यत्नस्य शेषः क्षितिम् (॥★)२

५ प्राप्तेन स्व-भुजार्ज्जितञ्च सुचिरञ्चैकाधिराज्यं क्षितौ
चन्द्राह्वेन समग्र-चन्द्र-(स)दृशीं वक्त्र-श्रियं बिभ्रता (।★)

६ तेनायं प्रणिधाय-भूमि-पतिना भावेन विष्णो मतिं
प्रान्शुर्व्विष्णुपदे-गिरौ भगवतो विष्णोर्ध्वजः स्थापितः (॥★)३

प्रथम कुमारगुप्त का भिलसद स्तम्भ-लेख

वही

प्राप्तिस्थान—बिलसंड, एटा उ० प्र०
तिथि—गु० स० ९६ = ४१५ ई०

का० इ० इ० भा० ३

१ (सिद्धम्॥★) (सर्व्व-राजोच्छेत्तुः पृथिव्यामप्रतिरथस्य चतुरुदधि-स★(लिला)-स्वादित-यशसो

२ (धनद-वरुणेन्द्रान्तक-समस्य कृतान्त-परशोः न्यायागतानेकगो-हि★)रण्यकोटि-प्रदस्य चिरोत्सन्नाश्वमेधाहर्त्तुः

३ (महाराज-श्रीगुप्त-प्रपौत्रस्य महाराज-श्रीघटोत्कच-पौत्रस्य० म★)(हा)राजाधिराज-श्री-चन्द्रगुप्त-पुत्रस्य

४ लिच्छ(वि-दौहित्रस्य★) (महादेव्यां कुमारदेव्यामुत्पन्नस्य महाराजा★) धिराज-श्रीसमुद्रगुप्त-पुत्रस्य

५ महादेव्यां दत्त(देव्यामुत्पन्नस्य) (स्वयमप्रतिरथस्य★) (परम★)-भागवतस्य महाराजा-धिराज-श्रीचन्द्रगुप्त-पुत्रस्य

६ महादेव्यां ध्रुवदेव्यामुत्पन्नस्य महाराजाधिराज-श्रीकुमारगुप्तस्याभि-(व)र्द्धमान-विजय-राज्य-संवत्सरे षण्णवते

७ (अस्यान्दि)वस-पूर्व्वायां भगवतस्त्रैलोक्य-तेजस्संभार-संतताद्भुत-मूर्त्तेर्ब्रह्मण्यदेवस्य

८ ★ ★ ★ ★ निवासिनः स्वामि-महासेनस्यायतने-
(ऽ★)स्मिन्कार्त्तयुगाचार-सद्धर्म्म-वर्त्मानुयायिना (॥★)१

९ (माता) ★ ★ ★ ★ ★ ★ (प)र्षदा (।★)
मानितेन ध्रुवशर्म्मणा कर्म्म महत्कृतेदम् ।(।★)२

१० कु(त्वा) (नेत्र★)ाभिरामां मु (नि-वसति)(मिह★) (स्व)र्ग सोपान-(रू)पां ।
कौबेरच्छन्दबिम्बां स्फटिकमणिदलाभास-गौरां प्रतोलीम् ।

११ प्रासादाग्राभिरूपं गुणवर-भवनं (धर्म्म-स★)त्रं यथावत् ।
पुण्येष्वेवाभिरामं व्रजति शुभमतिस्तात-शर्म्मा ध्रुवो(ऽ★)स्तु ।(।★)३

१२ —ा—ो—स्य ◡—शुभामृतवर-प्रख्यात-ल(ब्धा भुवि) ।
`—`—भक्तिरहीन-सत्व-समता कस्तं न संपूजयेत् ।

१३ (येनापूर्व्व★)-विभूति-सञ्चय-चयैः शैली—◡— —◡—:।
तेनायं ध्रुवशर्म्मणा स्थिर-वरस्तभो(च्छ्रा)यः कारितः । (।★)४

प्रथम कुमारगुप्त का धानाइदह ताम्रपत्र लेख

वही

प्राप्तिस्थान–धानाइदह राजशाही (बंगाल)
तिथि–गु० स० ११३ = ४३२ ई

ए. इ. भा० १७

१ ....(स★)म्वत्सर-श(ते) त्रयोदशोत्त(रे★)

२ (१०० + १० + ३★)............(अस्या★) (न्दि)वस-पूर्व्वायां परमदैवतपर-

३ (म-भट्टारक-महाराजाधिराज-श्रीकुमारगुप्त★)........कुटु(म्बि)........ब्राह्मण-शिवशर्म्म-नागशर्म्म-मह-

४ ....वकोत्ति-क्षेमदत्त-गोष्ठक-वर्गपाल-पिङ्गल-शुङ्कक-काल-

५ ....विष्णु-(देव) शर्म्म-विष्णुभद्र-खासक-रामक-गोपाल-

६ ....श्रीभद्र-सोमपाल-रामाद्यक (?)-ग्रामाष्टकुलाधिकरणञ्च

७ ....विष्णुना (?णा) विज्ञापिता इह खादा (टा?)पार-विषये(ऽ★) नुवृत्तमर्य्यादास्थि(ति)-

८ ....नीवीधर्म्म-क्ष(क्क?)येण लभ्य (ते) (।★) (त)दर्हथ ममाद्यानेनैवक्क्रमेन (?ण)दा (तुं)

९ ....समेत्या (?) भिहितै (:★) सर्व्वमेव ★ ★ कर-प्रतिवेशि(?)-कुटुम्बिभिरव-स्थाप्य क-

१० ....★रि★कन★यदितो★ ★ (त)दवधृतमिति यतस्तथेति प्रतिपाद्य

११ ....(अष्टक-न★)वक-नला (म्या)मपविञ्छ्य क्षेत्र-कुल्यवापमेकं दत्तं (।★) ततः आयुक्तक-

१२ ....★ आ(?)तृकटक-वास्तव्य-छन्दोग-ब्राह्मण-वराहस्वामिनो दत्तं-(।★) त(द्भुव)-

१३ ....भूम्या दा(नाक्षे)पे च गुणागुणमनुचिन्त्य शरीर-क (।★)ञ्चनकस्य चि-

१४ (र-चञ्चलत्वं)........ (।।★) (उ)क्तञ्च भगवता द्वैपायनेन (।★) स्वदत्ताम्पर-दत्ताम्वा

१५ (यो हरेत वसुन्धरां ।★)
(स विष्ठायां क्रुमिर्भूत्वा पितृ★)भिः सह पच्यते (।।★) १
षष्टिं वर्ष-सहस्रानि स्वर्गे मोदति (भू) मिदः (।★)

१६ (आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् ।।★) २
(पू★) र्व्वदत्तां द्विजातिभ्यो यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिर (।★)
महीं (मही) (मताञ्छ्रेष्ठ★)

१७ (दानाच्छ्रेयोऽनुपालनं★)३
..................यं...भद्रेन उत्कीर्ण्णा स्थम्भेश्वरदासे (न) (।।★)

प्रथम कुमारगुप्त को करमदण्डा शिवलिङ्ग-प्रशस्ति

ए० इ० भा० १

वही

प्राप्तिस्थान–करमदण्डा समीप फैजाबाद उ० प्र०
तिथि–गु० स० ११७–४३६ ई०

प्रथम कुमार गुप्त का करमदण्डा लेख

१ नमो महादेवाय । म(हाराजाधिराज-श्री) (चन्द्रगुप्त-पादा★)-
२ नुध्यातस्य चतुरुदधि-सलिलास्वादित-य (शसो) (महाराजा★)
३ धिराज-श्रीकुमारगुप्तस्य विजयराज्य-संवत्स(र)-शते सप्तदशोत्त (रे★)
४ कार्त्तिक-मास-दशम-दिवसे (ऽ★) स्यान्दिवस-पूर्व्वायां (च्छान्दोग्याचार्य्याश्व) वाजि-
५ सगोत्र-कुरम (ा) र (व्या?) भट्टस्य पुत्रो विष्णुपालितभट्टस्तस्य पुत्रोमह (ा) र (ा)-
६ जधिजाजा-श्री चन्द्रगुप्तस्य मन्त्री कुमारामात्यशिखरस्वाम्यभूत्तस्य पुत्रः
७ पृथिवीषेणो महाराजाधिराज-श्रीकुमारगुप्तस्य मन्त्री कुमारामात्यो (ऽ★) न-
८ न्तरं च महाबलाधिकृतः भगवतो महादेवस्य पृथिवीश्वर इत्येवं समाख्यातस्या-
९ स्यैव भगवतो यथा-कर्त्तव्य-धार्मिक-कर्म्मणा पाद-शुश्रूषणाय भगवच्छै-
१० लेश्वरस्वामि-महादेव पादमूले आयोध्यक-नानागोत्रचरण-तपः-
११ स्वाध्याय-मन्त्र-सूत्र-भाष्य-प्रवचन-पारग-भारडिदसमद-देवद्रोण्यां

प्रथम कुमारगुप्त का दामोदरपुर ताम्रपत्र लेख

ए० इ० भा० १५

वही प्राप्तिस्थान दामोदरपुर दीनाजपुर (बंगाल)

तिथि गु० स०–४४४ ई०

१ सम्व १०० (+★) २० (+★)४ फाल्गुण-दि ७ परमदैवत-परम-भट्टारकमहाराज (ा★)-
२ धिराज-श्रीकुमारगुप्ते पृथिवी-पतौ तत्पाद-परिगृहीते पुण्ड्रवर्द्ध (न)-
३ भुक्तावुपरिक-चिरातदत्तेनानुवलवानक-कोटिवर्ष-विषये च त-
४ न्नियुक्तक-कुमारामात्य-वेत्रवर्म्मन्यधिष्ठाणाधिकरणञ्च नगरश्रेष्ठि
५ धृतिपाल-सार्त्थवाहवन्धुमित्र–प्रथमकुलिकधृतिमित्र-प्रथमका(य★)-
६ स्थशाम्बपाल-पुरोगे संव्यवहरति यतः ब्राह्मण-कर्प्पटिकेण
७ विज्ञापित (ं★) अरर्हथ ममाग्निहोत्रोपयोगाय अप्रदाप्रहृत-खि-
८ ल-क्षेत्र (ं★) त्रदीनारिक्य-कुल्यवापेण शश्वताचद्रार्क्क-तारक-भोज्ये (त★)-

पृष्ठ भाग

९ या नीवी-धर्म्मेण दातुमिति एवं दीयतामित्युत्पन्ने त्रिनी दीना (राण्यु★)-
१० पसंगृह्य यतः पुस्तपाल-रिशिदत्त-जयनन्दि-विभुदत्तानामवधा-
११ रणया डोङ्गाया उत्तर-पश्चिमदेशे-कुल्यवापमेकम् दत्तम् (।।★)
भूमि-(दान)-संबद्धा (:★) श्लोका भवन्ति (।★)
१२ स्व-दत्तां पर-दत्ताम्वा यो हरेत वसुन्धरां (।★)
१३ स विष्ठायां क्रिमिर्भूत्वा पितृभिः सह पच्यते ति (।।★) १

प्रथम कुमारगुप्त का दामोदरपुर ताम्रपत्र लेख

वही प्राप्तिस्थान वही

तिथि–गु० स० १२८–४४७ ई०

ए० इ० भा० १५

१ स(ं) १००(+ ★) २० (+ ★) ८ वैशाख-दि १० (+ ★)३ पर- (मदैव)त- परमभट्टा-
रक-महाराजाधिराज-(श्री) (कुमा★)-

२ रगुप्ते पृथिवी-पतौ (तत्पाद)-परिगृहीतस्य पु(ण्ड्र)वर्द्धन-भुक्तावुप-रिक-(चि)रात-
-दत्त (स्य)

३ भोगेना(नुव)ह(मानक)-कोटिव(र्ष)-विषये तन्नियुक्तक-कु(मा)रामात्यवे (त्र)-

४ वर्म्मणि अधिष्ठाना(धिक)र(णञ्च) नगर(श्रे)ष्ठिघृतिपाल-सार्थवा-(हवन्धुमि)
त्र -प्र(थ)-

५ मकुलिकघृतिमित्र-(प्रथ)मकायस्थ(शाम्ब)पाल-पुरो (गे) सम्व्य-(हर)ति (यतः★) स...

६ विज्ञापितं अ(र्ह)थ मम प(ञ्च)-महायज्ञ-प्रवर्त्तनायानुवृत्ताप्रदाक्षय-नि (वी★)-

७ मर्य्यादया दातुमिति एतद्विज्ञाप्यमुपलभ्य पुस्तपा(ल)-रिसिदत्तजयन(न्दि-वि)-(भुदत्ता-
नामव★)-

८ धारणया दीयतामित्यु(त्प)न्ने एतस्माद्य(था)नुवृत्त-त्रैदीनारि(क्य-कु)ल्यवापे (न)

९ (द्व)यमुप(संगृ) हृय (ऐरा)वता (गो)राज्ये पश्चिम-दिशि पञ्चद्रो(णा)-

१० (म) काःह (ट्ट)-पानकैश्च सहितेति दत्ताः (।★) तदुत्तर-कालं सम्व्यवहारिभिः (धर्म्मम-
वेक्ष्या) नु (म)-

११ न्तव्याः (।★) अपि च भूमि-दान-सम्बद्धामिमौ श्लोकौ भवतः (।★) पूर्व-दत्तां द्विजाति-
(भ्यो)

१२ यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिर (।★)
महीं महीवतां श्रेष्ठ दानाच्छेयो (ऽ★) नुपा (ल★) नं (॥★) १
वहुभिर्व्वसुधा दत्ता दो (य) ते च

१३ पुनः पुनः (।★)
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलमिति (॥★) २

प्रथम कुमारगुप्त का मन कुंवार प्रतिमा लेख

वही — का० इ० इ० भा० ३ प्राप्तिस्थान—मनकुंवार (इलाहाबाद उ.प्र.)
तिथि—गु०स० १२९-४४८ ई०

१ १ॅ नमो बुधान (।★) भवगतो सम्यक्सम्बुद्धस्य स्व-मताविरुद्धस्य इय प्रतिमा प्रतिष्ठापिता
भिक्षु-बुद्धमित्रेण

२ सम्वत् १०० (+ ★) २० (+ ★) ९ महाराज-श्रीकुमारगुप्तस्य राज्ये ज्येष्ठमास-दि १०
(+ ★) ८ सर्व-दुक्ख-प्रहानार्थम्- (॥★)

प्रथम कुमारगुप्त का मंदसोर प्रशस्ति

भाषा-संस्कृत — प्राप्तिस्थान—मालवा, राजस्थान
लिपि—गुप्तलिपि — काल—वि.स० ५२९ ई. ४७२

१ (सिद्धम् ।।)

(यो) (वृत्यर्थ) मुपास्यते सुर-गणै (स्सिद्धैश्च) सिद्धर्यर्थिभि-
र्ध्यानैकाग्र-परैव्विधेय-विषयम्मोक्षार्त्थिभिर्य्योगिभिः ।
भक्तया तीव्र-तपोधनैश्च मुनिभिश्शाप-प्रसाद-क्षमै-
र्हेतुर्य्यो जगत × क्षयाभ्युदययो॒पायात्सवो भास्करः । (।★)१
तत्व-ज्ञान-विदो (ऽ★) पि यस्य न विदुर्ब्रह्मर्ष-

२ यो (ऽ★) भ्युद्यता-

× कृत्स्नं यश्च गभस्तिभिः प्रवृसृते॒पु (ष्ण) ।ति लोक-त्रयम् ।
ग(न्ध)र्व्वामर-सिद्ध-किन्नर-नरैस्संस्तूयते (ऽ★) भ्युत्थितो
भक्तेभ्यश्च ददाति यो(ऽ★)भिलषितं तस्मै सवित्रे नमः । (।★) २
य॒(प्र) त्यहं प्रतिविभात्युदयाचलेन्द्र-
विस्तीर्ण्ण-तुङ्ग शिखर-स्खलितांशुजालः (।★)
क्षीबाङ्गना-

३ जन-कपोल-तलाभिताम्र-

॒पायात्स वस्सु(कि)रणाभ(रणो) विवस्वान् । (।★) ३
कुसुमभरानततरुवर-देवकुल-सभा-विहार-रमणियात् ।
लाट-विषयान्नगावृत-शैलाज्जगति प्रथित-शिल्पाः । (।★) ४
ते देश-पार्थिव-गुणापहृताः प्रकाश-
मद्ध्वादिजान्यविरलान्यसुखा-

४ न्यपास्य ।

जातादरा दशपुरं प्रथमं मनोभि-
रन्वागतास्ससुत-बन्धु-जनास्समेत्य ॥५
मत्तेभ-गण्ड-तट-विच्युत-दान-बिन्दु
सिक्तोपलाचल-सहस्र-विभूषणायाः (।★)
पुष्पावनम्र-तरु-मण्ड-वतंसकाया
भूमे॒परन्तिलक-भूतमिदं क्रमेण ॥६
तटोत्थ-वृक्ष-च्युत-

५ नैक-पुष्प-

विचित्र-तीरान्त-जलानि भान्ति ।
प्रफुल्ल-पद्माभरणानि यत्र
सरांसि कारण्डव-संकुलानि ॥७
विलोल-वीचो-चलितारविन्द-
पतद्रजः-पिञ्जरितैश्च हंसैः ।
स्व-केसरोदार-भरावभुग्नैः
क्वचित्सरांस्यम्बुरुहैश्च भान्ति । (।★) ८
स्व-पुष्प-भारावनतैर्न्नगेन्द्रै-
र्मद-

६ प्रगल्भालि-कुल-स्वनैश्च ।
अजस्रगाभिश्च पुराङ्गनाभि-
र्व्वनानि यस्मिन्समलंकृतानि ॥९
चलत्पताकान्यबला-सनाथा
न्यत्यर्थशुक्लान्यधिकोन्नतानि ।
तडिल्लता-चित्र-सिताभ्र-कूट-
तुल्योपमानानि गृहाणि यत्र ॥१०
कैलास-तुङ्ग-शिखर प्रतिमानि चान्या-
न्याभान्ति दीर्घ-वलभी-

७ नि सवेदिकानि ।
गान्धर्व्व-शब्द-मुखरानि निविष्ट-चित्र
कर्म्माणि लोल-कदली-वन-शोभितानि ॥११
प्रासाद-मालाभिरलंकृतानि
धरां विदार्य्येव समुत्थितानि ।
विमान-माला-सदृशानि यत्र
गृहाणि पुर्ण्णेन्दु-करामलानि ॥१२
यद्भात्यभिरम्य-सरिद्वयेन चपलोर्म्मिणा समुपगूढं (।★)

८ रहसि कुच-शालिनीभ्यां प्रीतिरतिभ्यां स्मराङ्गमिव ॥१३
सत्य-(क्षमा)-दम-शम-व्रत-शौच-धैर्य्य-
(स्वाद्धया) य-वृत्त-विनय-स्थिति-बुद्धयुपेतैः ।
विद्या-तपो-निधिभिरस्मयितैश्च विप्रै-
र्य्यद्भ्राजते ग्रहगणै × खमिव प्रदीप्तैः ॥१४
अथ समेत्य निरन्तर-सङ्गतै-
रहरहः-प्रविजृम्भित-

९ सौहृदाः (।★)
नृपतिभिस्सुतवत्प्रतिम (ा) निता
प्रमुदिता न्यवसन्त सुखं पुरे ॥१५
श्रवण-(सु) भग (ं) ध (ा) नुर्व्वे (द्यं) दृढं परिनिष्ठिताः
सुचरित-शतासङ्गा × केचिद्विचित्र-कथाविदः ।
विनय-निभृतास्सम्यग्धर्म्म-प्रसङ्ग-परायणा-
प्रियमपरुषं पत्थ्यं चान्ये क्षमा बहु भाषितुं ॥१६

१० केचित्स्व-कर्म्मण्यधिकास्तथान्यै-
र्व्विज्ञायते ज्योतिममात्मवद्भिः ।
(अद्यापि) चान्ये समर-प्रगल्भा-
(× कु) र्व्वन्त्यरीणामहितं प्रसह्य । (★।) १७

प्राज्ञा मनोज्ञ-वधवः प्रथितोरुवंशा
वंशानुरूप-चरिताभरणास्तथान्ये ।
सत्यव्रताः प्रणयिनामुप कारदक्षा
विस्रम्भ-

११ (पूर्व्वं) मपरे दृढ़-सौहृदाश्च ॥१८
विजित-विषय-सङ्गैर्द्धर्म्मशीलैस्तथान्यै-
(मृ) दुभि (रधि) क-स (त्वैर्ल्लोकयात्रा) मरैश्च ।
स्व-कुल-तिलक-भूतैर्मुक्तरागैरुदारै-
रधिकमभि (वि) भाति श्रेणिरेवंप्रकारैः ॥१९
तारुण्य-कान्त्युपचितो (ऽ★) पि सुवर्ण्ण-हार-
तांबूल-पुष्प-विधिना सम-

१२ (लंकृ) तो (ऽ★) पि ।
नारी-जनः प्रियमुपैति न तावदग्र्यां
यावन्न पट्टमय-वस्त्र-(यु)गानि धत्ते ॥२०
स्पर्श(वता वर्ण्णा)न्तर-विभाग-चित्रेण नेत्र-सुभगेन (।)
यैस्सकलमिदं क्षितितलमलंकृतं पट्टवस्त्रेण ॥२१
विद्याधरी-रुचिर-पल्लव-कर्ण्णपूर-
वातेरिता (स्थि)रतरं प्रतिचिन्त्य

१३ (लो)कं ।
मानुष्यमर्त्थ-निचयांश्च तथा विशालां-
(स्ते)षां शुभा (म) ति (रभूद) चला ततस्तु ॥२२
चतु(स्समुद्रान्त)-विलोल-मेखलां
सुमेरु-कैलास-बृहत्पयोधराम् ।
वनान्त-वान्त-स्फुट-पुष्प-हासिनीं
कुमारगुप्ते प्रिथिवीं प्रशासति ॥२३
समान-धीश्शुक्र-बृहस्पतिभ्यां
ललामभूतो भुवि

१४ पार्त्थिवानां ।
रणेषु यः पार्त्थ-समानकर्म्मा
बभूव गोप्ता नृप-विश्ववर्म्मा ॥२४
दीनानुकंपन-परः कृपणार्त्त-वर्ग-
सन्ध(।)प्रदो (।★ऽ) धिकदयालुरनाथ-नाथः ।
(क) ल्पद्रु मः प्रणयिनामभयं प्रदश्च
भीतस्य यो जनपदस्य च बन्धुरासीत् ॥२५

तस्यात्मजः स्थैर्य्य-नयोपपन्नो
ब(न्धु)-प्रियो

१५ बन्धुरिव प्रजानां।
बंध्वर्त्ति-हर्त्ता नृप-बन्धुवर्म्मा
द्विड्दृप्त-पक्ष-क्षपणैक (द) क्षः ।।२६
कान्तो युवा रण-पटुर्व्विनयान्वितश्च
राजापि सन्नुपसृतो न मदैः स्मयाद्यैः ।
शृङ्गार-मूर्त्तिरभिभात्यनलंकृतो(ऽ★)पि
रूपेण य(ः) कुसुम-चाप इव द्वितीयः ।।२७
वैधव्य-तीव्र-व्यसन-क्षतानां

१६ स्मृत्वा यमद्याप्यरि-सुन्दरीणां ।
भयाद्भवत्यायत-लोचनानां
घन-स्तनायास-करः प्रकम्पः ।।२८
तस्मिन्नेव क्षितिपति-वृषे बंधुवर्म्मण्युदारे
सम्यक्स्फीतं दशपुरमिदं पालयत्युन्नतांसे ।
(शि)ल्पावाप्तैर्द्धन-समुदयैः पट्टवा(यैरु)दारं
श्रे(णीभूतै) र्भवनमतुलं कारितं

१७ दीप्त-रश्मेः ।।२९
विस्तीर्ण्ण-तुङ्ग-शिखरं शिखरि-प्रकाश-
मभ्युद्गतेन्द्वमल-रश्मि-कलाप-(गौ)रं ।
यद्भाति पश्चिम-पुरस्य निविष्ट-कान्त-
चूडामणि-प्रतिसमन्नयनाभिरामं ।।३०
रामा-सनाथ-(र★) चने दर-भास्करांशु-
वह्नि-प्रताप-सुभगे जल-लीन-मीने ।
चन्द्रांशु-हर्म्यतल-

१८ चन्दन-तालवृन्त-
हारोपभोग-रहिते हिम-दग्ध-पद्मे ।।३१
रोद्ध्र-प्रियंगुतरु-कुन्दलता-विकोश-
पुष्पा-(सव)-प्रमु (दि) तालि-कलाभिरामे ।
काले तुषार कण-कर्क्कश-शीत-वात-
वेग-प्रनृत्त-लवली-नगणैकशाखे ।।३२
स्मर-वशग-तरुणजन-वल्लभाङ्गना-विपुल-कान्त-पीनोरु-

१८ स्तन-जघन-घनालिङ्गन-निर्भर्त्सित-तुहिन-हिम-पाते ।।३३
(मा)लवानां गण-स्थित्या या(ते) शत-चतुष्टये ।

त्रिनवत्यधिके (ऽ★) ब्दानामृतौ सेव्य-घनस्तने ॥३४
सहस्यमास-शुक्लस्य प्रशस्ते (ऽ★) ह्नि त्रयोदशे ।
मङ्गलाचार-विधिना प्रासादो (ऽ★) यं निवेशितः ॥३५
बहुना समतीतेन

२० कालेनान्यैश्च पार्थिवैः ।
व्यशीर्य्यतैकदेशो(ऽ★)स्य भवनस्य ततो(ऽ★)धुना ॥३६
स्वयशो-(विद्धये सर्व्वमत्युदा) रमुदारया ।
संस्कारितमिदं भूयः (श्रेण्या) भानुमतो गृहं ॥३७
अत्युन्नतमवदातं नभः(★)स्पृशन्निव-मनोहरैश्शिखरैः ।
शशि-भान्वोरभ्युदयेष्वमल-मयूखायतन-

२१ भूतं ॥३८
वत्सर-शतेषु पंचसु विंशत्यधिकेषु नवसु चाब्देषु ।
यातेष्वभिरम्य-(तप)स्यमास-शुक्ल-द्वितीयायां ॥३९
स्पष्टैरशोकतरु-केतक-सिंदुवार-
लोलातिमुक्तकलता-मदयंतिकानां ।
पुष्पोद्गमैरभिनवैरधिगम्य नून-
मैक्यं विजृंभित-शरे हर-पूत-देहे ॥४०

२२ मधुपान-मुदित-मधुकर-कुलोपगीत-नगनैक-पृथु-शाखे ।
काले नव-कुसुमोद्गम-दंतुर-कांत-प्रचुर-रोद्ध्रे ॥४१
शशिनेव नभो विमलं कौ(स्तु)भ-मणिनेव शार्ङ्गिणो वक्षः ।
भवन-वरेण तथेदं पुरमखिलमलंकृतमुदारं ॥४२
अमलिन-शशि-

२३ लेखा-दुंतुरं पिङ्गलानां
परिवहति समूहं यावदीशो जटानां ।
वि(कच-क) मल-मालामंस-सक्तां च शार्ङ्गी
भवनमिदमुदारं शाश्वतन्तावदस्तु ॥४३
श्रेण्यादेशेन भक्तया च कारितं भवनं रवेः ।
पूर्व्वा चेयं प्रयत्नेन रचिता वत्सभट्टिना ॥४४

२४ स्वस्ति कर्तृ-लेखक-वाचक-श्रोतृभ्यः ।।सिद्धिरस्तु ।।

स्कन्दगुप्त का जूनागढ़ लेख

का० इ० इ० भा० ३

भाषा—संस्कृत **प्राप्तिस्थान—जूनागढ़, (काठियावाड)**
लिपि—गुप्त **तिथि (गु० स० १३६, १३७ व १३८) ४५५, ५६, ४५७ ई०**

१ सिद्धम् ॥

श्रियमभिमतभोग्यां नैककालापनीतां
त्रिदशपति-सुखार्थं यो बलेराजहार ।
कमल-निलयनायाः शाश्वत धाम लक्ष्म्याः
२ स जयति विजितार्त्तिर्विष्णुरत्यन्त-जिष्णुः ॥१
तदनु जयति शश्वत् श्री-परिक्षिप्त-वक्षाः
स्वभुज-जनित-वीर्यो राजराजाधिराजः ।
नरपति-
३ भुजगानां मानदर्प्पोत्फणानां
प्रतिकृति-गरुडा(ज्ञां) निर्व्विषी (ं) चावकर्त्ता ॥२
नृपति-गुन-निकेतः स्कन्दगुप्तः पृथु-श्रीः
चतु रु(दधि जल)ान्तां स्फीत-पर्यन्त-देशाम् ।
४ अवनिमवनतारिर्यः चकारात्म-संस्थां
पितरि सुरसखित्वं प्राप्तवत्यात्म-शक्त्या ॥३
अपि च जित (मे)व तेन प्रथयन्ति यशांसि यस्य रिपवो(ऽ★)पि (।★)
आमूल-भग्न-दर्प्पा नि(र्वचना) (म्लेच्छ-देशेषु) ॥४
५ क्रमेण बुद्धया निपुणं प्रधार्य
ध्यात्वा च कृत्स्नान्गुण-दोष-हेतून् ।
व्यपेत्य सर्व्वान्मनुजेन्द्र-पुत्रां-
ल्लक्ष्मीः स्वयं यं वरयांचकार ॥५
तस्मिन्नृपे शासति नैव कश्चि-
द्धर्म्मादपेतो मनुजः प्रजासु ।
६ आर्त्तो दरिद्रो व्यसनी कदर्यो
दण्ड नवा यो भृश-पीडितः स्यात् ॥६
एवं स जित्वा पृथिवीं समग्रां
भग्नाग्र-दर्पा(न्) द्विषतश्च कृत्वा ।
सर्व्वेषु देशेषु विधाय गोप्तृन्
संचिन्तया (मा)स बहु-प्रकारम् ॥७
स्यात्को(ऽ★)नुरूपो
७ मतिमान्विनितो
मेधा-स्मृतिभ्यामनपेत-भावः ।
सत्यार्जवौदार्य-नयोपपन्नो
माधुर्य-दाक्षिण्य-यशोन्वितश्च ॥८
भक्तो(ऽ—)नुरक्तो नृ-(विशे)ष-युक्तः
सर्व्वोपधाभिश्च विशुद्ध-बुद्धिः ।
अनृण्य-भावोपगतान्तरात्मा ।

सर्व्वस्य लोकस्य हिते प्रवृत्तः ॥९

८ न्यायार्जने(ऽ★)र्थस्य च कः समर्थः
स्यादर्जितस्याप्यथ रक्षणे च ।
गोपायितस्यापि (च) वृद्धि-हेतौ
वृद्धस्य पात्र-प्रतिपादनाय ॥१०
सर्व्वेषु भृत्येष्वपि संहतेषु
यो मे प्रशिष्यान्निखिलान्सुराष्ट्रान् ।
आं ज्ञातमेकः खलु पर्णदत्तो
भारस्य तस्योद्वहने समर्थः ॥११

९ एवं विनिश्चित्य नृपाधिपेन
नैकानहो-रात्र-गणान्स्व-मत्या ।
यः संनियुक्तो(ऽ★)र्थनया कथंचित्
सम्यक्सुराष्ट्रावनि-पालनाय ॥१२
नियुज्य देवा वरुणं प्रतीच्यां
स्वस्था यथा नोन्मनसो बभूवु(:) (।★)
पूर्व्वेतरस्यां दिशि पर्णदत्तं
नियुज्य राजा धृतिमांस्तथाभूत् । (।★)१३

१० तस्यात्मजो ह्यात्मज-भाव-युक्तो
द्विधेव चात्मात्म-वशेन नीतः ।
सर्व्वात्मनात्मेव च रक्षणीयो
नित्यात्मवानात्मज-कान्त रूपः । (।★)१४
रूपानुरूपैर्ललितैर्विचित्रैः
नित्य-प्रमोदान्वित-सर्वभावः ।
प्रबुद्ध-पद्माकर-पद्मवक्त्रो
नृणां शरण्यः शरणागतानाम् । (।★)१५

११ अभवद्भुवि चक्रपालितो(ऽ★)साविति नाम्ना प्रथितः प्रियो जनस्य ।
स्वगुणैरनुपस्कृतैरुदा(त्तै) पितरं यश्च विशेषयांचकार । (।★)१६
क्षमा प्रभुत्वं विनयो नयश्च
शौर्यं विना शौर्य–मह (ा) र्च्चनं च ।
दाक्ष्यं दमो दानमदीनता च
दाक्षिण्यमानृण्यम(शू)न्यता च । (।★) १७
सौंदर्यमार्येतर–निग्रहश्च
अविस्मयो धैर्य्यमुदीर्णता च ।

१२ इत्येवमेते (ऽ★)तिशयेन यस्मि-
न्नविप्रवासेन गुणा वसन्ति । (।★) १८

न विद्यते (ऽ★)सौ सकले(ऽ★)पि लोके
यत्रोपमा तस्य गुणैः क्रियेत ।
स एव कार्त्स्न्येन गुणान्वितानां
बभूव नृणामुपमान-भूतः । (।★) १९
इत्येवमेतानधिकानतो(ऽ★)न्या-
न्गुणान्प(री)क्ष्य स्वयमेव पित्रा ।
यः संनियुक्तो नगरस्य रक्षां
विशिष्य पूर्वान्प्रचकार सम्यक् । (।★) २०

१३ आश्रित्य विर्य्यं–(स्वभु) ज-द्वयस्य
स्वस्यैव नान्यस्य नरस्य दर्पं
नोद्वेजयामास च कंचिदेव-
मस्मिन्पुरे चैव शशास दुष्टाः । (।★) २१
विस्रंभमल्पे न शशाम यो (ऽ–)स्मिन्
काले न लोकेषु स-नागरेषु ।
यो लालयामास च पौरवर्गान्
(स्वस्येव–) पुत्रान्सुपरीक्ष्य दोषान् । (।★) २२
संरंजयां च प्रकृतीर्बभूव
पूर्व्व-स्मिताभाषण-मान-दानैः ।

१४ निर्यन्त्रणान्योन्य-गृह-प्रवेश (:★)
संवर्द्धित-प्रीति-गृहोपचारैः । (।★) २३
ब्रह्मण्य-भावेन परेण युक्तः
(शु)क्लः शुचिर्दानपरो यथावत् ।
प्राप्यान्स काले विषयान्सिषेवे
धर्मार्थयोश्चा(प्य★)विरोधनेन । (।★) २४
(यो—‿———‿‿ पर्णवत्ता)-
स्स न्यायवानत्र किमस्ति चित्रं ।
मुक्ता-कलापाम्बुज-पद्म-शीता-
च्चन्द्रात्किमुष्णं भविता कदाचित् । (।★) २५

१५ अथ क्रमेणाम्बुद-काल आग(ते)
(नि)दाघ-कालं प्रविदार्य तोयदैः ।
ववर्ष तोयं बहु संततं चिरं
सुदर्शनं येन बिभेद चात्वरात् । (।★) २६
संवत्सराणामधिके शते तु
त्रिंशद्भिरन्यैरपि षड्भिरेव ।
रात्रौ दिने प्रौष्ठपदस्य षष्ठे

गुप्त-प्रकाले गणनां विधाय । (।★) २७

१६ इमाश्च या रैवतकाद्विनिर्गता (।★)
पलाशिनीयं सिकता-विलासिनी ।
समुद्र-कान्ताः चिर-बन्धनोषिताः
पुनः पतिं शास्त्र-यथोचितं ययुः । (।★) २८
अवेक्ष्य वर्षागमजं महोद्भ्रमं
महोदधेरूर्जयता प्रियेप्सुना ।
अनेक-तीरान्तज-पुष्प-शोभितो

१७ नदीमयो हस्त इव प्रसारितः । (।★) २९
विषाद्य(मानाः) (खलु) (सर्वतो) (ज) ना (:)
कथं-कथं कार्यमिति प्रवादिनः ।
मिथो हि पूर्वापर-रात्रमुत्थिता
विचिन्तयां चापि बभूवुरुत्सुकाः । (।★) ३०
अपीह लोके सकले सुदर्शनं
पुमां हि दुर्दर्शनतां गतं क्षणात् ।

१८ भवेन्नु सो (ऽ★) म्भोनिधि-तुल्य-दर्शनं
सुदर्शनं—◡◡—◡—◡— (।।★) ३१
◡—◡——◡ वणे स भूत्वा
पितुः परां भक्तिमपि प्रदर्श्य ।
धर्मं पुरो-धाय शुभानुबन्धं
राज्ञो हितार्थं नगरस्य चैव । (।★) ३२
संवत्सराणामधिके शते तु

१९ त्रिंशद्भिरन्यैरपि सप्तभिश्च ।
(गुप्त)-(प्रकाले★) (नय★)-शास्त्र-वेत्ता (?) ।
विश्वो (ऽ★) प्यनुज्ञात-महाप्रभावः । (।★) ३३
आज्य-प्रणामैः विबुधानथेष्ट्वा
धनैर्द्विजातीनपि तर्पयित्वा ।
पौरांस्तथाभ्यर्च्य यथार्हमानैः
भृत्यांश्च पूज्यान्सुहृदश्च दानैः । (।★) ३४

२० ग्रैष्मस्य मासस्य तु पूर्व-प (क्षे)
◡ — ◡ — —(प्र)थमे(ऽ★)ह्नि सम्यक् ।
मास-द्वयेनादरवान्स भूत्वा
धनस्य कृत्वा व्ययमप्रमेयम् । (।★) ३५
आयामतो हस्त-शतं समग्रं
विस्तारतः षष्टिरथापि चाष्टौ ।

२१ उत्सेधतो (ऽ★) न्यत् पुरुषाणि (त?)
◡ — ◡ — (ह) स्त-शत-द्वयस्य । (।★) ३६
बबन्ध यन्त्रान्महता नृदेवा-
न(म्यर्च्य?) सम्यग्घटितोपलेन ।
अ-जाति-दुष्टप्रथितं तटाकं
सुदर्शनं शाश्वत-कल्प-कालम् । (।★) ३७

२२ अपि च सुदृढ-सेतु-प्रान्त (?)-विन्यस्त-शोभ-
रथचरणसमाह्व-क्रौंचहंसास-धूतम् ।
विमल-सलिल— — —◡ — — ◡ — —
भुवि त ◡ ◡ ◡ — — —द(ने) (ऽ★)र्कः शशी च । (।★) ३८

२३ नगरमपि च भूयाद्वृद्धिमत्पौर-जुष्टं
द्विजबहुशतगीत-ब्रह्म-निर्नष्ट-पापं ।
शतमपि च समानामीति दुर्भिक्ष-(मुक्तं★)
◡◡◡◡◡◡ — — —◡— —◡— —(।।★) ३९
(इति) (सुद)र्शन-तटाक-संस्कार-ग्रन्थ रचना (स) माप्ता ।।

द्वितीय अंश

२४ दृप्तारि-दर्प-प्रणुदः पृथु-श्रियः
स्ववङ्श-केतोः- सकलावनी-पतेः ।
राजाधिराज्याद्भुत-पुण्य-(कर्मणः)-
◡ — ◡ — — ◡ ◡ — ◡ — ◡ (।।★) ४०
— — ◡ — — ◡ ◡ — ◡ — —
— — ◡ — — ◡ ◡ — ◡ — — (।★)
द्वीपस्य गोप्ता महतां च नेता
दण्ड-स्थि(ता★)नां

२५ द्विषतां दमाय । (।★) ४१
तस्यात्मजेनात्मगुणान्वितेन
गोविन्द-पादार्पित-जीवितेन ।
— — ◡ — ◡ ◡ — ◡ — —
— — ◡ — — ◡ ◡ — ◡ — — (।।★) ४२
— — ◡ — ◡ ◡ ◡ — ◡ ◡ — ◡ —र्घं
विष्णोश्च पादकमले समवाप्य तत्र ।
अर्थव्ययेन

२६ महता महता च काले-
नात्म-प्रभाव-नत-पौरजनेन तेन । (।★) ४३

चक्रं बिभर्त्ति रिपु — ◡ ◡ — ◡ — —
— — ◡ — ◡ ◡ ◡ — ◡ ◡ — ◡ — — (।★)
— — ◡ — ◡ ◡ ◡ — ◡ ◡ — ◡ — —
तस्य स्व-तंत्र-विधि-कारण-मानुषस्य । (।★) ४४

२७ कारितमवक्र-मतिना चक्रभृत: चक्रपालितेन गृहं ।
वर्षशते (ऽ★) ष्टात्रिंशे गुप्तानां काल-(क्रम-गणिते★) (।।★) ४५
— — ◡ — ◡ ◡ ◡ — ◡ ◡ — ◡ — —
— — ◡ — ◡ ◡ ◡ — ◡ ◡ — ◡ — —(।★)
(स—)ार्थमुत्थितमिवोर्जयतो (ऽ★) चलस्य

२८ कुर्वत्प्रभुत्वमिव भाति पुरस्य मूर्घ्नि ।। ४६
अन्यच्च मूर्द्धनि सु — ◡ ◡ — ◡ — —
— — ◡ — ◡ ◡ ◡ — ◡ ◡ — ◡ — — (।★)

स्कन्द गुप्त का इंदोर ताम्रपत्र-लेख

का० इ० इ० भा० ३

वही

प्राप्तिस्थान—इन्दौर (बुलंदशहर) उ० प्र०
तिथि—गु० स० १४६ = ४६६ ई०

१ सिद्धम् (।।★)
यं विप्रा विधिवत्प्रबुद्ध-मनसो ध्यानैकताना स्तुवः
यस्यान्तं त्रिदशासुरा न विविदुर्न्नोर्ध्वं न तिर्य-

२ ग्गति(म्) (।★)
यं लोको बहु-रोग-वेग-विवशः संश्रित्य चेतोलभः
पायाद्वः स जगत्पि(धा)न-पुट-भिद्रश्म्या-

३ करो भास्करः ।।१
परमभट्टारक-महाराजाधिराज-श्रीस्कन्दगुप्तस्याभिवर्द्धमान-विजय-राज्य-संव्वत्सर-शते षच्च-त्वा

४ (रि★)ङ्शदुत्तरतमे फाल्गुन-मासे तत्प(।★)द-परिगृहीतस्य विषयपति-शर्व्वनागस्यान्तर्व्वेद्यां भोगाभिवृद्धये वर्त्त-

५ माने चन्द्रापुरक-पद्मा-चातुर्व्विद्य-सामान्य-ब्राह्मणदेवविष्णुर्द्देव-पुत्रो हरित्रात-पौत्रः डुडिक-प्रपौत्रः सततान्निहो-

६ त्र-छन्दोगो राणायणीयो वर्षगण-सगोत्र इन्द्रापुरक-वणिग्भ्यां क्षत्रियाचल-वर्म-भृकुण्ठ-सिङ्हाभ्याधिष्ठा-

७ नस्य प्राच्यां दिशीन्द्रपुराधिष्ठान-मांडास्यात-लग्नमेव प्रतिष्ठापितकभगवते सवित्रे दीपोप-योज्यमात्म-यशो-

८ भिवृद्धये मूल्यं प्रयच्छति:(।।★) इन्द्रपुर-निवासिन्यास्तैलिक-श्रेण्या जीवन्त-प्रवराया इतो (ऽ★)षिष्ठानादपक्र म-

९ ण-संप्रवेश-यथास्थिरायाः आजस्रिकं ग्रहपतेर्द्विज-मूल्य-दत्तमनया तु श्रेण्या यदभग्नयोगम्

१० प्रत्यमाह्र्व्य(व★)च्छिन्न-संस्थं देयं तैलस्य तुल्येन पलद्वयं तु २ चन्द्रार्क्कसम-कालीयं(।।★)

११ यो व्यक्क्रमेद्दायमिमं निबद्धम्
गोघ्नो गुरुघ्नो द्विज-घातकः सः (।★)
तैः पातकै (:★)

१२ पञ्चभिरन्वितो (ऽ★) ध-
र्गच्छेन्नरः सोपनिपातकैश्चेति ।।२

स्कन्द गुप्त का भितरी स्तम्भ-लेख

का० इ० इ० भा० ३

भाषा—संस्कृत प्राप्ति-स्थान—भितरी गाजीपुर उ० प्र०
लिपि—गुप्तलिपि काल—पाँचवीं सदी

(सिद्धम् ।।★)

१ (सर्व्व)-रा(जो)च्छेत्तुः पृथिव्यामप्रतिरथस्य चतुरुदधिसलिल(ा)स्वादित-यशसो धनद-वरुणेन्द्र(ा)न्तक-स (मस्य)

२ कृतान्त-परशोः न्यायागत(ा)नेक-गो-हिरण्य-(को)टि-प्रदस्य चिरो(त्स)-न्नाश्वमेधाहर्त्तु-र्महाराज-श्रीगुप्त-प्रपौत्र (स्य)

३ महाराज-श्रीघटोत्कच-प्रौत्रस्य महाराजाधिराज-श्रीचन्द्रगुप्त-पुत्रस्य लिच्छिवि-दौहित्रस्य महादेव्यां कुम(ा)र(दे) व्या-

४ मुत्पन्नस्य महाराजधिराज-श्रीसमुद्रगुप्तस्य पुत्रस्तत्परिगृहीतो महादेव्यान्दत्त-देव्यामुत्पन्नः स्वयं चाप्रतिरथः

५ परम-भागवतो महराजाधिराज-श्रीचन्द्रगुप्तस्य पुत्रस्तत्पादानुद्ध्यातो महादेव्यां ध्रुवदेव्या-मुत्पन्नः परम-

६ भागवतो महाराजाधिर(ा)ज-श्रीकुमारगुप्तस्तस्य
प्रथित-पृथुमति-स्वभाव-शक्तेः
पृथु-यशसः पृथिवी-पतेः पृथु-श्रीः (।★)

७ पि(तृ)-प(रि)गत-पादपद्म-वर्त्ती
प्रथित-यशाः पृथिवी-पतिः सुतो(ऽ★)यम् (।।★) १
जगति भु(ज)-बलाढ्यो गुप्त-वङ्शैक-वीरः
प्रथित-विपुल-

८ धामा नामतः स्कन्दगुप्तः (।★)
सुचरित-चरितानां येन वृत्तेन वृत्तं

न विहतममलात्मा तान-(धीवा?)-विनीतः (।।★) २
विनय-

९ बल-सुनीतैर्व्विक्रमेण क्रमेण
प्रतिदिनमभियोगादीप्सितं येन ल(ब्ध)ा (।★)
स्वमिमत-विजिगीषा-प्रोद्यतानां परेषां
प्रणि-

१० हित इव ले(भे) (स)ंविधानोपदेशः (।।★) ३
विचलित-कुल-लक्ष्मी-स्तम्भनायोद्यतेन
क्षितितल-शयनीने येन नीता त्रियामा (।★)
समु-

११ दित-बल (ल)-कोशा(न्पुष्यमित्रांश्च) (जि) त्वा
क्षितिप-चरणपीठे स्थापितो वाम-पादः (।।★) ४
प्रसभमनुप[मै]र्व्विध्वस्त-शस्त्र-प्रतापै-
र्विन (य-स) मु-

१२ (चितैश्च★) क्षान्ति-शौ(र्ये) र्निरूढ़म् (।★)
चरितममलकीर्त्तेर्ग्गीयते यस्य शुभ्रं
दिशि दिशि परितुष्टैराकुमारं मनुष्यैः (।।★) ५
पितरि दिवमुपे (ते)

१३ विप्लुतां वङ्श-लक्ष्मीं
भुज-बल-विजितारिर्यः प्रतिष्ठाप्य भूयः (।★)
जितमिति परितोषान्मातरं सास्र-नेत्रां
हतरिपुरिव कृष्णो देवकीमभ्युपे -

१४ (त): (।।★) ६
(स्वै) र्द (ण्डैः) ◡ ◡ — ◡ —त्प्रचलितं वङ्शं प्रतिष्ठाप्य यो बाहुभ्याम-
वनिं विजित्य हि जितेष्वार्त्तेषु कृत्वा दयाम् (।★)
नोत्सिक्तो (न) च विस्मितः प्रतिदिनं

१५ संवर्द्धमान-द्युतिः
गीतैश्च स्तुतिभिश्च वन्दक-जनो (?) यं (प्रा) पयत्यार्य्यताम् (।।★) ७
हूणैर्य्यस्य समागतस्य समरे दोर्भ्यां धरा कंपिता
भीमावर्त्त-करस्य

१६ शत्रुषुशरा — — ◡ — — ◡ —(।★)
— — — ◡ ◡ — ◡—विरचितं (?) प्रख्यापितो (दीप्तिदा?)
न द्यो (?) ति◡नमी (?) षु लक्ष्यत इव श्रोत्रेषु गाङ्ग-ध्वनिः (।।★) ८

१७ (स्व)-पितुः कीर्त्ति * * * * * ᴗ — ᴗ * (।*)
* * * * ᴗ * * * * * * ᴗ — ᴗ * (।।*) ९
(कर्त्तव्या) प्रतिमा काचित्प्रतिमां तस्य शार्ङ्गिणः (।*)

१८ (सु)-प्रतीतश्चकारेमां य (वदाचन्द्र-तारकम्) (।।*) १०
इह चैनं प्रतिष्ठाप्य सुप्रतिष्ठित-शासनः (।*)
ग्राममेनं स विद(धे) पितुः पुण्याभिवृद्धये (।।*) ११

१९ अतो भगवतो मूर्त्तिरियं यश्चात्र संस्थितः (?) (।*)
उभयं निर्द्दिदेशासौ पितुः पुण्याय पुण्य-धीरिति (।।*) १२

स्कन्द गुप्त का विहार स्तम्भ-लेख

का० इ० इ० भा० ३

वही

प्राप्तिस्थान–विहार शरीफ (पटना) विहार
तिथि–पाँचवीं सदी

१ ᴗ — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — —
ᴗ — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — — : (।*)
नृ-चन्द्र इन्द्रानुज-तुल्य-वीर्य्यो
गुणैरतुल्यः ᴗ ᴗ — — — (।।*) १

२ — — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — —
— — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — — (।*)
तस्यापि सूनुर्भुवि स्वामि-नेयः
ख्यातः स्व-कीर्त्या ᴗ ᴗ — ᴗ — — (।।*) २

३ ᴗ — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — —
ᴗ — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — — (।*)
(स्व)सैव यस्यातुल-विक्रमेण-
कुमारगु(प्तेन) ᴗ — ᴗ — — (।।*) ३

४ — — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — —
— — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — — (।*)
(पि)त्रिश्च देवांश्च हि हव्य-कव्यैः
सदा नृशंस्यादि ᴗ — ᴗ — — (।।*) ४

५ ᴗ — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — — — ᴗ
ᴗ — ᴗ — — ᴗ ᴗ — ᴗ — ᴗ — (।*)
(अ)चीकरद्देव-निकेत-मण्डलं
क्षितावनौपम्य ᴗ — ᴗ—ᴗ— (।।–) ५

६ ....(स्कन्दगुप्त*) (बटे ?) किल (।*)
स्तम्भ-वरोच्छ्रिय–प्रभासे तु मण्ड...... (।।*) ६

७ ....मिर्वृक्षाणां (।*)
कुसुम-भरानताग्र-(शृंग?)-व्यालम्ब-स्तवक...... (।।*) ७

८ —— ◡ —— ◡ ◡ — ◡ ——
—— ◡—— ◡ ◡ — ◡ —— (।*)
भद्रार्य्यया भाति गृहं नवाभ्र-
निर्म्मोक-निर्मु(क्त) ◡ — ◡ —— (।।*) ८

९ —— ◡—— ◡ ◡— ◡ ——
—— ◡——◡◡ — ◡ —— (।*)
स्कन्द-प्रधानैर्भुवि मातृभिश्च
लोकान्स सुष्य (?) ◡ ◡— ◡ —— (।।*) ९

१० —— ◡—— ◡ ◡ — ◡ ——
—— ◡—— ◡ ◡ — ◡ ——
—— ◡—— ◡ ◡ — ◡ ——
—— ◡ यूपोच्छ्रयमेव चक्रे (।।*) १०

११ ....(स्क*)न्दगुप्त-वटे अन्शानि ३० (+ *) ५ ता (?) प्रकटा-
१२ ....पितुः स्त्रमातुर्य्यद्यस्ति हि दुष्कृतं भजतु तने........
१३ ....काग्रहारे अन्शानि ३ अनन्तसेनेनोप..........

द्वितीय अंश

१४ ....(सर्व्व-राजोच्छे*)त्तुः प्रिथिव्यामप्रतिरथस्य
१५ (चतुरुदधि-सलिलास्वादित-यशसो धनद-वरुणे*)न्द्रान्तकसमस्य कृतान्त
१६ (परशोः न्यायागतानेक-गो-हिरण्य-कोटि-प्रदस्य चिरो*)त्सन्नाश्वमेधाहर्त्तुः
१७ (महाराज-श्रीगुप्त-प्रपौत्रस्य महाराज-श्रीघटो*)त्कच-पौत्रस्य महाराजा-
१८ (धिराज-श्रीचन्द्रगुप्त-पुत्रस्य लिच्छवि-दौहित्रस्य म*)) हादेव्यां कुमारदेव्यामुत्पन्नस्य
१९ (महाराजाधिराज-श्री-समुद्रगुप्तस्य पुत्र*)स्तत्परिगृहीतो महादेव्यां
२० (दत्तदेव्यामुत्पन्नः स्वयं चाप्रतिरथः पर*) मभागवतो महाराजा-
२१ (धिराज-श्रीचन्द्रगुप्तस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुद्ध्या*)तो महादेव्यां ध्रुवदेव्या-
२२ (मुत्पन्नः परम-भागवतो महाराजाधिराज-श्रीकुमारगुप्तस्तस्य*) पुत्रस्तत्पादानुद्ध्यातः
२३ (परम-भागवतो महाराजाधिराज-श्रीस्क*)न्दगुप्तः (।।*)
२४ .... परमभागवतो
२५ (महाराजाधिराज-श्री-स्कन्दगुप्तः*) .... (व*) षयिकाजपुरकसामे (ग्रा) (म*)-
२६ .... ग्रा....क....(अ—)क्षय-नीवी ग्रामक्षेत्रं
२७ .... कु....उपरिक-कुमारामात्य-
२८ .... ज्ञि कुलः(?) वणि (ज*) क-पादितारिक-
२९ .... (आ*)ग्रहारिक-शौल्किक-गौल्मिकासन्यां श्च (?)
३० .... वा (सि)कादीनस्मत्प्रसादोपजीविनः

३१ (समाज्ञापयामि★).... ....वर्म्मणा विज्ञापितो(ऽ★)स्मि मम पितामहेन
३२ ... . नमे भट्ट-गुहिलस्वामिना भद्रा (र्य्य)का
३३ .... (प्र) ति...आघ्रोकय....नाकय.... ....

द्वितीय कुमार गुप्त का सारनाथ प्रतिमा-लेख

आ० स० इ० वा० रि० १९१४-५

वही

सारनाथ वाराणसी उ० प्र०
तिथि—गु०स० १५४ = ४७३ ई०

१ वर्षशते गुप्तानां सचतुःपञ्चाशदुत्तरे (।★)-
भूमिरैक्षति कुमारगुप्ते मासि ज्येष्ठे-द्वितीयायाम् ॥ ०

२ भक्त्यावर्जित-मनसा यतिना पूजार्त्थमभयमित्रेण (।★)
प्रतिमा-प्रतिमस्य गुणै(र)प(रे)यं (का)रिता शास्तुः ॥ २

३ माता-पितृ-गुरु-पू(र्व्वै): पुण्येनानेन सत्व-कायो (ऽ★) यं (।★)
लभतामभिमतमुपशम-ि★ ★ ★ ★ म् ॥ ३

द्वितीय कुमार गुप्त का भितरी मुद्रा-लख

ज० ए० सो० वं० भा० ५८

वही

स्थान—भीतरी गाजीपुर उ० प्र०
तिथि पाँचवीं सदी

१ (सर्व्व)-राजोच्छेत्तु पृथिव्यामप्रतिरथस्य महाराज-श्री (गुप्त)-प्रपौ (त्र)-स्य महाराज-श्रीघटोत्कच-पौत्रस्य म(हा)-

२ (राजा)धिर(ा)ज-श्रीचन्द्रगुप्त-पुत्रस्य लिच्छ (वि-दौहित्रस्य) म(हादे)-व्य (ां) (कुमा) रदेव्यामुत्पन्नस्य महाराजाधिराज-

३ (श्री) समुद्रगुप्तस्य पुत्रस्तत्परि(गृही)तो म(हादेव्या) (न्दत्तदेव्या) मुत्पन्नस्स्वयं च (ा) प्रतिरथ परमभाग-

४ (वतो) (महाराजा) धिराज-चन्द्रगुप्तस्तस्य (पुत्र) स्तत्पाद (ा) नु-(द्धया) तो महादेव्य (ां) (ध्रु) वदेव्यामुत्पन्नो म (हारा)-

५ (जाधि) राज-श्रीकुमार(गुप्त) स्तस्य पुत्रस्तत्पादानुद्धया(तो) महादेव्या-मनन्तदेव्य(ा) मुत्पन्नो महा (रा)-

६ (जाधिरा) ज-श्री (पुरगुप्त) स्तस्य पुत्रस्तत्पादानुद्धय(ातो) महादे(वचां) श्री चन्द्रदेव्यामुत्प(न्नो) म (हा)-

७ (राजाधिरा) ज-श्रीनरसिंहगुप्तस्तस्य (पु) त्रस्त (त्प) ादा (नुद्धयातो) मह- (ादेव्यां) श्रीम (न्मित्र)-

८ (देव्या) मु(त्प) न्न परमभ (ा) गवतो मह (ाराजाधिरा) ज-श्रीकुम(ा) र (गुप्तः॥)

बुधगुप्त का सारनाथ प्रतिमा-लेख

आ. स. इ. वा. रि. १९१४-५

वही — प्राप्तिस्थान–सारनाथ (वाराणसी) उ. प्र.
तिथि गु० स० १५७=४७६ ई०

१ गुप्तानां समतिक्रान्ते सप्तपंचाशदुत्तरे (।★)
शते समानां पृथिवीं बुधगुप्ते प्रशासति ।। १
(वैशाख-मास-सप्तम्यां मूले श्याम-गते★)
मया (।★)
कारिताभयमित्रेण प्रतिमा शाक्य-भिक्षुणा ।।२
इमामुद्दण्ड-सच्छत्र-पद्मास (न-विभूषितां ।★)
(देवपुत्त्रवतो दिव्यां ★)
३ चित्रवि (न्या)-सचित्रितां ।।३
यदत्र पुण्यं प्रतिमां कारयितत्वा मया भृतम् (।★)
माता-(पित्त्रोर्गु) (रूणां च लोकस्य च समाप्तये ।।★) ४

बुधगुप्त का दामोदर पुर ताम्रपत्र-लेख

ए. इ. भा. १५

वही — प्राप्तिस्थान–दामोदरपुर (दीनाजपुर) बंगाल
तिथि गु. स. १६३=४८२ ई.

१ (सं१००★) (+ ★) (६०) (+ ★) ३ आषाढ-दि १० (+ ★) ३ परमदैवत-परम-भट्टा
(र) क-महाराजाधिराज-श्रीबुधगुप्ते (पृथि)वी-पतौ तत्पाद-(परि) गृहीते पुण्ड्र (व)-
२ (र्द्धन) भुक्तावुपरिक-महाराज-ब्रह्मदत्ते संव्यवहरति (।★) स्व(स्ति) (।★) पलाशवृन्द-
कात्सविश्वासं महत्तराद्यष्टकुलाधि (क)-
३ (र)ण-ग्रामिक-कुटुम्बिनश्च चण्डग्रामके ब्राह्मणाद्यान्सक्षुद्र-प्रकृति-कुटुम्बिनः कुशल-मुक्त्वानु-
दर्शयन्ति (यथैवं ?)
४ (वि) ज्ञापयतो नो ग्रामिक-नाभको(ऽ★) हमिच्छे मातापित्रोस्स्वपुण्याप्यायनाय कतिचिद्-
ब्राह्मणार्य्यान्प्रतिवासयितुं
५ (तद)र्हथ ग्रामानुक्रम-विक्रय-मर्य्यादया मत्तो हिरण्यमुपसंगृह्य समुदयबाह्याप्रद-(खिल-
क्षेत्राणा (˙)
६ (प्र)सादं कर्तुमति (।★) यतः पुस्तपाल-पत्रदासेनावधारितं युक्तमनेन विज्ञापित-मस्त्ययं
विक्रय
७ मर्य्यादा-प्रसङ्गस्तद्दीयतामस्य परमभट्टारक-महाराज-पा(दे)न पुण्योपचयायेति (।★)
पुनरस्यैव
८ (पत्रदा) सस्यावधारणयावधृत्य नाभक-हस्ताद्दीनार-(द्वय)मुपसंगृह्य स्थायपाल-कपिल-
श्रीभद्राभ्यामायायकृत्य च समुदय-

९ (बाह्याप्रद★)-(खि) ल-क्षेत्रस्य कुल्यवापमेकमस्य वायिग्रामकोत्तर-पार्श्वस्यैव च सत्यमर्य्या-
दाया दक्षिण-पश्चिम-पूर्व्वेण

१० मह(त्त)राद्यधिकरण-कुटुम्बिभिः प्रत्यवेक्ष्याष्टक-नवक-नवक-नलाभ्याम-पविञ्छच-चतुस्री
मोल्लिङ्कघ च नागदेवस्य

११ (दत्तं) (।★) (तद्) त्तर-कालं संव्यवहारिभिर्द्धर्म्ममवेक्ष्य प्रतिपालनीयमुक्तञ्च मह-
र्षिभिः (।★)
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां।

१२ (स विष्ठा) यां कृमिर्भूत्वा पितृभिस्सह पच्यते (॥★) १
बहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभिस्सगरादिभिः (।★)
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य

१३ तदा फलं (॥★) २
षष्टि वर्ष-सहस्राणि स्वर्ग्गे मोदति भूमिदः (।★)
आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेदिति ॥३

बुधगुप्त का एरण स्तम्भ-लेख

का. इ. इ. भा. ३.

वही

प्राप्तिस्थान—एरण (सागर) म. प्र.
तिथि—गु० स० १६५=४८४ ई०

१ जयति विभुश्चतुर्भुजश्चतुरर्णव-विपुल-सलिल-पर्य्यङ्कः (।)
जगतः स्थित्युत्पत्ति-न्य (यादि★)-

२ हेतुर्ग्गरुड-केतुः (॥★) १
शते पञ्चषष्टचधिके वर्षाणां भूपतौ च बुधगुप्ते।
आषाढ-मास-(शुक्ल)-

३ (द्वा) दश्यां सुरगुरोर्द्दिवसे।(।★) २
सं १०० (+ ★) ६० (+ ★) ५ (॥★)
कालिन्दी-नर्मदयोर्म्मध्यं पालयति लोकपाल-गुणै-
र्ज्जगति महा(राज)-

४ श्रियमनुभवति सुरश्मिचन्द्रे च। (।★) ३
अस्यां संवत्सर-मास-दिवस-पूर्व्वायां स्वकर्म्माभिरतस्य क्रतु-याजि (नः)

५ अधीत-स्वाध्यायस्य विप्रर्षेर्म्मैत्रायणीय-वृषभस्येन्द्रविष्णोः प्रपौत्रेण पितुर्गुणाकारिणो वरुण
(विष्णोः)

६ पौत्रेण पितरमनुजातस्य स्व-वंश-वृद्धि-हेतोर्हरिविष्णोः पुत्रेणात्यन्त-भगवद्भक्तेन विधातु-
रिच्छया स्वयंवरयेव र(ा) ज-

७ लक्ष्म्याधिगतेन चतुःसमुद्र-पर्य्यन्त-प्रथित-यशसा अक्षीण-मानधनेनानेक-शत्रु-समर-जिष्णुना महाराज-मातृविष्णुन(ा)

८ तस्यैवानुजेन तदनुविधायिन(ा) तत्प्रसाद-परिगृ(ही)तेन धन्यविष्णुना च । मातृ-पित्रोः पुण्याप्यानार्थमेष भगवतः ।
पुण्यजनार्द्दनस्य जनार्द्दनस्य ध्वजस्तम्भो (ऽ★)भ्युच्छ्रितः (॥★) स्वस्त्यस्तु गो-ब्राह्मण-(पु) रोगाभ्यः सर्व्व-प्रजाभ्य इति । (।★)

वैन्यगुप्त का गुणैघर ताम्रपत्र-लेख

इ० हि० का० भा० ६

भाषा—संस्कृत प्राप्तिस्थान—गुणैघर (तिपेरा बंगाल)
लिपि—गुप्त तिथि—गु० सं० १८८ = ५०७ ई०

१ स्वस्ति (।।★)महानौ-हस्त्यश्व-जयस्कन्धावारात्क्रीपुराद्भगवन्महादेव-पादा-नुद्ध्यातो महा-राज-श्रीवैन्यगुप्तः

२ कुशली ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ स्वपादोपजीविनश्च कुशलमाशंस्य समाज्ञापयति (।★) विदितं भवतामस्तु यथा

३ मया मातापित्रोरात्मनश्च पु(ण्या)भिवृ(द्ध)ये(ऽ*)स्मत्पाददास-महाराजरुद्रदत्त-विज्ञाप्याद-नेनैव महायानिक-शाक्यभिक्ष्वा-

४ चार्य्य-शान्तिदेवमुद्दिश्य गोप (?) .... (दिग्भागे?) कार्य्यमाण-कार्य्यावलोकितेश्वरा-श्रम-विहारे अनेनै-

५ वाचार्य्येण प्रतिपादित(क?)-महायानिक-वैवर्त्तिक-भिक्षु-संघनाम्परिग्रहे भगवतो बुद्धस्य सततं त्रिष्काल

६ गन्ध-पुष्प-दीप-धूपादि-प्र (वर्त्तनाय–) (त–)स्य भिक्षुसंघस्य च चीवर-पिण्डपात-शयनासन-ग्लानप्रत्ययभैषज्यादि-

७ परिभोगाय विहारे(–च) खण्ड-फुट्ट-प्रतिसंस्कार-करणाय उत्तरमाण्डलिककान्तेडदकग्रामे सर्वतो भो-

८ गनाग्रहारत्वेनैकादश-खिल-पाटकाः पञ्चभिः खण्डैस्ताम्र-पट्टेनातिसृष्टाः (।★) अपि च खलु श्रुति-स्मृती-

९ (ति★)हा(स)-विहितां पुण्यभूमिदान-श्रुतिमैहिकामुत्त्रिक-फल-विशेषे स्मृतो भावतः समुपगम्य स्वतस्तु पी-

१० डामप्यूरीकृत्य पात्रेभ्यो भूमि ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ ★ (।★) द्विष-(?)द्भिरस्म-द्वचन-गौरवात्स्व-यशो-धर्मावाप्तये चैते

११ पाटका अस्मिन्वि(?)हारे शश्वत्कालमभ्य(नुपालयितव्याः ।।★) अनुपालनम्प्रति च भगवता पराशरात्मजेन वेदव्या-

१२ सेन व्यासेन गीताः श्लोकाः भवन्ति (।★)
षष्टिं वर्ष-स(हस्रा)णि स्वर्गे मोदति भूमिदः (।★)

आक्षेप्ता चानुमन्ता च ता-

१३ न्येव न(र★)के वसेत् (॥★) १
स्व दत्तां पर-दत्ताम्वा यो हरेत (वसु)न्धरां (।★)
(स) विष्ठायां कृमिर्भूत्वा पितृभिः सह पच्यते (॥★) २

१४ पूर्व-दत्तां द्विजातिभ्यो यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिर (।★)
महीं महीमतां श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयो(ऽ★)नुपालनं (॥★) ३
वर्त्तमानाष्टाशीत्यु-

१५ त्तर-शत-संवत्सरे पौष-मासस्य चतुर्व्विन्शतितम-दिवसे दूतकेन महाप्रतीहार-महापीलुपति-पञ्चाधि-

१६ करणोपरिक-पाटचुपरिक-(पुर?)पुरपालोपरिक-महाराज-श्रीमहासामन्त-विजयसेने नैतदेका-दश-पाटक-दा-

१७ नायाज्ञामनुभाविताः कुमारामात्य-रेवज्जस्वामी भामह-वत्स-भोगिकाः (॥★) लिखितं सन्धिविग्रहारिकरण-काय-

१८ स्थ-नरदत्तेन (॥★) यत्रैक-क्षेत्रखण्डे नव-द्रोणावापाधिक-सप्त-पाटक-परिमाणे सीमालि-ङ्गानि (।★) पूर्व्वेण गुणेका-

१९ ग्रहारग्राम-सीमा विष्णुवर्धकि-क्षेत्रश्च (।★) दक्षिणेन मिदुविलाल (ऽ?)-क्षेत्रं राज-विहार-क्षेत्रञ्च (।★) पश्चिमन सूरी-नाशी-रम्पूर्ण्णक-

२० क्षेत्रं (।★) उत्तरेण दोषो-भोग-पुष्करिण (ी) ....
(ए★) वम्पियाकादित्य-वन्धुक्षेत्राणाञ्च सीमा (॥★)

२१ द्वितीय-खण्डस्याष्टाविन्शति-द्रोणवाप-परिमाणस्य सीमा (।★) पूर्व्वेण गुणिकाग्रहारग्राम-सीमा (।★) दक्षिणेन पक्क-

२२ विलाल (?)-क्षेत्रं (।★) पश्चिमेन राजविहार-क्षेत्रं (।★) उत्तरेण वैद्य-(?)-क्षेत्रं (॥★) तृतीय-खण्डस्य त्रयोविन्शति-द्रोणवाप-

२३ परिमाणस्य सीमा (★) पूर्व्वेण .... क्षेत्रं (।★) दक्षिणेन नखद्दार्च्चरिक (?)-क्षेत्र-सीमा (।★) पश्चिमेन

२४ ज (जो?) लारी-क्षेत्रं (।★) उत्तरेण नागी-जोडाक-क्षेत्रं (॥★) चतुर्थस्य त्रिंशद्द्रोणवाप-परिमाण-क्षेत्र-खण्डस्य सीमा (।★) पूर्व्वेण

२५ बुद्धाक-क्षेत्र-सीमा (।★) दक्षिणेन कालाक-क्षेत्रं (।★) पश्चिमेन (सू) र्य्य-क्षेत्र-सीमा (।★) उत्तरेण महीपाल-क्षेत्रं (॥★) (प)ञ्चमस्य

२६ पादोन-पाटक-द्वय-परिमाण-क्षेत्र-खण्डस्य सीमा (।★) पूर्व्वेण खण्डवि (ड्ड) ग्गुरिक-क्षेत्रं (।★) दक्षिणेन मणिभद्-

२७ क्षेत्रं (।★) पश्चिमेन यज्ञरात-क्षेत्र-सीमा (।★) उत्तरेण नादडडकग्रामसीमेति (॥★) विहार-तलभूमेरपि सीमा-लिङ्गानि (।★)

२८ पूर्व्वेण चूडामणिनगरश्रीनौयोगयोर्म्मध्ये जोला (।★) दक्षिणेन गणेश्वर-विलाल-पुष्करिण्या नौ-खातः (।★)

२९ पश्चिमेन प्रद्युम्नेश्वर देवकुल-क्षेत्र-प्रान्तः (।★) उत्तरेण प्रडामार-नौयोगखातः (।।★) एतद्विहारप्रावेश्य-शून्यप्रतिकर-

३० हुज्जिक-खिल-भूमेरपि सीमा-लिङ्गानि (।★) पूर्व्वेण प्रद्युम्नेश्वर-देवकुल-क्षेत्र-सीमा (।★) दक्षिणेन शाक्यभिक्ष्वाचार्य्य-जित-

३१ सेन-वैहारिक-क्षेत्रवसा(?)नः (।★) पश्चिमेन हु(?)चात-गंग उत्तरेण दण्ड-पुष्किणी चेति ।। सं १०० (+★) ८० (+★) ८ पोष्य-दि २० (+★) ४ (।।★)

भानुगुप्त का एरण स्तम्भ-लेख

का. इ. इ. भा. ३

वही | प्राप्तिस्थान—एरण (सागर) म. प्र.

तिथि गु० स० १९१ = ५१० ई०

१ १ँ (।।★) संवत्सर-शते एकनवत्युत्तरे श्रावण-बहुलपक्ष-स(प्त)म्य(ां)(।★)

२ संवत् १०० (+★) ९० (+★) १ श्रावण-ब-दि ७।।

★ ★ क्त-वड्शादुत्पन्नो ★★

३ राजेति विश्रुतः (।★)

तस्य पुत्रो (।ऽ★) तिविक्क्रान्तो नाम्ना राजाथ माधवः ।। १

गोपराज (:)

४ सुतस्तस्य श्रीमान्विख्यात-पौरुषः (।★)

शरभराज-दौहित्रः स्व-वड्शा-तिलको (ऽ★) घुना (?) (।।★) २

५ श्री भानुगुप्तो जगति प्रवीरो

राजा महान्पार्थ-समो(ऽ★)ति-शूरः (।★)

तेनाथ सार्द्धन्त्विह गोपर(ाजो)

६ मित्रानु(गत्येन) किलानुयातः ।। ३

कृत्वा (च★) (यु) द्धं सुमहत्प्रक (ा) शं

स्वर्ग्गंगतोदिव्य-न (रे?) (न्द्र-कल्पः★) (।★)

७ भक्तानुरक्ता च प्रिया च कान्ता

भ (र्य्यांव)ल(ग्न)ानुगता(ग्नि)र(ा)शिम् ।। ४

दामोदरपुर ताम्रपत्र-लेख

ए. इ. भा. १५

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—दामोदरपुर (दीनाजपुर) बंगाल

लिपि—गुप्त | तिथि. गु. स. २२४=५४३ ई.

कोटिवर्ष्षाधिष्ठानाधि(करणस्य)

१ स(म्व) २०० (+★) २० (+★) ४ माद्र-दि ५ परमदैवत-परमभट्टारक-म(हा)-राजाधिराज-श्री···

२ प्ते पृथिवीपतौ तत्पाद-परिगृहीते पुण्ड्रवर्द्धन—भुक्तावुपरि (क-महाराजस्य) (महा★)-

३ राजपुत्र-देवभट्टारकस्य हस्त्यश्व-जन-भोगेनानुवहमा(न)के को(टिव)र्ष-विष(ये) च त-
४ न्नियुक्तकेहविषयपति-स्वयम्भुदेवे अधिष्ठानाधिकरण(मृ★) आर्य्य(न)गर-(श्रेष्ठिरिभु) पाल-
५ सार्थवाहस्थाणुदत्त-प्रथमकुलिकमतिदत्त-प्रथमकायस्थस्कन्दपाल-पुरोगे (स)ं व्य(वह) रति
६ अयोध्यक-कुलपुत्रक-अमृतदेवेन विज्ञापितमिह-विषये समुदयबाह्याप्रहतखिल-(क्षे)त्रा-
७ णां त्रिदीनारिक्यकुल्यवाप-विक्रयो(ऽ★) नुवृत्तः तपुर्हंथ मत्तो दीनारानुपसंगृह्य मन्मातुः (पु)ण्या-
८ भिवृद्धये अत्रारण्ये भगवतः श्वेतवराहस्वामिनो देवकुले खण्ड-फुट्ट-प्रति-(सं) स्का (र)-(क)-
९ रणाय बलिचरुसत्रप्रवर्त्तन-गन्धधूपपुष्पप्रापण-मधुपर्क्कदीपाद्युप(यो)गा(य) च
१० अप्रदा-धर्म्मेण ताम्रपट्टीकृत्य क्षेत्र-स्तोकन्दातुमिति (।★) यतः प्रथमपुस्तपाल-नर(न)न्दि-
११ गोपदत्त-भट(?)नन्दिनामवधारणया युक्त(त)या ध(र्म्माधि)कार-(बु)-द्धया विज्ञापित (ं★) ना(त्र★) (वि★)-
१२ षय-पतिना (ं★) कश्चिद्विरोधः केवलं श्री-परमभट्टारकपादेन धर्म्मप(र)
१३ (तावाप्ति) (:★)
१४ इत्यनेनावधारणाक्रमेण एतस्मादमृतदेवात्पञ्चदश-दीनारानुपसंगृह्य एतन्मातु (:★)
१५ अनुग्रहेण स्वच्छन्दपाटके(ऽ★) (ढं) टी-प्रावेश्य-लवङ्गसिकायाञ्च वास्तुभिस्सह कुल्य-वाप-द्वयं
१६ साट्टवनाश्रमके(ऽ★)पि वास्तुना सह कुलवाप एकः परस्यतिकायां पञ्चकुल्य-वापकस्योत्त-(रे)ण
१७ जम्बून(दा): पुर्व्वेण कुल्यवाप एकः पूरणवृन्दिकहरौ पाटक-पूर्व्वेण कुल्यवाप एकः इत्येवं खिल-क्षेत्र-
१८ स्य वास्तुना सह पञ्च कुल्यवापाः अप्रदा-धर्म्मेण भग(व★)ते श्वेतवराहस्वामिने शश्व-त्कालभोग्या दत्ताः (।★)
१९ तदुत्तरकालं संव्यवहारिभिः देवभक्त्यानुमन्तव्याः (।★) अपि च भूमि (दा)न-सम्बद्धाः श्लोका भवन्ति (।★)
२० स्व-दत्तां पर-दत्ताम्वा यो हरेत वसुन्धरां (।★)
स विष्ठायां क्रिमिर्भूत्वा पितृभिस्सह पच्यते (।।★) १
वहुभिर्व्वसुधा दत्ता
२१ राजभिस्सगरादिभिः (।।★)
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तदा फलं (।।★) २
षष्टिं वर्ष्ष-सहस्राणि स्वर्गे मोदति भूमिद
२२ आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेदिति (।।★)३

आदित्यसेन का अपसद शिलालेख

का. इ. इ. ३

भाषा-संस्कृत — प्राप्तिस्थान--नवादा, गया

लिपि-कुटिल — काल--सातवीं सदी ई. स. ६२७

आसीद्दन्तिसहस्रगाढकटको विद्याधराध्यासितः ।
सद्वंशः स्थिर उन्नतो गिरिरिव श्रीकृष्णगुप्तो नृपः ।।

दृप्तारातिमदान्धवारणघटाकुम्भस्थलीः क्षुन्दता ।
यस्यासंख्यरिपुप्रतापजयिना दोष्णा मृगेन्द्रायितम् ॥१॥
सकलः कलङ्करहितः क्षततिमिरस्तोयधेः शशाङ्क इव
तस्मादुदपादि सुतो देवः श्री हर्षगुप्त इति ॥२॥
यो योग्याकालहेलावनतदृढधनुर्भीमबाणौघपाती ।
मूर्तैः स्वस्वामिलक्ष्मीवसतिविमुखितैरो क्षितः साश्रुपातम् ॥
घोराणामाहवानां लिखितमिव जयं श्लाघ्यमाविर्दधानो ।
वक्षस्युद्दामशस्त्रव्रणकठिनकिणग्रन्थिलेखाच्छलेन ॥ ३ ॥
श्री जीवितगुप्तोऽभूत्क्षितीशचूडामणिः सुतस्य ।
यो दृप्तवैरिनारीमुखनलिनवनैकशिशिरकरः ॥४॥
मुक्तामुक्तपयःप्रवाहशिशिरासूत्तुङ्गतालीवन-
भ्राम्यद्दन्तिकरावलूनकदलीकाण्डासु वेलास्वपि ॥
श्च्योतत्स्फारतुषारनिर्झरपयःशीतेऽपि शैले स्थिता-
न्यस्योच्चैर्द्विषतो मुमोच न महाघोरः प्रतापज्वरः ॥५॥
यस्यातिमानुषं कर्म दृश्यते विस्मयाज्जनौघेन ।
अद्यापि कोशवर्धनतटात्प्लुतं पवनजस्येव ॥६॥
प्रख्यातशक्तिमाजिषु पुरःसरं श्रीकुमारगुप्तमिति ।
अजनयदनेकं रा नृपो हर इव शिखिवाहनं तनयम् ॥७॥
उत्सर्पद्वातहेलाचलितकदलिकावीचिमालावितानः ।
प्रोद्यद्धूलीजलौघभ्रमितगुरुमहामत्तमातङ्गशैलः ॥
भीमः श्रीशानवर्मक्षितिपतिशशिनः सैन्यदुग्धोदसिन्धु-
र्लक्ष्मीसंप्राप्तिहेतुः सपदि विमथितो मन्दरीभूय येन ॥ ८ ॥
शौर्यसत्यव्रतधरो यः प्रयागगतो घने ।
अम्भसीव करीषाग्नौ मग्नः स पुष्पपूजितः ॥ ९ ॥
श्री दामोदरगुप्तोऽभूत्तनयः तस्य भूपतेः ।
येन दामोदरेणेव दैत्या इव हता द्विषः ॥ १० ॥
यो मौखरेः समितिषूद्धतहूणसैन्य-
वल्गत्घटा विघटयन्नुरुवारणानाम् ॥
सम्मूर्च्छितः सुरवधूर्वरयन्ममेति ।
तत्पाणि पङ्कजसुखस्पर्शाद्विबुद्धः ॥ ११ ॥
गुणवद्द्विजकन्यानां नानालङ्काररयौवनवतीनाम् ।
परिणायितवान्स नृपः शतं निसृष्टाग्रहाराणाम् ॥ १२ ॥
श्री महासेनगुप्तोऽभूत्तस्मा द्वीराग्रणीः सुतः ।
सर्ववीरसमाजेषु लेभे यो धुरि वीरताम् ॥ १३ ॥
श्रीमत्सुस्थितवर्मयुद्धविजयश्लाघापदाङ्कं मुहुः ।
यस्याद्यापि निबुद्धकुन्दकुमुदक्षुण्णाच्छहार तम् ॥

लौहित्यस्य तटेषु शीतलतलेषूत्फुल्लनागद्रुम-
च्छायासुप्तविबुद्धसिद्धमिथुनैः स्फीतं यशो गीयते ।। १४ ।।
वसुदेवादिव तस्माच्छ्रीसेवनशोभितचरणयुगः ।
श्रीमाधवगुप्तोऽभून्माधव इव विक्रमैकरसः ।। १५ ।।
............नुस्मृतो धुरि रणे श्लाघावतामग्रणीः ।
सौजन्यस्य निधानमर्थनिचयत्यागोद्धुराणां वरः ।।
लक्ष्मीसत्यसरस्वतीकुलगृहं धर्मस्य सेतुर्दृणः ।
पूज्यो नास्ति स भूतले...........सद्गुणैः ।। १६ ।।
चक्रं पाणितलेन सोऽप्युदवहत्तस्यापि शार्ङ्गं धनुः ।
नाशायासुहृदां सुखाय सुहृदां तस्याप्यसिर्नन्दकः ।।
प्राप्ते विद्विषतां वधे प्रतिहत्....तेनाप........ ।
...............................न्या प्रणेमुर्जनाः ।। १७ ।।
आजौ मया विनिहिता बलिनो द्विषन्तः ।
कृत्यं न मेऽस्त्यपरमित्यवधार्य वीरः ।।
श्रीहर्षदेवनिजसङ्गमवाञ्छया च ।
.... ।। १८ ।।
श्रीमान्बभुव दलितारिकरीन्द्रकुम्भ-
मुक्तारजः पटलपांसु मण्डलाग्रः ।।
आदित्यसेन इति तत्तनयः क्षितीशः ।
चूडामणिर्द.................................... ।। १९ ।।
................मागत मरिध्वंसोत्थमात्तं यशः ।
श्लाघं सर्वधनुष्मतां पुर इति श्लाघां परां बिभ्रति ।।
आशीर्वादपरम्पराचिरसकृद्........................ ।।
....यामास ।। २० ।।
आजौ स्वेदच्छलेन ध्वजपटशिखया मार्जतो दानपङ्कं ।
खड्गं क्षुण्णेन मुक्ता शकल सिकति................... ।।
....मत्तमातङ्गघातं ।
तद्गन्धाकृष्टसर्पद्बहलपरिमलभ्रांतमत्तालिजालम् ।। २१ ।।
आबद्धभीमविकटभ्रुकुटीकठोर—
सङ्ग्राम........................
................ववल्लभभृत्यवर्ग-
गोष्ठीषु पेशलतया परिहासशीलः ।। २२ ।।
सत्यभर्तृव्रता यस्य मुखोपधानतापसी
परिहास............................ ।। २३ ।।
...........................ञः सकलरिपुबलध्वंसहेतुर्गरीया
न्निस्त्रिंशोत्खातघातश्रमजनितजडोऽप्यूर्जितस्वप्रतापः ।

विष्णु गुप्त की मंगरांव प्रशस्ति

युद्धे मत्तेभकुम्भस्थल....................
........श्वेतातपत्रस्थगितवसुमतीमण्डलो लोकपालः ।। २४ ।।
आजौ मत्तगजेन्द्रकुम्भदलनस्फीतस्फुरद्दोर्युगो
ध्वस्तानेकरिपुप्रभाव................यशोमण्डलः ।
न्यस्ताशेषनरेन्द्रमौलिचरणस्फारप्रतापानलो
लक्ष्मीवान्समराभिमानविमलप्रख्यातकीर्तिर्नृपः ।। २५ ।।
येनेयं शरदिन्दुबिम्बधवला प्रख्यातभूमण्डला
लक्ष्मीसङ्गमकांक्षया सुमहती कीर्तिश्चिरं कोपिता ।
याता सागरपारमद्भुततमा सापत्नवैराद्दहो
तेनेदं भवनोत्तमं क्षितिभुजा विष्णोः कृते कारितम् ।। २६ ।।
तज्जनन्या महादेव्या श्रीमत्या कारितो मठः ।
धार्मिकेभ्यः स्वयं दत्तः सुरलोकगृहोपमः ।। २७ ।।
शङ्खेन्दुस्फटिकप्रभाप्रतिसमस्फारस्फुरच्छीकरं
नक्रक्रान्तिचलत्तरङ्गविलशत्पक्षिप्र नृत्यत्तिमि ।
राज्ञा खानितमद्भुतं सुपयसा पेपीयमानं जनै
स्तस्यैव प्रियभार्यया नरपतेः श्रीकोण देव्या सरः ।। २८ ।।
यावच्चन्द्रकला हरस्य शिरसि श्रीः शार्ङ्गिणो वक्षसि
ब्रह्मास्ये च सरस्वती कृतः............................ ।
भोगे भूर्भुजगाधिपस्य च तडिद्यावद् घनस्योदरे
तावत्कीर्तिमिहातनोति धवलामादित्यसेनो नृपः ।। २९ ।।
सूक्ष्म शिवेन गौडेन प्रशस्तिर्विकटाक्षरा ।
................मिता सम्यग् धार्मिकेण सुधीमता ।। ३० ।।

विष्णुगुप्त का मंगरांव लेख

ए. इ. भा. २६

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—बक्सर समीक्षा शाहाबाद बिहार

लिपि—कुटिल | काल—आठवीं सदी

ओं महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीविष्णुगुप्तदेवप्रवर्द्धमानविजयराज्यसम्वत्सरे सप्तदशे सम्व(त्) १ १०. ७ श्रावण शुदि २ चुन्दस्कीलातपोवनप्रतिष्ठित श्रीमित्रकेशवदेवप्रतिबद्धपुष्पपट्टे स्वसिद्धान्तभिरत अनेकशिवसिद्धायतनतीर्थविगाहने पवित्रीकृतः तनुः कुट्टुकदेशीय अविमुक्तज्जः अंगार ग्रामके सकलकुटुम्बिनां सकासादाचन्द्रार्कक्षिति समकालीनं तैलस्य पलमेकमुपक्रीय भगवतः श्री सुभद्रेश्वरदेवस्य प्रदीपार्थं प्रतिपादितवान् । एवं योन्यथा करोति यदत्रापायं स्तनदवाप्नोतीति । लिखिता देवदत्तेन संक्षिप्ता क्रमचोरिका । उत्कीर्णा सूत्रधारेण कुलादित्येन धीमता ।

अध्याय १७

उत्तर-गुप्त काल के लेख एवं दान-पत्र

प्राचीन भारत के अभिलेख कई श्रेणियों में विभक्त किए जाते हैं। उनके विश्लेषण से सभी बातों का परिज्ञान हो जाता है। प्राचीनतम लेख अशोक ने शिलाखण्ड या स्तम्भ पर अंकित कराया था जिसे 'धर्म-लेख' की संज्ञा दी जाती है। मौर्य शासन के पश्चात् भी धार्मिक भावना से प्रेरित होकर शासक अभिलेख खुदवाया करते थे। ईसवी सन् पूर्व में प्रस्तर शिला या स्तम्भ ही आधार था। कुषाणकाल में प्रतिमा पीठ पर भी (बुद्ध तथा जैन प्रतिमा) लेख अंकित होने लगे। धार्मिक भावना के अतिरिक्त अन्य उद्देश्य उन शासकों के सामने न था। किन्तु गुप्त सम्राटों के उदय होने पर लेख खुदवाने की विचारधारा सामने आई। गुप्त नरेशों के आश्रित कवियों ने आश्रयदाता की प्रशंसा में लेखों की रचना की और उसमें सम्राट् के दिग्विजय आदि का वर्णन किया। अतएव उन्हें 'प्रशस्ति काव्य' कहा जा सकता है। समुद्र गुप्त का प्रयाग स्तम्भ लेख, चन्द्र का मेहरौली का स्तम्भ लेख एवं स्कन्द गुप्त का जूनागढ़ का लेख प्रशस्तियों की श्रेणी में ही रक्खे जा सकते है। गुप्त युग में एक नये आधार का भी प्रयोग आरम्भ हुआ था। यानी धातु (ताम्बा) की वस्तुएं इस काल में बनने लगीं अतएव ताम्र-पट्ट पर भी लेख अंकित कराने की परिपाटी चल पड़ी। दामोदरपुर ताम्रपत्र पर खुदा लेख उसका उदाहरण है।

गुप्तों के अधीनस्थ शासकों ने भी ताम्रपट्ट का उपभोग किया और लेख अंकित कराया। संक्षोभ का खोह ताम्रपत्र (गु० स० २०९) तथा बैग्राम ताम्रपत्र (गु० स० १२८) का उल्लेख किया जा सकता है। ताम्रपत्र का नया आधार पांचवीं सदी से मध्ययुग तक काम में लाया जाता था तथा विशेषत: दान का विवरण अंकित होने लगा। इस प्रकार के दानपत्र (ताम्रपत्र) के उपयोग का कारण यही था कि दानग्राही को एक प्रकार का स्थायी आज्ञापत्र मिले, जिसकी सुरक्षा सरलता से हो सके। ताम्रपत्र पर लेख खुदवा कर दानग्राही को अर्पित कर दिया जाता था ताकि उसके वंशज उसे पढ़कर अपना कर्त्तव्य निर्णय कर सकें। दान पत्रों पर दोनों ओर लेख अंकित किए जाते तत्पश्चात् उनमें एक ओर छिद्र बनाकर ताम्बे की बड़ी अंगूठी से जोड़ दिए जाते। इस प्रकार ताम्रपत्रों की सुरक्षा के साथ उनके भूल जाने का भय नहीं रहता था। जो ताम्रपत्र लिखने की परम्परा दामोदरपुर ताम्रपत्रों से आरम्भ हुई वह उत्तरी भारत में मध्ययुग तक प्रचलित रही। बांसखेड़ा ताम्रपत्र (हर्ष सम्वत् २२ = ६२८ ई०) खालीमपुर ताम्रपत्र, देवापाल का नालंदा ताम्रपत्र में जो क्रम दीख पड़ता है, वही गहड़वाल नरेशों के कमौली (वाराणसी के समीप) ताम्रपत्रों में भी प्रकट होता है। इस प्रकार पांचवीं सदी से बारहवीं सदी तक शासक ताम्रपत्रों पर दान का लेख अंकित कराते रहे।

उन दानपत्रों में निम्न प्रकार का उल्लेख पाया जाता है—

(१) स्थान का उल्लेख

(२) दानकर्त्ता की वंशावली एवं उपलब्धि
(३) दानग्राही के वंश का वर्णन
(४) सीमा सहित दान की भूमि का विवरण
(५) दान का प्रयोजन
(६) धार्मिक श्लोक
(७) कर एवं पदाधिकारी

दान करने का कोई निश्चित स्थान था । राजा किसी सुअवसर पर दान देता या युद्ध में विजय के उपलक्ष में दान किया करता था। पहाड़पुर ताम्रपत्र में पुण्ड्रवर्द्धन भुक्ति (उत्तरी बंगाल) का उल्लेख है । फरीदपुर में तो वारक मण्डल के विषय (जिला) के कार्यालय (अधिकरण) का वर्णन है । हर्षवर्धन का बांसखेड़ा ताम्रपत्र जयस्कन्धावार (सेना का शिविर) वर्धमान कोटि नामक स्थान से घोषित किया गया था ।

इससे महत्त्वपूर्ण विषय था दानकर्त्ता की उपब्धियों का वर्णन । पूर्व के लेखों में राजा के वंशवृक्ष का वर्णन कर उस प्रमुख शासक (प्रशस्ति का नायक) की विशेषताओं पर लेखक का अधिक ध्यान रहता था । ताम्रपत्रों में प्रशासक की उपलब्धियों के साथ दान की भूमि तथा उसके प्रयोजन का विशेष रूप से उल्लेख किया जाता था। बैग्राम ताम्रपत्र तथा पहाड़पुर ताम्रपत्र लेख में राजा का वर्णन नहीं के बराबर है । इन दान पत्रों में भूमि क्रय कर दान का उल्लेख है । भूमिक्रय का दर दो दीनार (स्वर्णमुद्रा) प्रति कुल्यावाप (भूमि का माप) के रूप में वर्णित है । बांसखेड़ा ताम्रपत्र से (७ वीं सदी) अग्रिम शताब्दियों में शासक यानी दानकर्त्ता की वंशावली पूर्णरूपेण वर्णित है । हर्ष के पूर्वजों का विवरण बांसखेड़ा ताम्रपत्र में उल्लिखित है तथा पालवंशी ताम्रपत्रों (खालीमपुर, नालंदा तथा भागलपुर) में गोपाल से लेकर शासक पर्यन्त राजाओं के नाम तथा कार्य-कलापों का वर्णन मिलता है । कहने का तात्पर्य यह कि राजा की उपलब्धियों के द्वारा उसके महत्त्व तथा कुशलता का परिज्ञान हो जाता है । खालीमपुर लेख में धर्मपाल के युद्ध तथा समकालीन नरेशों से उसके राजनीतिक व्यवहार का वर्णन कर भगवान् विष्णु के मंदिर निमित्त दान का उल्लेख है । दानपत्रों में दान भूमि की सीमा तथा उसकी विशेषता (उर्बरा या खिल) का विवरण आवश्यक समझा जाता था । दानग्राही के सुगमता के लिए भूमि के क्षेत्रफल का विवरण अंकित किया जाता ताकि भावी विवाद से मुक्त रहे ।

दानपत्रों में दान को आय का उपयोग किस रूप से किया जाय इस विषय पर प्रशस्तिकार विशेष ध्यान देता था । बैग्राम ताम्रपत्र में गोविन्द स्वामी के मंदिर का सुसंस्कार (मरम्मत) और देवता के रागभोग का वर्णन है । यानी गन्ध धूप दीप नैवेद्य द्वारा देवता की पूजा की जाती थी । पहाड़पुर ताम्रपत्र लेख के अध्ययन से प्रकट होता है कि बौद्ध विहार में अर्हत (देवता) का पूजन ब्राह्मणधर्म की विधि अनुसार सम्पन्न किया जाता था (भगवतामर्हतां गन्धधूप सुमनो दीपाद्यर्थ) बांसखेड़ा लेख में स्पष्ट वर्णन आया है कि माता पिता (यशोमति प्रभाकर वर्धन) तथा भ्राता (राज्य वर्धन) के पुण्य लाभ के लिए यह दान दिया गया था (पुण्य यशोभिवृद्धये.........प्रतिग्रहधर्मेणाग्रहारत्वेन प्रतिपादितो) पालवंशी ताम्रपत्रों में सर्वत्र देवमंदिर में स्थापित भगवान् विष्णु या शिव के निमित्त दान देने का उल्लेख है ।

इस तरह का दान स्थायीरूप से किया जाता था (अक्षयनिवि)। लेखों में सूर्य चन्द्रमा की स्थिति काल तक दान की अवधि कही गई है। तात्पर्य यह है कि सहस्राब्दियों तक दान-ग्राही उसका भोग कर सकता था। उस प्रसंग में शासक के समस्त पदाधिकारियों को इस दान की सूचना कर दी जाती। उस समय से राजकीय अधिकार समाप्त हो जाता और कर ग्रहण करने का भार दानग्राही को मिल जाता था। गौड़ राजा शशांककालीन ताम्रपत्र का भी उल्लेख किया जा सकता है। उसके सामन्त माधवराज ने अपने माता पिता की पुण्य वृद्धि के लिए दान दिया था। शशांक के शासनकाल में यह कार्य सम्पन्न हुआ था—महाराजाधिराज श्री शशांक राज्ये शासति इसके प्राप्तिस्थान से विदित होता है कि हर्ष से पहले शशांक गौड़देश (कर्ण सुवर्ण-राजधानी) का शासक था परन्तु हर्षवर्धन के विजय उपरांत वह पूर्वी किनारे (गंजम जिला) की ओर भाग गया। ह्वेनसांग ने उस भाग पर हर्ष के आक्रमण का वर्णन किया है। इसका नाम देवगुप्त (मालवा का राजा) के साथ बांसखेड़ा ताम्रपत्र में आया है जिसने गुप्तवर्मा को मार डाला था। प्रशस्तिकार को भय बना रहता कि स्यात् राज-वंश की अवनति हो जाने या दुर्दिन आने पर दानकर्त्ता के वंशज भूमिको पुनः स्वाधिकार में कर ले। इस संभावना को हटाने के लिए दानपत्र के अंत में ऐसे धार्मिक श्लोक लिख दिए जाते जिसमें नरक एवं स्वर्ग की बातें उल्लिखित हैं। दानभूमि को वापस लेने वाला नरक में जाएगा। ऐसा भय दिखलाया जाता। इन श्लोकों का दानपत्र से कोई आवश्यक सम्बन्ध न था किन्तु धर्म श्लोक लिखने की परिपाटी चल पड़ी थी।

ताम्रपत्रों के अतिरिक्त भी पाषाण पर दान का उल्लेख किया जाता था। ईशान वर्मा मौखरि के हरहा शिलालेख में उसके पुत्र सूर्य वर्मन द्वारा ध्वंस शिवमंदिर के जीर्णोद्धार का उल्लेख है। उसमें ईशान के पूर्वजों का नामोल्लेख है तथा उसकी विजय वार्ता भी वर्णित की गई है। हूणराजा तोरमाण ने एरण में स्थित वराह मूर्ति पर लेख खुदवाया जिसके शिला प्रासाद का वर्णन अंतिम वाक्य में किया गया है। उपरियुक्त विवरण से ज्ञात हो जाता है कि उत्तर गुप्तकाल में दान की महिमा की भावना के कारण ताम्रपत्र पर दान का विवरण अंकित होने लगा। ताम्रपत्र की अधिकता से इस काल को दानपत्रों का युग कह सकते हैं।

दानपत्रों की तिथि गुप्त सम्वत् में उल्लिखित की जाने लगी किन्तु पाल नरेशों ने वर्ष तिथि का समावेश किया। वैग्राम, पहाड़पुर तथा खोह सभी पत्रों की तिथियाँ गुप्त सम्वत् (ई० स० ३१९) में दी गई हैं परन्तु हर्ष की गणना-हर्ष सम्वत् में

तिथि अङ्कन

हो बांसखेड़ा के लेखक ने तिथि का उल्लेख किया है। (हर्ष स० २२= ई० स० ६२८) तात्पर्य यह है कि उत्तरी भारत की गंगा यमुना घाटी में सम्वत् या वर्ष तिथि का प्रयोग होता रहा। हरहा प्रशस्ति के सम्बन्ध में यह बात युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होती। हरहा, बाराबंकी (उत्तर प्रदेश) लेख में विक्रम सम्वत् का प्रयोग मिलता है। उत्तर प्रदेश में मालव (विक्रम) सम्वत् का समावेश क्यों किया गया, यह जटिल प्रश्न है। सम्भवतः मौखरि सम्वत् की स्थिति भी अज्ञात न थी। मालवा (मंदसोर) से जितने लेख प्राप्य हुए हैं उनमें मालव (विक्रम) सम्वत् का प्रयोग यथार्थ तथा स्वाभाविक था। उदाहरण के लिए प्रथम कुमार गुप्त की मंदसोर प्रशस्ति एवं यशोधर्मन का मंदसोर

लेख। हरहा लेख के सम्बन्ध में यह सुझाव रक्खा जा सकता है कि मौखरि का मूल वंश बड़वा (कोटा, राजपुताना) से उत्तर प्रदेश में आया। उसकी तिथि कृतेहि २९५ (वि० स०) अंकित है। यानी ई० स० २३८ (२९५-५७) में मौखरि बड़वा में राज्य करते थे। वहाँ से उत्तर प्रदेश में आये। सम्भवतः उनका आकर्षण उसी सम्वत् से था। अतएव हरहा की प्रशस्ति में विक्रम सम्वत् का प्रयोग किया गया जिसका उल्लेख एकईसवें श्लोक में मिलता है। गंजम ताम्रपत्र में गुप्त सम्वत् ३०० का उल्लेख है। पूर्वी भारत में उत्तर गुप्तयुग में गुप्त सम्वत् का प्रयोग हो रहा था, इसी कारण शशांक के सामंत माधवराज ने गुप्त सम्वत् में तिथि का उल्लेख किया है, (गुप्त स० ३००=६१९ ई०)

उत्तर-गुप्तकालीन लेख एवं दानपत्र

वैग्राम ताम्रपत्र-लेख

ए० इ० भा० २१

भाषा–संस्कृत | प्राप्तिस्थान–बोगरा (बंगाल)
लिपि–गुप्त | तिथि गु० स० १२८ = ४४८ ई०

१ स्वस्ति (।।★) पञ्चनगर्य्या भट्टारक-पादानुध्यातः कुमारामात्य-कुलवृद्धिरेतद्विषयाधि-करणञ्च

२ वायिग्रामिक-त्रिवृत (।★)- श्रीगोहाल्योः ब्राह्मणोत्तरान्सम्व्यवहारि-प्रमुखान्ग्राम-कुटुम्बिनः कुशलमनु-

३ वर्ण्य बोधयन्ति (।★) विज्ञापयतोरत्रैव वास्तव्य-कुटुम्बि-भोयिल-भास्करा-वावयोः पित्रा शिवनन्दि-

४ ना कारि (त)क(.★) भगवतो गोविन्दस्वामिनः देवकुलस्तदसावल्पवृत्तिकः (।★) इह-विषये समुदय-

५ बाह्याद्यस्तम्ब-खिल-क्षेत्राणामकिञ्चित्प्रतिकराणां शश्वदाचन्द्रार्क्कतारक-भोज्यानां-मक्षय-नीव्या

६ द्विदीनारिक्क्यकुल्यवाप-विक्कयो (ऽ★) नुवृत्तस्तदर्हथावयोस्सकाशात्षड्दीनारानष्ट च रूपकानायी-

७ (कृ) त्य भगवतो गोविन्दस्वामिनो देवकुले (ख) ण्ड-फुट्ट-प्रतिसंस्क (।★) र करणाय गन्ध-धूप-दीप-

८ सुमनसा (ं★) प्रवर्त्तनाय च त्रिवृतायां भोगिलस्य खिलक्षेत्र-कुल्यवाप-त्रयं श्रीगोहाल्याश्चापि

९ तल-वाटकार्थ (ं★) स्थल-वास्तुनो द्रोणवापमेकं भास्करस्यापि स्थलवास्तुनो द्रोणवापञ्च दातु-

१० मि (ति) (।★) यतो युष्मान्बोधयाम (:★) पुस्तपाल-दुर्गदत्तार्क्कदासयोरवधारणया अवधृत-

११ मस्तीह-विषये समुदय-ब्याह्याद्यस्तम्ब-खिल-क्षेत्राणा (ं★) शश्वदाचन्द्रार्क्क-तारक-भोज्यानां द्विदी-

१२ नारिक्यकुल्यवाप-विक्कयो (ऽ★) नुवृत्तः (।★) एवंविधाप्रतिकर-खिलक्षेत्रविक्कये च न कश्चिद्राजार्त्थ-

१३ विरोध उपचय एव भट्टारक-पादानां धर्म्मफल-षड्भागावाप्तिश्च तद्दीयतामिति (।★) एतयोः

१४ भोयिल-भास्करयोस्सका(शा★)त्षड्दीनारानष्ट च रूपकानायीकृत्य भगवतो **गोविन्द-स्वामिनो**

१५ देवकुलस्यार्त्थे भोयिलस्य त्रिवृतायां खिलक्षेत्र-कुल्यवाप-त्रयं तलवाटकाद्यर्त्थम्

१६ श्रीगोहाल्या (*★) स्थल-वांस्तुनो द्रोणवापं भास्करास्याप्यत्रैव स्थले-वस्तुनो द्रोणवाप-

१७ मेव (*★) कुल्यवाप-त्रयं स्थल-द्रोणवाप-द्वयञ्च अक्षयनीव्यास्ताम्र-पट्टेन दत्तम् (।★) लिस-

१८ कु३स्थल-द्रो २ (।★) ते यूयं स्वकर्षणाविरोधि-स्थाने दर्व्वी-कर्म्म-हस्तेनाष्टक-नवक-नलाभ्यां-

१९ मपविञ्छ्य चिरकाल-स्थ (।★) यि-तुषाङ्गारादिना चिह्नैश्चातुर्दिशो नियम्य दास्यथाक्षय-

२० नीवी-धर्म्मेन च शश्वत्कालमनुपालयिष्यथ (।★) वर्त्तमान-भविष्यैश्च संव्यवहार्य्यादि- भिरेत-

२१ द्धर्म्मापेक्षयानुपालयितव्यमिति (।।★) उक्तञ्च भगव(ता★) वेदव्यास-महात्मना (।★) स्व-दत्तां पर-दत्तां

२२ व्वा यो हरेत वसुन्धरां ।
स विष्ठायां क्रिमिर्भूत्वा पितृभिस्सह पच्यते (।।★) १
षष्टिं वर्ष-सह-

२३ स्राणि स्वर्ग्गे मोदति भूमिदः (।★)
आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् (।।★) २
पूर्व्वं-

२४ दत्तां द्विजातिभ्यो यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिर (।★)
मही (*★) महिमतां श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयो (ऽ★) नुपाल-

२५ नमिति (।।★) ३
सं १०० (+★) २० (+★) ८ माघ-दि १०(+★) ९ (।।★)

पहाड़पुर का ताम्रपत्र-लेख

ए० इ० भा० २०

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—पहाड़पुर (राजशाही) बंगाल
लिपि—गुप्त | तिथि गु० स० १५९ = ४७९ ई०

१ स्वस्ति (।।★) पुण्ड्र(वर्द्ध)नादायुक्तका आर्य्यनगरश्रेष्ठि-पुरोगञ्चाधिष्ठानाधिकरणम् **दक्षिणांशकवीथेय-नागरिट्ट-**

२ माण्डलिक-पलाशाट्टपार्श्विक-वटगोहाली-जम्बुदेवप्रावेश्यपृष्ठिमपोत्तकगोषाट-पुञ्जक-मूलनागिरट्टप्रावेश्य-

३ निस्वगोहालीषु ब्राह्मणोत्तरान्महत्तरादि-कुटुम्बिनः कुशलमनुवर्ण्यानुबोधयन्ति (।★) विज्ञापयत्यस्मान्ब्राह्मण-नाथ-

४ शर्म्मा एतद्भार्य्या रामी च (।★) युष्माकमिहाधिष्ठानाधिकरणे द्वि-दीनारिक्क्य-कुल्य-वापेन शश्वत्कालोपभोग्याक्षयनीवी-समुदयबाह्या-

५ प्रतिकर-खिलक्षेत्रवास्तु-विक्रयो(ऽ★)नुवृत्तस्तदर्हथानेनैव क्रमेणावयोस्सकाशाद्दीनार-त्रयमु-पसङ्गृह्यावयो (:★) स्व-पुण्याप्या-

६ यनाय वटगोहाल्यामवास्याङ्काशिक-पञ्चस्तूपनिकायिकनिग्रन्थश्रमणाचार्य्य-गुह-नन्दि-शिष्य-प्रशिष्याधिष्ठित-विहारे

७ भगवतामर्हतां गन्ध-धूप-सुमनो-दीपाद्यर्थन्तलवाटक-निमित्तञ्च अ(त:★)एव वट-गोहालीतो वास्तु-द्रोणवापमध्यर्द्धञ्ज-

८ म्बुदेवप्रावेश्य-पृष्ठिमपोत्तके त्क्षेत्रं द्रोणवाप-चतुष्टयं गोषाटपुञ्जाद्द्रोणवापचतुष्टयम् मूल-नागिरट्ट-

९ प्रावेश्य-नित्वगोहालीतः अर्द्धत्रिक-द्रोणवापानित्येवमध्यर्द्धं क्षेत्र-कुल्यवापमक्षयनीव्या दातुमि (ति) (।★) यतः प्रथम-

१० पुस्तपालदिवाकरनन्दि-पुस्तपालधृतिविष्णु-विरोचन-रामदास-हरिदास शशिनन्दि-(सु)प्रभ-मनुद(त्ताना)मवधारण-

११ यावधृतम् अस्त्यस्मदधिष्ठानाधिकरणे द्वि-दीनारिक्क्य-कुल्यवापेन शश्वत्कालोलोपभोग्या-क्षयनीवी-समु(दय)वाह्याप्रतिकर-

१२ (खिल★)क्षेत्रवास्तु-विक्रयो(ऽ★)नुवृत्तस्तद्यद्युष्माम्ब्राह्मण-नाथशर्म्मा एतद्भार्या रामी च पलाशाट्टपार्श्विक-वटगोहाली-स्थ(ायि)-

१३ (काशि★)क-पञ्चस्तूपकुलनिकायिक आचार्य्य-निग्रन्थ-गुहनन्दि-शिष्य-प्रशिष्याधिष्ठित-सद्वि-हारे अरहतां गन्ध-(धूप)ाद्युपयोगाय

१४ (तल-वा★)टक-निमित्तञ्च तत्रैव वटगोहाल्यां वास्तु-द्रोणवापमध्यर्द्ध क्षेत्रञ्जम्बुदेव-प्रावेश्य-पृष्ठिमपोत्तके द्रोणवाप-चतुष्टयं

१५ गोषाटपुञ्जाद्द्रोणवाप-चतुष्टयं मूलनागिरट्ट-प्रावेश्य-नित्वगोहालीतो द्रोणवापद्वय-माढवा (प-द्व)याधिकमित्येवम-

१६ ध्यर्द्धं क्षेत्र-कुल्यवापम्प्रार्थयते(ऽ★)त्र न कश्चिद्विरोधः गुणस्तु यत्परमभट्टारक-पादानामर्थो-पचयो धर्म्म-षड्भागाप्याय-

१७ नञ्च भवति(।★) तदेवङ्क्रियतामित्यनेनावधारणा-क्रमेणास्माद्ब्राह्मणनाथशर्म्मत एतद्भा-र्य्यारामियाश्च दीनार-त्र-

१८ यमायीकृत्यैताभ्यां विज्ञापितक-क्रमोपयोगायोपरि-निर्दिष्ट-ग्राम-गोहालिकेषु तल-वाटक-वास्तुना सह क्षेत्रं

१९ कुल्यवाप(:★)अध्यर्द्धो(।★)क्षय-नीवी-धर्म्मेण दत्तः(।★) कु १द्रो४(।★) तद्युष्माभिः स्व-कर्षणाविरोधि-स्थाने षट्क-नडैरप-

२० विञ्छ्य दातव्यो(ऽ★)क्षय-नीवी-धर्मेण च शश्वदाचन्द्रार्क्क-तारक-काल-मनुपालयितव्य इति (।।★) सम् १००(+★)५०(+★)९

२१ माघ-दि ७(।★) उक्तञ्च भगवता व्यासेन (।★)
स्व-दत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् (।★)
२२ स विष्ठायां क्रिमिर्भूत्वा पितृभिस्सह पच्यते (॥★)१
षष्टि-वर्षसहस्राणि स्वर्गे वसति भूमिदः (।★)
२३ आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् (॥★)२
राजभिर्व्वहुभिर्द्दत्ता दीयते च पुनः पुनः (।★)
यस्य यस्य
२४ यदा भूमि तस्य तस्य तदा फलम् (॥★)३
पूर्व्व-दत्तां द्विजातिभ्यो यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिर (।★)
महीम्महीमतां श्रेष्ठ
२५ दानाच्छ्रेयो(ऽ★)नुपालनं (॥★)४
विन्ध्याटवीष्वनम्भस्सु शुष्क-कोटर-वाहिन(:★) (।★)
कृष्णाहिनो हि जायन्ते देव-दायं हरन्ति ये (॥★)५

फरीदपुर का ताम्रपत्र-लेख

इ० ए० भा० ३९

भाषा—संस्कृत — प्राप्तिस्थान—फरीदपुर बंगाल
लिपि—गुप्त — तिथि—छठी सदी

वारकमण्डलविषयाधिकरणस्य (॥★)

१ सिद्धं स्वस्त्यस्यां पृथिव्यामप्रतिरथे ययात्यम्बरिष-सम-धृतौ म-
२ हाराजाधिराज-श्रीधर्म्मादित्य-राज्ये तत्प्रसाद-लब्धास्पद-महाराज-स्था-
३ णुदत्तस्याध्यासन-काले स्तद्विनियुक्तक-वारकमण्डले विषयपति-ज-
४ जावस्यायोगो(ऽ★)धिकरणं विषयमहत्तरेटित-कुलचन्द्र-गरुड-वृहच्च-
५ ट्टालुकानाचार-भार्शेत्र-शुभदेव-घोषचन्द्रानिमिग्र-गुणचन्द्र-कालस(सु?)-
६ ख-कुलस्वामि-दुर्ल्लभ-सत्यचन्द्रार्ज्जुन-बप्प-कुण्डलिप्त-पुरोगा । (:★) प्रकृतयश्च
७ साधनिक-वातभोगेन विज्ञाप्ताः (।★) इच्छाम्यहं भवतान्सकाशा (त्)—क्षेत्र-खण्डमुप-
८ क्रीय व्राह्मणस्य प्रतिपादयितुं (।★) तदर्हथ मत्तो मूल्यं गृहीत्वा विषये विभ-
९ ज्य दातुमिति (।★) यतः एतदभ्यर्थनमधिकृत्य (।★) स्माभिरकार्ये भूत्वा पुस्तपाल-
वि (न)-
१० यसेनावधारणया अवधृतमस्तीह-विषये प्राक्समुद्र-मर्य्यादा चतुर्द्दे-
११ नारिक्य-कुल्यवापेन क्षेत्राणि विक्रीयमानकानि (।★) तथा वाप-क्षेत्र-खण्डल (ा:★)
१२ कृत-कलना दृस्ति-मात्र-प्रवन्धेन ताम्रपट्ट-धर्म्मेण विक्रयमानका (:★) (।★) तच्च
१३ परमभट्टारक-पादानामत्र धर्म्म-षड्भाग-लाभः (।★) तदेतां प्रवृत्तिमधिगम्य न्यासा-
१४ धा स्व-पुण्य-कीर्त्ति संस्थापन-कृताभिलाषस्य यथा संकल्पाभि तथा कुय (याधृ)
१५ त्य साधनिक-वतभोगन द्वादश-दीनारानग्रतो दत्वा (।★) शिवचन्द्र-ह (स्ते-नाष्ट)-
१६ क-नवक-नलेनामपविञ्छ्य वातभोग-सकाशे (ऽ★) स्माभि र्ध्रुविलाट्यां क्षेत्र-(कुल्य)-

१७ वाप-श्रयं तांम्रपट्ट-धर्म्मेण विक्रीत (ं★) (।★) अनेन (।★) पि वातभोगेन
१८ चन्द्रतारार्क्क-स्थितिकाल-संभोग्यं य (।★) वत्परश्चानुग्रह-कांक्षिणा भ (।★)-रद्वाज-सगो-
१९ त्र-वाजसनेय-षड्ङ्गाध्यायिनस्य चन्द्रस्वामिनस्य मातापित्रोरनुग्रहा-
२० य मुदक-पूर्व्वेण प्रतिपादितमिति (।★) तदुपरिलिखितकागाम-सामन्त-राजभि (:★) सम-
२१ धिगतशास्त्रभि भूमि-दानानुपालन-क्षेपानुमोदनेषु सम्य (ग्★)-दत्तान्यपि दानानि
२२ राजभिरनै प्रतिपादनीयानिति प्रत्यवगम्य भूमिदानं सुतरामेव प्रतिपालनी-
२३ यमिति (।।★) सीमा-लिङ्गानि चात्र पूर्व्वेण हिमसेन-पाटके दक्षिणेण त्रिघटिका
२४ अपर-ताम्रपट्टश्च पश्चिमेण त्रिघट्टिकायाः धोलकुण्डश्च उत्तरेण (ना) वाता-
२५ क्षेणी हिमसेन-पाटकश्च (।।★) भवति चात्र श्लोकः (।★)
स्व दत्तां परत्ताम्वा यो हृ-
२६ रेत वसुन्धरां (।★)-
श्व-विष्ठायां (ं★) क्रिमिर्भूत्वा पच्यते पितृभस्सह ।।१
२७ सम्वत् ३ वैशा दि ५ (।।★)

संक्षोभ का खोह ताम्रपत्र-लेख

का. इ. इ. ३

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—खोह—नगोद म. प्र०
लिपि—गुप्त शैली | तिथि गु० स० २०९ = ५२९ ई०

१ सिद्धं नमो भगवते वासुदेवाय ।। स्वस्ति (।।★)नवोत्तरे(ऽ★)ब्द-शत-द्वये गुप्तनृप-र(।★)ज्य-भुक्तौ
२ श्रीमति प्रवर्द्धमान-विजय-राज्ये महाश्वयुज-स(ं★)वत्सरे चैत्र-मास-शुक्ल-
३ पक्ष-त्रयोदश्य(।★)मस्यां संवत्सर-मास-दिवस-पूर्व्वाया [ं] (।★) चतुर्द्दश-विद्यास्थान विदि-
४ त-परमार्थस्य कपिलस्यव महर्षेः सर्व्व-तत्वज्ञस्य भरद्वाज-सगोत्रस्य नृपि-
५ पि-परिव्राजक-सुशर्म्मणः कुलोत्पन्नेन महाराज-श्रीदेवाढ्य-पुत्रप्रनप्त्रा महारा-
६ ज-श्रीप्रभञ्जन-प्रनप्त्रा महाराज-श्रीदामोदर-नप्त्रा गोसहस्र-हस्त्यश्व-हिरण्यानेक-
७ भूमि-प्रदस्य गुरुपितृमातृ-पूजा-तत्परस्यात्यन्त-देव-ब्राह्मण-भक्तस्यानेक-समर-
८ शत-विजयिनः साष्टादशाटवी-राज्याभ्यन्तरं डभाला-राज्यामन्वयागतं समडि-
९ पालयिष्णोरनेक-गुण-विख्यात-यशसो महाराज-श्रीहस्तिनः सुतेन
१० वर्णाश्रम-धर्म्म-स्थापना-निरतेन परमभागवतेनात्यन्त-पितृ-भक्तेन स्व-वं-
११ शामोदकरेण महाराज-श्रीसंक्षोभेन माता-पित्रोरात्मनश्च पुण्याभि-
१२ वृद्धये छोडुगोमि-विज्ञाप्त्या तमेव च स्वर्ग्ग-सोपान-पंक्तिमारोपय-
१३ ता भगवत्याः पिष्टपुर्याः कारितक-देवकुले बलि-चरु-सत्रोपयो-
१४ गार्थः खण्ड-स्फुटित-संस्कारार्थञ्च मणिनाग-पेठे ओपाणिग्राम-

१५ स्यार्द्ध चोर-द्रोहक-वर्ज्जः ताम्र-शासनेनातिसृष्टं (।★)
तदस्मत्कुलोत्थैः म-
१६ त्यादपिण्डोपजीविभिर्व्वा कालान्तरेष्वपि न व्याघातः कार्य्यः (।★)
एवमाज्ञा-
१७ म यो(ऽ★)न्यथा कुर्य्यात्तमहं देहान्तर-गतो (ऽ★)पि महतावध्यानेन निर्द्दहेयं (।।★)
१८ उक्तं च भगवता परमर्षिणा वेदव्यासेन व्यासेनः (।★)
पूर्व्व-दत्तां द्विजातिभ्यो
१९ यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिरः (।★)
महोम्महिमतां (ं★) श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयो(ऽ★)नुपालनः (।।★)१
वहुभिः
२० वसुधा भुक्ता राजभिस्सगरादिभिः (।★)
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा
२१ फलं (।।★)२
षष्टि वर्ष-सहस्राणि स्वर्गे मोदति भूमिदः (।★)
आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्ये-
२२ व नरके वसेत् (।।★)३
भूमि-प्रदानान्न परं प्रदानं
दानाद्विशिष्टं परिपालनञ्च (।★)
२३ सर्वे (ऽ★)तिसृष्टा(ं★) परिपाल्य भूमिं(★)
नृपा नृगाद्यास्त्रिदिवं प्रपन्नाः ।।४
लिखितञ्च
२४ जीवित-नप्त्रा भुजंगदास-पुत्रेश्वरीदासेनेति (।★)स्व-मुखाज्ञा (।★) चैत्र-दि २० (+★)
८ (।।★)
२५ (स्व-चिन्त★)म् ।। १७
सर्व्वस्य जीवितमनित्यमसारवच्च
दोला-चलामनुविचिन्त्य तथा विभूतिम् ।।

यशोधर्मन का मन्दसोर शिलालेख

का० इ० इ० ३

भाषा—संस्कृत
लिपि—छठीं सदी ब्राह्मी

प्राप्तिस्थान—मंदसोर मालवा राजस्थान
तिथि—वि० सं० ५८९ = ५३२ ई०

१ सिद्धम् (।।★)
स जयति जगतां पतिः पिनाकी
स्मित-रव-गीतिषु यस्य दन्त-कान्तिः ।
द्युतिरिव तडितां निशि स्फुरन्ती
तिरयति च स्फुटयत्यदश्च विश्वम् ।। १

स्वयम्भूर्भूतानां स्थिति-लय-(समु★)-
२ त्पत्ति-विधिषु
प्रयुक्तो येमाज्ञां वहति भुवनानां विधृतये ।
पितृत्वं चानीतो जगति गरिमाणं गमयता
स शम्भूर्भूयान्सि प्रतिदिशतु भद्राणि भव(ताम्★)।। २
फण-मणि-गुरुभार (क्का)-
३ न्ति-दूरावनम्रं
स्थगयति रुचमिन्दोर्म्मण्डलं यस्य मूर्ध्नाम् (।★)
स शिरसि विनिवघ्नन्नन्धिनीमस्थिमालां
सृजतु भव-सृजो वः क्लेश-भङ्गं भुजङ्गः ।। ३
षष्टया सहस्रै सगरात्मजानां
खात (:★)
४ ख-तुल्यां रुचमादधानः ।
अस्योदपानाधिपतेश्चिराय
यशान्सि पायात्पयसां विधाता ।। ४
अथ जयति जनेन्द्रः श्री-यशोधर्म्म-नामा
प्रमद-वनमिवान्तः शत्रु-सैन्यं विगाह्य (।★)
व्रण-
५ किसलय-भङ्गैर्यो (ऽ★) ङ्गभूषां विधत्ते
तरुण-तरु-लतावद्वीर-कीर्त्तीर्व्विनाम्य ।। ५
आजौ जितो विजयते जगतीम्पुनश्च
श्रीविष्णुवर्द्धन-नराधिपतिः स एव ।
प्रख्यात औलिकर-लाञ्छन आत्म-
६ वङ्शा
येनोदितोदित-पदं गमितो गरीयः ।। ६
प्राचो नृपान्सुबृहतश्च बहूनुदीचः
साम्ना युधा च वशगान्प्रविधाय येन (।★)
नामापरं जगति कान्तमदो दुरापं
राजाधिराज-परमे-
७ श्वर इत्युदूढम् ।। ७
स्निग्ध-श्यामाम्बुदाभैः स्थगित-दिनकृतो यज्वनामाज्य-धूम्रै-
रम्भोमेघ्यं मघोनावधिषु विदधता गाढ-सम्पन्न-सस्याः ।
संहर्षाद्वाणिनीनां कर-रभस-हृतो-
८ द्यानचूताङ्कुराग्रा
राजन्वन्तो रमन्ते भुज-विजित-भुवा भूरयो येन देशाः ।। ८

यस्योत्केतुभिरुन्मद-द्विप-कर-व्याविद्ध-लोध्र-द्रुमै-
रुद्धूतेन वनाध्वनि ध्वनि-नदद्विन्ध्याद्रि-रन्ध्रैर्व्वलैः । (*)
बाले-

९ य-च्छवि-धूमरेण रजसा मन्दांशु संलक्ष्यते
पर्य्यावृत्त-शिखण्डि-चन्द्रक इव ध्यामं रवेर्मण्डलम् ।। ९
तस्य प्रभोर्व्वंश्यकृतां नृपाणां
पादाश्रयाद्विश्रुत-पुण्य-कीर्त्तिः ।
भृत्यः स्व-नैभृत्य-जिता-

१० रि-षट्क
आसीद्वसीयान्किल षष्ठिदत्तः ।। १०
हिमवत इव गाङ्गस्तुङ्ग-नम्रः प्रवाहः
शशभृत इव रेवा-वारि-राशिः प्रथीयान् (।*)
परमभिगमनीयः शुद्धिमानन्ववायो
यत उदित-गरि-
म्णस्तायते नैगमानाम् ।। ११

११ तस्यानुकूलः कुलजात्कलत्रा-
त्सुतः प्रसूतो यशसां प्रसूतिः ।
हरेरिवांशं वशिनं वराहं
वराहदासं यमुदाहरन्ति ।। १२
सुकृति-विषयि-तुङ्गं रूढमूलं

१२ धरायां
स्थितिमपगयभङ्गां स्थेयसीमादधानम् (।*)
गुरु-शिखरमिवाद्रेस्तत्कुलं स्वात्म-भूत्या
रविरिव रविकीर्त्तिः सुप्रकाशं व्यधत्त ।। १३
बिभ्रता शुभ्रमभ्रंशि स्मार्त्तं वर्त्मोचितं सताम् (।*)
न विसंवा-

१३ दिता येन कलावपि कुलीनता ।। १४
धृत-धीदीधिति-ध्वान्तान्हविर्भुज इवाध्वरान् (।*)
भानुगुप्ता ततः साध्वी तनयांस्त्रीनजीजनत् ।। १५
भगवद्दोष इत्यासीत्प्रथमः कार्य्यवर्त्मसु ।
आल-

१४ म्बनं बान्धवानामन्धकानामिवोद्धवः ।। १६
बहु-नय-विधि-वेधा गह्वरे(।*)प्यर्थ-मार्गे
विदुर इव विदूरं प्रेक्षया प्रेक्षमाणः ।

वचन-रचन-बन्धे संस्कृत-प्राकृते यः
कविभिरुदि-

१५ त-रागं गीयते गीरभिज्ञः ॥ १७
प्रणिधि-दृगनुगन्त्रा यस्य बौद्धेन चाज्ञणा
न निशि तनु दवीयो वास्त्यदृष्टं धरित्र्याम् (।*)
पदमुदयि दधानो(।*)नन्तरं तस्य चाभू
त्स भयमभयदत्तो नाम वि(घ्न)न्प्रजानाम् ॥ १८

१६ विन्ध्यस्यावन्ध्य-कर्म्मा शिखर-तट-पतत्पाण्डु-रेवाम्बुराशे-
र्गो-लाङ्गूलैः सहेल-प्लुति-नमित-तरोः पारियात्रस्य चाद्रेः ।
आ सिन्धोरन्तरालं निज-शुचि-सचिवाद्धया-

१७ सितानेक-देशं
राजस्थानीय-वृत्या सुरगुरुरिव यो वर्ण्णिनां भूतये(ऽ*)पात् ॥ १९
विहित-सकल-वर्णासङ्करं शान्त-डिम्बं
कृत इव कृतमेतद्येन राज्यं निराधि ।
स धुरमयमिदानीं

१८ दोषकुम्भस्य सूनु-
र्गुरु वहति तदूढां धर्म्मतो धर्म्मदोषः ॥ २०
स्व-सुखमनभिवाञ्छन्दुर्गमे(ऽ*)ध्वन्यसङ्गां
धुरमतिगुरुभारां यो दधद्भर्त्तु रर्थे ।
वहति नृपति-वेषं केवलं लक्ष्म-मात्रं

१९ वलिनमिव विलम्बं कम्बलं बाहुलेयः ॥ २१
उपहित-हित-रक्षामण्डनो जाति-रत्नै-
र्भुज इव पृथुलांसस्तस्य बक्षः कनीयान् (।*)
महदिदमुदपानं खानयामास बिभ्र-

२० च्छ्रुति-हृदय-नितान्तानन्दि निर्द्दोष-नामा ॥ २२
सुखाश्रेय-च्छायं-परिणति-हित-स्वादु-फलदं
गजेन्द्रेणारुग्णं द्रुममिव कृतान्तेन बलिना ।
पितृव्यं प्रोद्दिश्य प्रियमभयदत्तं पृ-

२१ . थु-धिया
प्रथीयस्तेनेदं कुशलमिह कर्म्मोपरचितं ॥ २३
पञ्चसु शतेषु शरदां यातेष्वेकान्ननवति-सहितेषु ।
मालव-गण-स्थिति-वशात्काल-ज्ञानाय लिखितेषु ॥ २४
य-

२२ स्मिन्काले कल-मृदु-गिरां कोकिलानां प्रलापा

भिन्दन्तीव स्मर-शर-निभाः प्रोषितानां मनांसि ।
भृङ्गालीनां ध्वनिरनुवनं भार-मन्द्रश्च यस्मि-
न्नाधूत-ज्यं धनुरिव नदच्छ्रूयते पुष्प-
केतोः ॥ २५ ।

२३ प्रियतम-कुपितानां कम्पयन्बद्धरागं
किसलयमिव मुग्धं मानसं मानिनीनां (।★)
उपनयति नभस्वान्मान-भङ्गाय यस्मि-
न्कुसुम-समय-मासे तत्र निर्म्मापितो (ऽ★) यम् ॥ २६

२४ यावत्तुङ्गैरुदन्वान्किरण-समुदयं सङ्ग-कान्तं तरङ्गै-
रालिङ्गन्निन्दु-बिम्बं गुरुभिरिव भुजैः संविधत्ते सुहृत्ताम् (।★)
बिभ्रत्सौधान्त-लेखा-वलय-परिगति मुण्डमालामिवायं
सत्कूपस्तावदा-

२५ स्ताममृत-सम-रस स्वच्छ-विष्यन्दिताम्बुः ॥ २७
धीमां दक्षो दक्षिणः सत्यसन्धो
ह्रीमांच्छूरो वृद्ध-सेवी कृतज्ञः ।
बद्धोत्साहः स्वामि-कार्य्येष्वखेदी
निर्द्दोषो (ऽ★) यं पातु धर्म्मं चिराय ॥ २८
उत्कीर्णा गोविन्देन ॥

हूण राजा तोरमाण का एरण लेख

का. इ. इ. ३
तिथि शासन काल १

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान एरण (सागर) म. प्र.
लिपि—छठी सदी ब्राह्मी | तिथि—५१५ई०

१ सिद्धम्
जयति धरण्युद्धरणे घन-घोणाघात-घूर्ण्णित-महीध्रः (।★)
देवो वराहमूर्त्तिस्त्रैलोक्य-महागृह-स्तम्भः (॥★) १
वर्षे प्रथमे पृथिवी (म्)

२ पृथु-कीर्त्तौ पृथु-द्युतौ (।★)
महाराजाधिराज-श्रीतोरमाणे प्रशासति । (।★) २
फाल्गुन-दिवसे दशमे इत्येवं राज्य-वर्ष-मास-दिनैः
एतस्यां

३ पूर्वायाम् । स्व-लक्षणैर्युक्त-पूर्व्वायाम् । (।★) ३
स्वकर्म्माभिरतस्य क्रतुयाजिनो (ऽ★) धीत-स्वाध्यायस्य विप्रर्षेर्म्मैत्रायणीयवृषभस्येन्द्र-विष्णोः
प्रपौत्रस्य

४ पितुर्गुणानुकारिणो वरुणविष्णोः पौत्रस्य पितरमनुजातस्य स्ववंश-वृद्धिहेतोर्हरिविष्णोः पुत्रस्या-त्यन्त-भगवद्भक्तस्य विधातुरिच्छया ।

५ स्वयंवरयेव राजलक्ष्म्याधिगतस्य चतुःसमुद्र-पर्यन्त-प्रथितयशसः अक्षीण-मान-(ध) नस्यानेक-शत्रु-समर-जिष्णोः महार (ा★) ज-मातृविष्णोः

६ स्वर्गतस्य भ्रात्रानुजेन तदनुविधायिना तत्प्रसाद-परिगृहीतेन धन्यविष्णुना तेनैव (स) हावि-भक्त-पुण्यक्रियेण मातापित्रोः

७ पुण्याप्यायनार्थमेव भगवतो वराहमूर्त्तेर्ज्जगत्परायणस्य नारायणस्य शिलाप्रा (सादः) स्व-विष (ये) (ऽ-) स्मिन्नेरिकिणे कारितः । (।★)

८ स्वस्त्यस्तु गो-ब्राह्मण-पुरोगाभ्यः सर्व-प्रजा (भ्य इ) ति ।

हूण नरेश मिहिरकुल का ग्वालियर शिला-लेख

का० इ० इ० भा० ३

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—ग्वालियर म० प्र०

लिपि—ब्राह्मी छठी सदी | तिथि—शासन काल १५ (छठी सदी)

१ स्वस्ति

(ज★) (य) ति जलद-वल-ध्वान्तमुत्सारयन्स्वैः
किरण-निवह-जालैर्व्योम विद्योतयद्भिः (।)
उ (दय★)-(गिरि)-तटाग्र (★) मण्डयन् यस्तुरंगैः
चकित-गमन-खेद-भ्रान्त-चंचत्सटान्तैः । १
उदय-(गिरि)-

२ ◡— —ग्रस्त-चक्रो (ऽ★) र्त्ति-हर्त्ता
भुवन-भवन-दीपः शर्व्वरी-नाश-हेतुः (।★)
तपित-कनक-वर्ण्णैरंशुभि⌒पङ्कधान (।★)-
मभिनव-रमणीयं यो विधत्ते स वो(★ऽ)व्यात् । २
श्री-तार(माण इं★)ति यः प्रथितो

३ (भूचक्र★)पः प्रभूत-गुणः (।★)
सत्यप्रदान-शौर्य्याद्येन महीं न्यायत(:) शास्ता (।।★) ३
तस्योदित-कुल-कीर्त्तेः पुत्रो(ऽ★)तुल-विक्रमः पतिः पृथ्व्याः (।★)
मिहिरकुलेतिख्यातो(ऽ★)भग्नो यः पशुपतिम ★ ★ ★ (।।★) ४

४ (तस्मिन्रा★)जनि शासति पृथ्वीं पृथु-विमल-लोचने(ऽ★)र्त्तिहरे (।★)
अभिवर्द्धमान-राज्ये पंचदशाब्दे नृप-वृषस्य । (।★) ५
शशिरश्मिहास-विकसित-कुमुदोत्पल-गन्ध-शीतलामोदे (।★)
कार्त्तिक-मासे प्राप्त गगन-

५ (पतौ★) (नि★)र्म्मले भाति । (।★) ६
द्विज-गण-मुख्यैरभिसंस्तुते च पुण्याह-नाद-घोषेण (।★)

तिथि-नक्षत्र-मुहूर्त्ते संप्राप्ते सुप्रशस्त-(दिने) । (।★) ७
मातृतुलस्य तु पौत्रः पुत्रश्च तथैव मातृदासस्य (।★)
नाम्ना च मातृचेटः पर्व्व-
६ (त-दुर्ग★) (ानु) वास्तव्यः (॥★) ८
नानाधातु-विचित्रे गोपाह्वय-नाम्नि भूधरे रम्ये (।★)
कारितवाञ्छैलमयं भानोः प्रासाद-वर-मुख्यम् । (।★) ९
पुण्याभिवृद्धिहेतोर्म्मातापित्रोस्तथात्मनश्चैव (।★)
वसता (ं★) च गिरिवरे (ऽ★) स्मि (न्★) राज्ञः
७ ★ ★ ★ (पा?) देन (॥★) १०
ये कारयन्ति भानोश्चन्द्रांशु-सम-प्रभं गृह-प्रवरं (।★)
तेषां वासः स्वर्गे यावत्कल्प-क्षयो भवति ॥ ११
भक्त्या रवेर्विरचितं सद्धर्म्म-ख्यापनं सुकीर्त्तिमयं (।★)
नाम्ना च केशवेतिप्रथितेन च ।
८ ★ ★ ★ (दि?) त्येन (॥★) १२
यावच्छर्व्व-जटा-कलाप-गहने विद्योतते चन्द्रमा
दिव्यस्त्री-चरणैर्व्विभूषित-तटो यावच्च मेरुर्नगः (।★)
यावच्चोरसि नीलनीरद-निभे शिष्णुर्विभर्त्युज्वलां
श्रीस्तावद्गिरि-मूर्ध्नि तिष्ठति
(शिला-प्रा★)साद-मुख्यो रमे (॥★) १३

मौखरि राजा ईशानवर्मन का हरहा शिलालेख

ए. इ. भा. १४ सं. ५

भाषा-संस्कृत — प्राप्तिस्थान–हरहा (बाराबंकी) उ० प्र०
लिपि–छठीं सदी की गुप्त लिपि — तिथि–वि० सं० ६११ (५५४ ई०)

१ लोकाविष्कृतिसंक्षयस्थितिकृतां यः कारणं वेधसाम्, ध्वस्तध्वान्तचयाः परास्तरजसो ध्यायन्ति यं योगिनः । यस्यार्द्धस्थितयोषितोपि हृदये नास्थायि चेतोभुवा भूतात्मा त्रिपुरान्तकः स

२ जयति श्रेयः प्रसूतिर्भवः ॥ (१) आशोणां फणिनः फणोपलरुचा सैक्षीं वसानं त्वचं, शुभ्रां लोचनजन्मना कपिशयड्भासा कपालावलीम् (।) तन्वीं ध्वान्तनुदं मृगाकृतिभृतो बिभ्रत्कलां मौलिना दिश्यादन्ध-

३ कविद्विषः स्फुरदहि स्थेयः पदं वो वपुः ॥ (२) सुतशतं लेभे नृपोश्वपतिर्व्वैवस्वताद्यद्गुणोदितम् । तत्प्रसूता दुरितवृत्तिरुधो मुखराः क्षितीशाः क्षतारयः ॥ (३) तेष्वादौ हरिवर्म्मणोवनिभुजो भूतिर्भु-

४ वो भूतये (।)
रुद्धाशेषदिगन्तरालयशसा रुग्णारिसंपत्तिषा । सङ्ग्रामं हुतभुक्क्रमाकपिलित वक्त्रं समीक्ष्यारिभिर्यो भीतैः प्रणातस्ततश्च भुवने ज्वालामुखाख्यांगतः ॥४॥ लोकस्थितीनां स्थितये स्थि-

५ तस्य मनोरिवाचारविवेकमार्गे । जगाहिरे यस्य जगन्ति रम्याः सत्कीर्त्तयः कीर्त्तिवि(व)र्म्मनाम्नः (५)
तस्मात्पयोधेरिव शीतरश्मिरादित्यवर्म्मा नृपतिर्ब्बभूव । वर्णाश्रमाचारविधिप्रणीतौ यं प्राप्य

६ साफल्यमियाय धाता ॥ (६)
हुतभुजि मखमध्यासङ्गिनि ध्वान्तनीलम्
वियति पवनजन्मभ्रान्तिविक्षेपभूयः ।
मुखरयति समन्तादुत्पतद्धूमजालम्
शिखिकुलमुरुमेघाशङ्कि यस्य

७ प्रसक्तम् ॥ (७)
तेनापीश्वरवर्म्मणः क्षितिपतेः क्षत्रप्रभावाप्तये (।) जन्माकारि कृतात्मनः क्रतुगणैर्व्याहूतवृत्तद्विषः । यस्योत्खातकलिस्वभावचरितस्याचारमार्ग्गं नृपा यत्नेनापि भयाति-

८ तुल्ययशसो नान्येनुगन्तु क्षमाः (८)
नीत्या शौर्यं विशालं सुहृदमकुठिनेनोमेच्छाङ्कुलेन त्यागं पात्रेण वित्तप्रभवमपि ह्रिया यौवनं संयमेन । वाचं सत्येन चेष्टां श्रुतिपथविधिना प्रश्रये-

९ णोत्तमर्द्धिम्
यो बन्धं नैव खेदं व्रजति कलिगयध्वान्तमग्नेपि लोके (९) यस्येज्यास्वनिशं यथाविधि हुतज्योतिर्ज्वलज्जमना........मेनाञ्जनभङ्गमेचकरुचा दिक्चक्रवाले तते । आयता नव-

१० वारिभारविनमन्मेघावली प्रावृडि-
त्युन्मादोद्धतचेतसः शिखिगणा वाचालतामाययुः ॥ १० ॥
तस्मात्सूर्य्य इवोदयाद्रिशिरसोधातुर्म्मरुत्वानिव क्षीरोदादिव तर्जितेन्दुकिरणः कान्तप्रभः कौस्तुभः (।)

११ भूतानामुदपद्यत स्थितकरः स्थेष्ठं महिम्नः पदम्, राजभ्राजकमण्डलाम्बरशशी श्रीशानवर्म्मा नृपः ॥ (११) लोकानामुपकारिणारिकुमुदव्यालुप्तकान्तिश्रिया (।) मित्रास्याम्बुरुहाकरद्युतिकृता भूरि-

१२ प्रतापत्विषा ॥
येनाच्छादितसत्पथं कलियुगध्वान्तावमग्नञ्जगत्सूर्येणेव समुद्यता कृतिमिदं भूयः प्रवृत्तक्रियम् ॥ (१२) जित्वान्ध्राधिपतिं सहस्रगणितत्रेधाक्षरद्वारणम् व्यावल्गन्नियुताति-

१३ संख्यतुरगान्भङ्क्त्वा रणे शूलिकाम् (।) कृत्वा चायतिमौचितस्थलभुवो गौडान्समुद्राश्रयानध्यासिष्ट नतक्षितीशचरणः सिंहासनं यो जितो ॥ १३ ॥ प्रस्थानेषु बलास्वर्णवाभिगमनक्षोभस्फुटद्भूतल-

१४ प्रोद्भूतस्थगितार्क्कमण्डलरुचा विश्वव्यापिना रेणुना । यस्यामूढदिनादिमध्यविरतौ लोकेन्धकारीकृते (।) व्यक्तिं नाडिकयैव यान्ति जयिनी यामास्त्रियामास्विव ॥ १४ ॥
प्रविशती कलिमारुतघट्टिता

१५ क्षितिरलध्यरसातलवारिधौ ।
गुणशतैरवबध्य समन्ततः
स्फुटितनौरिव येन बलाद्धृता ॥ १५ ॥
ज्याघातव्रणरूढिकर्कशभुजा व्याकृष्टशार्ङ्गच्युता-
न्यस्यावाप्य पतत्रिणो रणमखे प्राणनमुञ्च

१६ न्द्विषः ।
यस्मिन्शासति च क्षिति क्षितिपतौ जातेव भूयस्त्रयी (।)
तेन ध्वस्तकलिप्रवृत्तितिमिरा श्रीसूर्यवर्म्माजनि ॥ १६ ॥
यो बालेन्दुकसान्ति कृत्स्नभुवनप्रेयो दधद्यौवनम्, शान्तः शास्त्रविचारणा-

१७ हितमनाः पारङ्कलानाङ्गतः ।
लक्ष्मीकीर्त्तिसरस्वतीप्रभृतयो यं स्पर्धयेवाश्रिता, लोके कामितकामिभावरसिकः कान्ताजनो भूयसा ॥ १७ ॥
सद्वृत्तेन बलात्कलेरवनतिस्तावत्प्रवृद्धात्मनो

१८ बाणं स्तावदवस्थितं स्मृतिभुवः कान्ताशरीरक्षतौ (।)
लक्ष्म्या तावदकाण्डभंगजमयं त्यक्तम्परापाश्रयम् (।)
यावन्नाधिरकारि यस्य जनताकान्तं वपुर्व्वेधसा ॥ १८ ॥
लक्ष्यः शत्रुभुवः कुचग्रहभयावेशाभ्रम

१९ ल्लोचना (।)
येनाकृष्य भुजेन विस्फुरदसिज्योतिः कलासंगिना ।
कान्ता मन्मथिनेव कामितविदा गाढं निपीड्योरसा
प्रायेणान्यमनुष्यसंश्रयकृतं भावं परित्याजिता ॥ १९ ॥
तेनानतोन्नतिकृता

२० मृगयागतेन
दृष्ट्वाद्यमन्धकभिदो भवनं विशीर्णम् (।)
स्वेच्छासमुन्नतमकरि ललाम भूमेः
क्षेमेश्वरप्रथितनाम शशाङ्कशुभ्रम् । (२०)
एकादशातिरिक्तेषु षट शातितविद्विपि ।

२१ शतेषु शरदां पत्यौ भुवः श्रीशानवर्म्मणि ॥ २१ ॥
यस्मिन्कालेम्बुवाहा नवगवजरुचः प्रान्तलग्नेन्द्रचापा-
स्तन्व्याशावितानं स्फुरदुरुतडितः सान्द्रधीरं क्वणन्तः ।
वाताश्च वान्ति नीपान्नवकुसुमचयानम्रमूर्द्धो

२२ धुनाना-
स्तस्मिन्मुक्ताम्बुमेघद्युति भवनमदो निर्मितं शूलपाणे (२२)
कुमारशान्तेः पुत्रेण गर्ग्गशकटवासिना ।
नृपानुरागात्पूर्व्वं यमकारि रविशान्तिना ॥ २३ ॥
उत्कीर्णा मिहिरवर्म्मणा ॥

वर्धन सम्राट् हर्ष का बांसखेड़ा ताम्रपत्र—लेख

ए. इ. भा. ४

भाषा-संस्कृत — प्राप्ति स्थान–बांसखेड़ा शाहजहानपुर, उ० प्र०

लिपि–ब्राह्मी छठी सदी — तिथि–(हर्ष सम्वत् २२ = ६२८ ई०)

ओं स्वस्ति । महानौहस्त्यश्वजयस्कन्धावाराच्श्रीवर्धमानकोटचा महाराजश्रीनरवर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः श्रीवज्रिणीदेव्यामुत्पन्नः परमादित्यभक्तो महाराज श्रीराज्यवर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः श्रीमदप्सरोदेव्यामुत्पन्नः परमादित्यभक्तो महाराज श्रीमदादित्यवर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पानुध्यातः श्रीमहासेनगुप्ता देव्यामुत्पन्नश्चतुस्समुद्रातिक्रान्तकीर्तिः प्रतापानुरागोपनतान्य-राजो वर्णाश्रमव्यवस्थापनप्रवृत्तचक्र एकचक्ररथइव प्रजानामार्तिहरः परमादित्यभक्तः परमभट्टा-रक महाराजाधिराज श्री प्रभाकर वर्धनस्तस्य पुत्रस्तत्पादानुध्यातः स्मितशः प्रतानविच्छुरित-सकलभुवनमण्डलः परिगृहीतधनदवरुणेन्द्रप्रभृतिलोकपालतेजाः सत्पथोपार्जितानेकद्रविणभूमिप्रदान-संप्रीणितार्थिहृदयोतिशयितपूर्वराजचरितो देव्याममलयशोमत्यां श्रीयशोमत्यामुत्पन्नः परमसौगतः सुगत इव परहितैकरतः परमभट्टारक महाराजाधिराज श्रीराज्यवर्धनः ।

राजानो युधि दुष्टवाजिन इव श्रीदेवगुप्तादयः
कृत्वा येन कशाप्रहारविमुखाः सर्वे समं संयताः ।
उत्खाय द्विषतो विजित्य वसुधां कृत्वा प्रजानां प्रियं
प्राणानुज्झितवानरातिभवने सत्यानुरोधेन यः ॥२॥

तस्यानुजस्तत्पादानुध्यातः परममाहेश्वरो महेश्वर इव सर्वसत्वानुकम्पी परमभट्टारक महारा-जाधिराजश्रीहर्षः अहिच्छत्राभुक्तौ वङ्गदीयवैषयिकपश्चिमपथकसम्बद्धमर्कटसागरे समुपगतान्महा-सामन्तमहाराजदौस्साधनिक प्रमातार राजस्थानीय कुमारामात्योपरिकविषयपतिभटचाटसेवकादी-न्प्रतिवासिजानपदांश्च समाज्ञापयति—

विदितमस्तु यथायमुपरिलिखितग्रामः स्वसीमापर्यन्तः सोद्रङ्गः सर्वराजकुलाभाव्यप्रत्यायसमेतः सर्वपरिहृतपरिहारो विषयादुद्धृतपिण्डः पुत्रपोत्रानुगश्चन्द्रार्कक्षितिसमकालीनो भूमिछिद्रन्यायेन मया पितुः परमभट्टारक महाराजाधिराज श्री प्रभाकरवर्धनदेवस्य मातुर्भट्टारिकामहादेवी राज्ञी श्रीयशोमतीदेव्या ज्येष्ठभ्रातृ परम भट्टारकमहाराजाधिराजश्रीराज्यवर्द्धनदेव पादानां च पुण्ययशो-भिवृद्धये भारद्वाजसगोत्रबह्वृचच्छन्दोगसब्रह्मचारिभट्टवाल चन्द्रभद्रस्वामिभ्यां प्रतिग्रहधर्मेणाग्रहार-त्वेन प्रतिपादितो विदित्वाभवद्भिः समनुमन्तव्यः प्रतिवासिजानपदैरप्याज्ञाश्रवणविधेयैर्भूत्वा यथा-समुचिततुल्यमेयभागभोग करहिरण्यादिप्रत्याया स्तयोरेवोपनेयाः सेवोपस्थानं च करणीय-मित्यपि च ।

अस्मत्कुलक्रममुदारमुदाहरद्भि—
रन्यैश्च दानमिदमभ्यनुमोदनीयम् ।
लक्ष्म्यास्तडित्सलिलबुद्बुदचञ्चलाया
दानं फलं परयशः परिपालनं च ॥ १ ॥

कर्मणा मनसा वाचा कर्तव्यं प्राणिभिर्हितम् ।
हर्षेणैतत्समाख्यातं धर्मार्जनमनुत्तमम् ।। २२ ।।

दूतकोऽत्र महाप्रमातारमहासामन्तश्रीस्कन्दगुप्तः महाक्षपटलाधिकारणधिकृतमहासामन्तमहाराजभानुसमादेशादुत्कीर्णमीश्वरेणेदमिति । संवत् २०२ कार्तिक वदि १ । स्वहस्तो मम महाराजाधिराजश्रीहर्षस्य ।

शशाङ्क कालीन ताम्रपत्र

ए. ई. भा. ६ पृ. १४४

भाषा–संस्कृत | प्राप्ति स्थान–गंजाम, आ. प्र.
लिपि–ब्राह्मी (नुकीला सिरेवाला) | तिथि–गु. सं. ३०० = ६१९ ई.

१ ओं स्वस्ति । चतुरुदधिसलिलवीचीमेखलानिलीनायां सद्वीपा—
२ गरपत्तनवत्या वसुन्धरायां गौप्ताब्दे वर्षशतत्रय वर्त्तमाने
३ महाराजाधिराजश्रीशशाङ्क राज्ये शासति गगणतल—
४ विनि (:*) सृतभगीरथावतारिताया हिमवद्गिरेरुपरि
५ पतना (द*) नेक शिलासंहातविभिन्नवहि पातालान्तर्ज्जलौघै
६ सुरसरित इव विविधतरुवरकुसुमसञ्छन्नोभयतटा—
७ न्तविनिपतितजलाशयायाः श (ा) लिमासरितः कुला (प) कण्ठा
८ द्विजयकोङ्कदात्महाराजमहासामन्त श्रीमाधवराजस्य प्रियतनयो
९ महाराज (ा) यशोभीतस्यापि प्रियसूनुः स्वगुण (म) रीचिनिकर—
१० प्रबोधितशिलोद्भवकुलकमलो विकोशनीलोत्पल—
११ प्रतिस्पर्द्धि (नो) खङ्गधारानिशितनिश्शेषप्रतिहतरिपु
१२ बलो दीनानाथकृमणवनीपकोपभुज्यमानविभवः स्वभु—
१३ जपरिघयुगलोपार्ज्जितनृपश्री (:*) कमलविमलरुधर—
१४ तनुर्ज्जगन्म (ण्ड*) लमराऽनश्रुतशौर्यधैर्यगुणान्वितो महावृषभपर्यङ्क
१५ ककुदोपधानविन्यस्तवाहोर्व्वालचन्द्रोद्योतितजटाकलापैकदे—
१६ शस्य भगवतस्स्थित्युत्पत्तिप्रलयसृष्टिसङ्हारकारणस्य
१७ त्रिभुवनगुरो पादभक्तः परमब्रह्मण्यो महाराजमहासा—
१८ मन्तश्रीमाधवराजः कुशली कृष्णगिरि विषयसंबद्धच्छवल—
१९ क्खयग्रामे वर्त्तमानभविष्यत्कुमारामात्यो—परिकतदायुक्तकानन्याश्च
२० यथार्ह पूजयति मानयति च (।*)
विदितमस्तु भवतामयं ग्रामो—
२१ स्माभिरर्द्धेण मातापित्रोरात्मनश्च पुण्याभिवृद्धये सलिलधारापुर—
२२ स्सरेणाचन्द्रार्क्कसमकालीनाक्षयनीवे भरद्वाजसगोत्रायाङ्गि—
२३ रसवार्हस्पत्यप्रवराय छरम्पस्वामिने सूर्योपरागे प्रतिपादित (:)

२४ उक्तञ्च स्मृतिशास्त्रे । बहुभिर्व्वसुधास्ता राजभिस्सगरादिभिः
२५ यस्य यस्य यदा भूमितस्य तदा फलं ।। षष्टि वर्षसहस्रा—
२६ णि स्वर्गे मोदति भूमिदः (।*) आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके
२७ वसे (त्) ।। स्वदत्ता परदत्ताम्बा यो हरेत वसुन्धरा (म् ।) स विष्ठायां
२८ (कृमि) र्भूत्वा पितृभिस्सह पच्यते ।। मा भूतफलशङ्का व (:) परदत्ते—
२९ ति पार्थिव । स्वदानात् फलमानन्त्य
३० परदत्तानु पालने
३१ प्रयच्छति

●

अध्याय १८

पूर्व मध्यकालीन अभिलेख

भारतीय इतिहास में सातवीं सदी के पश्चात् बारहवीं सदी तक का युग पूर्व मध्यकाल के नाम से उल्लिखित किया जाता है। हर्षवर्धन के साम्राज्य को अवनति के बाद उत्तरी भारत में कोई ऐसा शासक न हुआ जो दिग्विजय की अभिलाषा कर साम्राज्य वृद्धि में प्रयत्नशील हो। इस युग की विशेषता यह है कि हर्षवर्धन के शासनकाल में कान्यकुब्ज को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला था। जो कालान्तर उसी रूप में समझा गया। कन्नौज का स्वामी बन शासक अपने को यशस्वी समझता। प्राचीन युग में पाटलिपुत्र का जो स्थान रहा, वही कान्यकुब्ज ने ले लिया। इसी कारण विभिन्न शासक इस नगरी पर अधिकार स्थापित करना चाहते थे जिसके लिए कई बार युद्ध भी हुए। लेखों में वर्णन आता है कि गुर्जर प्रतिहार, पाल तथा राष्ट्रकूट वंशी नरेश परस्पर कन्नौज पर अधिकार के निमित्त युद्ध करते रहे। उसी को त्रिकोण युद्ध कहते हैं, जिसका उल्लेख स्थान-स्थान पर मिलता है। पूर्व मध्यकालीन अभिलेखों का अध्ययन यह प्रकट करता है कि लेख अमुक धार्मिक कार्य के लिए उत्कीर्ण किए गए थे। उस धार्मिक कार्य को सम्पन्न करने वाले राजा की वंशावली तथा उसकी उपलब्धियों का विवरण प्रशस्तिकार ने उपस्थित किया है। स्वभावतः अभिलेखों में युद्ध का वर्णन मिल जाता है। इस काल में प्रचलित धर्म-भावना, धार्मिक कार्य तथा सामाजिक रीति रिवाज का परिज्ञान उनके अनुशीलन से हो जाता है।

प्रथम दो लेख गुर्जर प्रतिहार वंश के शासक बाउक (जोधपुर प्रशस्ति) तथा भोज-देव (ग्वालियर शिलालेख) की उपलब्धियों का वर्णन करते हैं। जोधपुर प्रशस्ति में बाउक के पूर्वजों के नाम भी मिलते हैं। इस वंश के पूर्व पुरुष हरिश्चन्द्र ने अन्तर्जातीय विवाह किया था। उसकी ब्राह्मण पत्नी से उत्पन्न वंशजों का नाम उल्लिखित नहीं है। हरिश्चन्द्र की क्षत्रिय पत्नी के संतानों में बाउक अंतिम व्यक्ति था। आश्चर्य यह है कि जोधपुर लेख में क्षत्रिय वंशजा भार्या को "मधुपायिनः" (शराब पीने वाली) विशेषण से उल्लिखित किया गया है। इस लेख के अध्ययन से यह ज्ञात नहीं होता कि बाउक की राजकीय स्थिति क्या थी ? कारण यह है कि लेख में भट्टारक अथवा महाराज शब्दों का प्रयोग नहीं मिलता। उसी वंश के एक शासक ने मेरता नगर (जोधपुर के समीप) को अपनी राजधानी बनाया। उस क्षेत्र को गुर्जरत्रा भूमि कहा जाता है। इस स्थान से गुर्जर नरेशों ने उत्तरी भारत के कान्य-कुब्ज नगर पर किस समय अधिकार किया, यह अज्ञात है। बाउक ने कई शासकों को जीतकर वंश की ख्याति बढ़ाई। शक्ति का परिचय दिया था। किन्तु बाउक के वंश से कन्नौज के प्रतिहार वंश का कोई सम्बन्ध स्थिर नहीं हो पाया है। बाउक के पश्चात् गुर्जर प्रतिहार राजा मध्यभारत के क्षेत्र में शासन करते रहे। भोज का ग्वालियर लेख उसका प्रमाण है। नागभट तथा वत्सराज के समय में ही प्रतिहारों ने कन्नौज को स्थायी राजधानी चुन लिया।

भोज की ग्वालियर प्रशस्ति छंदबद्ध उत्तम काव्य शैली में लिखी गयी है। इस लेख में वर्णन आता है कि राजा भोज ने महल में भगवान् विष्णु के लिए सुन्दर स्थान निर्मित किया था। भोज के पूर्वजों के नाम मिलते हैं। इसलिए प्रतिहार वंश के इतिहास-निर्माण के लिए ग्वालियर प्रशस्ति को महत्त्वपूर्ण एवं प्रमाणिक आधार मान सकते हैं। नागभट्ट प्रथम ने म्लेच्छों (अरब वालों) को परास्त किया था। उसी प्रकार देवराज ने अनेक शत्रुओं को पराजित किया था। वंश की ख्याति बढ़ती गई। गुर्जर प्रतिहार वंश के तीसरे शासक वत्सराज (ई० स० ७८३) ने भण्डी नामक जाति के राज्य का भूभाग अपने अधिकार में कर लिया था। भण्डीकुल के समीकरण में विद्वानों के मध्य विवाद है। हर्ष चरित में भण्डीकुल का उल्लेख है। सम्भवत: उसी का वर्णन ग्वालियर प्रशस्ति में किया गया है। यदि यह वर्णन सत्य मान लिया जाय तो ज्ञात होता है कि वत्सराज ने कन्नौज पर अधिकार कर लिया था। हरिवंश पुराण में वह उज्जैन का शासक कहा गया है। (पूर्वी श्रीमद् अवन्ति भूभृत नृपे वत्साधिराजे पराम्) भोज का पितामह द्वितीय नागभट्ट (ई० स० ८१५) ने कान्यकुब्ज के शासक चक्रायुध को हराया था। जिसका नाम पालवंशी ताम्रपत्र खालिमपुर में उल्लिखित है। उसे धर्मपाल ने कन्नौज के सिंहासन पर बैठाया था। प्रतिहार तथा पाल नरेशों में कान्यकुब्ज पर अधिकार निमित्त युद्ध छिड़ गया जिसमें नागभट्ट विजयी रहा। प्रशस्ति में विवरण मिलता है कि द्वितीय नागभट्ट ने आनर्त (बम्बई का भाग) तुरुष्क (अरब वाले) मालवा (पूर्वी राजपुताना) वत्स तथा मत्स्य (मध्य भारत का क्षेत्र) शासकों को परास्त कर कान्यकुब्ज पर सफल आक्रमण किया था। सम्भवतः इसी नागभट्ट ने कन्नौज पर सर्वप्रथम प्रतिहारों का आधिपत्य स्थापित किया और गुर्जरत्रा भूमि से उत्तर प्रदेश आते समय मार्ग के समीपस्थ राजाओं पर भी विजय पाई थी। मुसलमान लेखक अल-बिलादुरी ने स्पष्ट लिखा है कि अरब सेना ने उज्जैन पर आक्रमण किया था जिसे प्रतिहार शासक ने विफल कर दिया। इस प्रकार राजपुताना में अरब के ईस्लामी सेना तथा प्रतिहार वंश में युद्ध होता रहा। मुसलमान इनके विरोध के कारण सिन्ध या मुल्तान से आगे न बढ़ सके।

प्रशस्ति में वत्सराज से लेकर भोजदेव तक शासकों का विस्तृत रूप से युद्धगाथा का वर्णन किया गया है। वत्सराज के शासन काल से ही साम्राज्य निर्माण की भावना काम कर रही थी। अतएव प्रतिहार राजाओं ने इस स्वप्न को पूरा करने का संकल्प भी किया। वत्सराज ने सिन्ध, आंध्र, विदर्भ तथा कलिङ्ग के शासकों से युद्ध के उपरान्त एक संघ स्थापित किया। इसी कारण पाल तथा दक्षिण के राजा राष्ट्रकूट नरेश से युद्ध करने का विचार भी स्थिर किया। द्वितीय नागभट्ट ने धर्मपाल की सेना को परास्त कर प्रतिहार वंश की सर्वोन्नति की।

इसी बीच राष्ट्रकूट नरेश तृतीय गोविन्द ने उत्तरी भारत पर आक्रमण कर दिया। राष्ट्रकूट वंशी अभिलेखों में इस विजय का विवरण मिलता है। कर्कराज के बरोदा ताम्रपत्र लेख में "गोडेन्द्र वंगपति निर्ज्जय दुर्विगद्ध" वाक्य उल्लिखित है। पालवंश को प्रतिहार युद्ध में सफलता न मिल सकी। अतएव प्रतिहार तथा राष्ट्रकूट युद्ध से दोनों वंशों की कठिनाइयाँ बढ़ गई। किसी को विशेष लाभ न हो सका। संजान ताम्रपत्र लेख में वर्णन है कि राष्ट्रकूट सेना गंगा यमुना

त्रिकोण युद्ध

की घाटी में पहुँच गई तथा गौड़ नरेश (धर्मपाल) को हरा दिया (गंगा यमुनयोर्मध्ये राज्ञो गोड़स्य नश्यतः) प्रतिहार लोगों के दक्षिण प्रदेश भी उनके अधिकार से हट गए। यह परिस्थिति अधिक समय तक न रह सकी। राष्ट्रकूट राजा दक्षिण लौट गया। इस कारण उत्तरी भारत के दोनों—प्रतिहार तथा पाल—नरेशों में मुटभेंड़ हो गई। पाल नरेश प्रतिहार राजा के सम्मुख शक्तिहीन हो गए। धर्मपाल का कन्नौज पर अधिकार निरर्थक हो गया। चक्रायुध हराया गया तथा द्वितीय नागभट्ट ने (ई० स० ८३३) कान्यकुब्ज पर अधिकार स्थापित कर उसी को अपनी राजधानी घोषित किया।

ग्वालियर प्रशस्ति में भोजदेव की ख्याति तथा विशाल राज्य का वर्णन मिलता है। उसके समय में गुर्जर प्रतिहार वंश का यश चरम सीमा पर पहुँच गया। चात्सु लेख (ए० इ० भा० १२ पृ० १०) में राजा के पुत्र संकरगण द्वारा भोजदेव को घोड़े अर्पित करने का वर्णन है। डा० भण्डारकर इस भोज को प्रतिहार नरेश मिहिर भोज मानते हैं। ग्वालियर प्रशस्ति में उसे मिहिर भोज कहते हैं तथा सिक्कों पर 'आदिवराह' पदवी से वह विभूषित है। भोज ने साम्राज्य का निर्माण किया। हिमालय तक उसका राज्य विस्तृत था। कलहा (गोरखपुर) ताम्रपत्र लेख में कन्नौज के राजा भोज द्वारा दान का वर्णन किया गया है (ए० इ० भा० ८ पृ० ६) उसने पाल वंशी राजा देवपाल को भी सम्भवतः परास्त किया था (ए० इ० भा० ७ पृ० ८६) किन्तु बदल स्तम्भ लेख (ए० इ० भा० २ पृ० १६३) में गुर्जर राजा के दर्प मिटाने का विवरण दिया गया है—खर्वी कृत गुर्जरनाथ दर्पः।

भोजदेव ने पश्चिम में नर्वदा के किनारे शत्रुओं को हराया। सम्भवतः उस भूभाग में राष्ट्रकूट अधिकार समाप्त कर दिया। चहमान राजाओं के लिए भोजदेव प्रसन्नता का साधन था (ए० इ० भा० १४ पृ० १८०) डा० राय चौधरी का मत है कि सौराष्ट्र में भी भोज का प्रताप विस्तृत हो गया था।

राष्ट्रकूट वंश की बेगूमारा प्रशस्ति में (इ० ए० भा० १२) भोज के दुर्भाग्य का वर्णन है कि मिहिर (भोज) समस्त सामन्तों तथा अधिनायकों से घिरा रहने पर भी राष्ट्रकूट नरेश ध्रुव के सम्मुख ठहर न सका। जो भोज संसार के विजय का सपना देख रहा था—

श्रीमद् आदि वराह त्रैलोक्यं विजिगीषुनाम्। वह राष्ट्रकूटों को परास्त न कर सका। इस युद्ध में किसी वंश को लाभ न हो सका तथा युद्ध अनिश्चित स्थिति में ही बंद हो गया।

भोजदेव की ख्याति तथा प्रताप का वर्णन सुलेमान (मुसलमान) लेखक ने किया है कि उत्तर पश्चिम में अरब लोगों के लिए भोज शत्रु बना रहा। ईस्लाम मतानुयायी उसके कारण पूरब की ओर बढ़ न सके (इलियट हिस्ट्री भा. १ पृ. ४)

इस प्रकार ग्वालियर प्रशस्ति के वर्णन से गुर्जर प्रतिहार वंश की वार्ता सरलता से ज्ञात हो जाती है। उस वंश की उपलब्धियों के विषय में भी हमारी जानकारी बढ़ जाती है।

पूर्व मध्य युग के शासक पाल वंशी नरेशों के तीन दानपत्रों का समावेश इस क्रम में किया गया है। सभी दानपत्र यानी ताम्रपत्रों पर लेख अंकित हैं तथा दान सम्बन्धी प्रत्येक विषय का विवरण उपलब्ध होता है। यों तो पालवंश के प्रधान राजा बौद्ध धर्मावलम्बी थे और सभी अपने को परम सौगत (बौद्ध पदवी) कहते थे। परन्तु धर्मपाल के खालीमपुर

ताम्रपत्र में विष्णु (नरनारायण) मंदिर के दान का उल्लेख है। धर्मपाल कट्टर बौद्ध था। तिब्बत के लामा तारानाथ ने उसे विक्रमाशिला महाविहार का संस्थापक कहा है। उसके पुत्र देवपाल ने नालंदा में पाँच ग्राम विहार के लिए दान दिया था जिसे जावा के राजा बालपुत्रदेव ने निर्मित करवाया था। शैलेन्द्रवंशी नरेश सुवर्णद्वीप पर शासन करता था। बालपुत्रदेव ने देवपाल से प्रार्थना कर नालंदा में एक विहार तैयार कराया जिसके भिक्षुओं के भोजन तथा चीवर निमित्त पाँच ग्राम दान में दिए गए। परन्तु तीसरे राजा नारायणपालदेव ने अपने शासनकाल में सौ शिव मंदिरों का निर्माण किया था। यानी परम सौगत पाल राजा ने हिन्दू देवता के मंदिर निर्माण तथा पूजा प्रकार के लिए दान दिया था।

पालवंशके तीनों दानपत्रों में वंश वृक्ष का उल्लेख मिलता है। खालीमपुर ताम्रपत्र लेख में धर्मपाल के पिता गोपाल का नामोल्लेख है जिसने बंगाल में अराजकता को नष्ट कर प्रजातंत्र शासन स्थापित किया था। धर्मपाल स्वयं बड़ा योद्धा था जिसने मध्य देश की प्रधान नगरी कन्नौज पर आक्रमण किया तथा इन्दायुध (दूसरा नाम इन्द्रराज) को परास्त कर चक्रायुद्ध को राजसिंहासन पर बिठाया था (भागलपुर दानपत्र) वही वर्णन निम्न श्लोक मे किया गया है—

भोजैरमत्स्यैः समद्रैः कुरुयदुयवन अवन्ति
गान्धार कीरैर भूपतिः
व्यालोल मौलि प्रणति परिणतः
साधु संगीर्यमानः
हृष्यत् पञ्चाल वृद्धोधृतकनकमय
स्वाभिषेकोद कुम्भो
दत्तः श्री कान्यकुब्जः स ललित चलित
भ्रूलता लक्ष्मयेन।

भोज (बरार, आंध्रप्रदेश) मत्स्य (मध्य भारत) कुरु (कुरुक्षेत्र, दिल्ली के समीप) यदु (पंजाब) कुरु (कांगरा) गन्धार (तक्षशिला का भूभाग) अवन्ति (मालवा) तथा यवन (ईस्लाम, सिन्ध) आदि नरेशों ने धर्मपाल का स्वागत किया और कान्यकुब्ज में सभी उपस्थित थे। तात्पर्य यह है कि खालीमपुर अभिलेख से धर्मपाल के राज्यविस्तार (गन्धार से बंगाल) का परिज्ञान हो जाता है। तारानाथ ने तो धर्मपाल को कामरूप, गौड़ तथा तिरहुत (उत्तरी विहार) का स्वामी कहा है। खालीमपुर ताम्रपत्र लेखमें धर्मपाल के कन्नौज-विजय की वार्ता उल्लिखित नहीं है। यह सूचना नारायणपाल के भागलपुर ताम्रपत्र से मिलती है। तीसरे श्लोक में इन्द्रराज का पराजय तथा महोदय (कान्यकुब्ज) पर पालनरेश के (धर्मपाल) अधिकार का वर्णन मिलता। यही विवरण देवपाल के मुंगेर ताम्रपत्र लेख (ए. इ. भा. १८ पृ. ३०४) से प्राप्त होता है जिसमें दिग्जयां प्रवृत्ते' शब्दों द्वारा धर्मपाल के दिग्विजय का ज्ञान हो जाता है। इस आक्रमण में धर्मपाल प्रतिहार नरेश नागभट्ट द्वारा पराजित हुआ था। ग्वालियर प्रशस्ति के ११ वें श्लोक में—मालव, किरात तुरुष्क, वत्स, तथा मत्स्य का उल्लेख है जिसे धर्मपाल अपने अधिकार में कर लिया था किन्तु प्रतिहार राजाओं ने भूभागों को पाल

लोगों से छीन लिया था। यानी पाल ख्याति तथा राज्य का ह्रास हो गया। खालीमपुर ताम्रपत्र प्रतिहार तथा पाल वंश के युद्धों का विशद् विवरण उपस्थित करता है।

देवपाल का नालंदा ताम्रपत्र अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर प्रकाश डालता है। नवीं सदी में भारत से सुवर्णद्वीप में आवागमन हो रहा था। भारतीय संस्कृति का वहाँ विस्तार हो गया था। इसी काल में बौद्धमत का अधिक प्रचार था। इसी कारण जावा के राजा बालपुत्रदेव ने नालंदा में एक महाविहार बनवाया। जैसा कहा गया है जावा नरेश के प्रार्थना पर देवपाल ने पाँच ग्राम दान में दिया था।

भागलपुर दानपत्र में पाल वंश के आदि पुरुष गोपाल से लेकर नारायण पाल पर्यन्त शासकों के नाम तथा उसके महत्वपूर्ण शासन का वर्णन है। नारायणपाल ने गर्व के साथ शिवमंदिरों के निर्माण की चर्चा की है—

"महाराजाधिराज श्री नारायणपालदेवेन स्वंय कारित सहस्रा यतनस्य (शिव का) तत्र: प्रतिष्ठित: भगवत: शिवभट्टारकस्य।"

इन ताम्रपत्रों (दानपत्रों) की विशेषता यह है कि उनमें पाल युग के पदाधिकारियों के नामोल्लेख मिलते हैं। खालीमपुर, नालंदा तथा भागलपुर दानपत्रों में एक समान राज्य के कर्मचारियों का उल्लेख है : दानपत्रों में इस बात पर बल दिया गया है कि राजा द्वारा दान भूमि का कर राज्यकोष में नहीं आयेगा। उसे दानग्राही ग्रहण करेगा। इस दान की सूचना समस्त राजकर्मचारियों को दे दी जाती थी। इसी कारण उनका नामोल्लेख है। संक्षेप में यह कहना युक्तिसंगत होगा कि पाल वंशी दानपत्रों से राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक बातों के विषय में हमारी जानकारी बढ़ जाती है।

बंगाल में पाल वंश की अवनति हो जाने पर सेन नरेशों ने शासन किया। इतिहास के विद्वानों में सेन वंश के विषय में वादविवाद रहा है। अधिकतर यह मानने लगे हैं कि सेन दक्षिण भारत के करनाट वंशी क्षत्रिय थे। दक्षिण से उत्तर में राष्ट्रकूट आक्रमण के सयय आकर बस गए तथा अवसर पाकर बंगाल के शासक हो गए। सेन वंश के अधिक प्रशस्तियों में उनके दक्षिण भारत से सम्बन्ध को चर्चा नहीं है। (दक्षिण भारत से उत्तरमें आना) परन्तु यह निर्विवाद है कि वे क्षत्रिय थे जिसे 'ब्रह्म क्षत्रिय' शब्दों से भी वर्णित किया गया है। बैरकपुर दानपत्र में विजयसेन के पूर्वज क्षत्रिय (राजपूत) कहे गए हैं—अवनितल भुजो राजपुत्रा वभूव:। पूर्वमध्य युग के देवपारा प्रशस्ति में सेन वंश का विवरण पाया जाता है। बिजयसेन के पूर्वज सामन्तसेन ब्रह्मवादो (ज्ञानी) कहा गया है। उसके उत्तराधिकारी हेमन्त-सेन के विषय में कुछ अधिक ज्ञात नहीं हैं। सामन्तसेन की ख्याति अधिक थी। रामचन्द्र की तरह लोग उसका यश गाते थे। बल्लालसेन के नइहटी दानपत्र (ए. इ. भा. १४ पृ. १५६) में उल्लेख किया गया है कि सामन्तनेन राढ़ (पश्चिमी बंगाल) का यशस्वी शासक था। सम्भ-वत, सामन्तसेन ने दक्षिण से सेना एकत्रित कर राढ़ के भूभाग में निवासस्थान बनाया था और कालान्तर में स्वतंत्रता की घोषणा कर राजा बन बैठा।

उसीका पौत्र (हेमन्तसेन का पुत्र) विजयसेन परम प्रतापी तथा शक्तिशाली राजा हुआ था। अपमे पराक्रम से उसने गौड़, (उत्तरी बंगाल) तिरहुत (उत्तरी बिहार) काम-

रूप (असम) तथा कलिङ्ग (उड़ीसा) पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार उत्तरी बिहार से असम सहित बंगाल पर्यन्त विजयसेन का साम्राज्य विस्तृत हो गया था। देवपारा प्रशस्ति में सभी प्रकार के विजयों का विवरण स्पष्ट रूप में मिलता है। इस विजेता ने पद्युम्नेश्वर के मंदिर का निर्माण किया था जिसकी प्रतिमा का वर्णन सुन्दर श्लोकों में किया गया है। देवता के आभूषण तथा छत्र का भी वर्णन है। उसी प्रसंग में विजयसेन की उपलब्धियों तथा आक्रमणों का उल्लेख कवि ने किया है।

उत्तरी भारत में प्रतिहार वंश के पतन के पश्चात् अनेक नवीन राजवंशों का उदय हुआ। इनमें चन्देल वंश भी था। चन्देल वंश की उत्पत्ति में विद्वानों में गहरा मतभेद है। स्मिथ ने अनेक प्रमाणों के आधार पर उन्हें अनार्य गोंडो की सन्तान माना है। अभिलेखों के अध्ययन से प्रकट होता है कि खजुराहों, कालिंजर, महोबा तथा अजयगढ़ (मध्य भारत-वर्तमान मध्यप्रदेश) चंदेलों के मूल प्रदेश थे। गुर्जर प्रतिहार लेखों से पता चलता है कि नागभट्ट द्वितीय का राज्य खजुराहो एवं कालिंजर तक विस्तृत था। अतएव चन्देल उनके अधीनस्थ सामन्त रहे होंगे। चन्देल वंश में अनेक शासक हुए। किन्तु वाक्पति ने विन्ध्या को जीत कर राज्य विस्तृत किया। धंग के पूर्वजों में हर्ष (९००-९२५ ई०) तथा यशोवर्मन (९२५-९५० ई०) का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वह 'नृपकुलतिलकः' कहा गया है। खजुराहो लेख से ज्ञात होता है कि इसने कलचुरि लोगों से गौड़ तथा मिथिला प्रदेश तथा राष्ट्रकूटों से कालिंजर छीन लिया था। इस लेख में अतिशयोक्ति तथा प्रशंसा का अंश अधिक है। ९५० ई० में धंग गद्दी पर आया। प्रशस्तिकार ने धंग का राज्य तमसा (भिलसा) से नर्वदा यमुना तक विस्तृत बतलाया है। यह मानना पड़ेगा कि धंग ने कन्नौज के प्रतिहार वंश के विरुद्ध सर्वप्रथम अपनी स्वतंत्रता घोषित की थी। इसने काशी का (वाराणसी में) भी एक ग्राम दान में दिया था। यद्यपि खजुराहो लेख में यशोवर्मन की कीर्ति कही है किन्तु वर्तमान समय में सभी विद्वान् इसे यशोवर्मन के पुत्र धंग को मानते हैं।

यहाँ बारहवीं सदी के दो प्रमुख लेखों का भी विवरण उपस्थित किया गया है जो उस वंश के इतिहास पर प्रकाश डालते हैं। प्रथम लेख कलचुरी वंश के शासक कर्ण देव का ताम्रपत्र पर अंकित है जो जबलपुर से प्राप्त हुआ है। लेख के पाँचवी पंक्ति में कलचुरी वंशका उल्लेख है तथा उसके पूर्वज गांगेयदेव चेदि के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण उल्लेख हैं। चेदि वंश का ख्याति प्राप्त राजा गांगेयदेव ने अपनी सौ पत्नियों के साथ प्रयाग की गंगा में प्रवेश कर मोक्ष प्राप्ति की।

प्राप्ते प्रयाग वट मूल विशेष बन्धौ,
सार्द्ध शतेन गृहिणीभिरमुक्त मुक्ति।

उसके वंशज कर्णदेव ने हूण राजकुमारी से अन्तर्जातीय विवाह किया था। इसी लेख में वर्णन आया है कि कुलचरि शासक ने पुण्य लाभ के लिए तुलापुरुष नामक महादान सम्पन्न किया था। कर्णदेव के वाराणसी 'ताम्रपत्र अभिलेख में विवरण आया है कि राजा वरुणा नामक नदी (वाराणसी के पूर्वी भाग में) में स्नान करके दान किया था। यह दानपत्र समस्त विशेषताओं से पूर्ण है। दान के प्रसंग में राज्य के पदाधिकारियों का नामोल्लेख है

तथा समस्त भूमिकर या अन्यकर (भाग भोगकर हिरण्य) के सम्बन्ध में आज्ञा प्रसारित की गई है कि राजकीय कर्मचारी 'कर' ग्रहण न करे। दान ग्राही को सारे भूभाग (दान-भूमि) से कर वसूल करने का अधिकार दे दिया गया था।

दूसरा लेख गहड़वाल वंशी नरेश विजय चन्द्र ने अंकित कराया था। यह दानपत्र कमौली (राजघाट के समीप, वाराणसी) से प्राप्त हुआ है। कमौली नामक स्थान से गहड़-वाल वंश के प्रायः सभी नरेश ने दान किया था जिनका उल्लेख अनेक ताम्रपत्रों में किया गया है। राजा के पूर्वज चन्द्रदेव काशी, तथा उत्तर कौशल। (अवध, उत्तर, प्रदेश) का स्वामी कहा गया है। वह अपने को 'कान्यकुब्जाधिपत्ति' भी कहता है। उसके पश्चात् मदनपाल तत्पश्चात् प्रतापी नरेश गोविन्दचन्द्र देव का नामोल्लेख हैं। मध्य युग में राजाओं की महान पदवी का वर्णन लेखों में किया गया है जैसे—परम भट्टारक परमेश्वर महाराजाधिराज। परन्तु यह निश्चित करना कठिन है कि सभी महान विजेता प्रतापी तथा शक्तिशाली नरेश थे। पदवियों के आधार पर कुछ कहना सम्भव नहीं है। यों तो लेख में गहड़वाल नरेश यवन (इस्लामी सेना) के शत्रु कहे गए हैं। यानी अरब वालों से युद्ध होता रहा जिस कारण बमीर (सुल्तान) की पत्नी विलाप करती वर्णित है—

भुवनदलन हेला हर्म्य हम्मीर नारी
नयन जलद धारा-शांत भूलोक तापः।

लेख में विजयचन्द्र के पिता गहड़वाल नरेश गोविन्द चन्द्रदेव भी महान पदवियों से विभूषित किये गए हैं—परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर अश्वपति गजपति नरपति राजत्रयाधिपति विविध विद्यावारिध विचार वाचस्पति—किन्तु इनके विजयों का स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता। इनके प्रधान मन्त्री लक्ष्मीधर ने पुस्तक में धार्मिक बातों का संग्रह किया था जो 'कृत कल्पतरु' के नाम से प्रसिद्ध है। अस्तु। गोविंदचन्द्र के पुत्र एवं उत्तराधिकारी (तत्पादानु-ध्यात) विजयचन्द्र ने भी उसी प्रकार लम्बी पदवी धारण की थी। इस ताम्रपत्र में विवरण मिलता है कि वाराणसी में गंगा स्नान कर भगवान् आदि केशव का पूजन कर तथा देव पितृ का तर्पण कर दान दिया था। लेख में वर्णन आता है कि अपने पुत्र जयचन्द्र के अभिषेक के अवसर विजयचन्द्र ने दान सम्पन्न किया था। इस दान पत्र में दानग्राही के कुल तथा योग्यता का वर्णन किया गया है। विशेष बात यह है कि गहड़वाल नरेश अनेक करों के अन्त-र्गत तुरुष्क-दण्ड (ईस्लामी आक्रमण के समय संग्रहित कर) का भी संग्रह करते थे। इस नाम-तुरुष्कदण्ड-के विषय में अन्य मत भी है कि यह ईस्लाम मतानुयायियों के ऊपर लगाया कर था। अस्तु। इस प्रकार गहड़वाल नरेशों के कमौली ताम्रपत्र लेख मध्य युग के इतिहास पर प्रचुर प्रकाश डालते हैं।

उदयपुर दान पत्र में मालवा के परमार राजा भोजदेव से सभी परिचित हैं। इसी ने युक्ति कल्पतरु नामक पुस्तक लिखी थी। बारहवीं सदी में यह वंश अपना प्रभुत्व स्थापित कर चुका था। उसकी महान पदवी परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर से प्रकट होता है कि परमार वंश शक्तिशाली हो गया था। उसी के पौत्र श्री जयसिंह ने भगवान शिव के पूजा निमित्त दान अंकित कराया था। उनका विचार था कि धर्म ही एक मात्र मानव का संसार

में मित्र है। अतः दान की श्रेष्ठता को स्वीकार किया और उसे मोक्ष का मार्ग बतलाया है पंक्ति है—

प्राणांस्तृणाग्र जल विन्दु समानराणां, धर्मः सखा परम हो परलोक याने ।

पीछे ११ वीं सदी में परमार भोज ने उत्तरी भारत पर आक्रमण किया और मुसलमानों के मन में भय पैदा करा दिया। भोज ने पंजाब प्रदेश के स्थित इस्लामी राज्य पर धावा किया था किन्तु उसकी मृत्यु (१०५५ ई०) पश्चात् मुसलमान सुल्तानों ने उत्तरी भारत पर आक्रमण कर कन्नौज तथा कालिंजर को नष्ट कर दिया। जयसिंह उसी का वंशज था जिसने यह प्रशास्ति अंकित कराई थी।

पूर्व-मध्यकालीन अभिलेख

गुर्जर प्रतिहार राजा बाउक की जोधपुर प्रशस्ति

ए. इ. भा. १८

भाषा—संस्कृत (प्राकृत से प्रभावित) प्राप्तिस्थान—मंडोर (जोधपुर) राजस्थान
लिपि—नागरी के सदृश तिथि—९वीं सदी

ओ नमो विष्णवे ।
यस्मिन् विशन्ति भूतानि यतस्सर्ग्ग स्थितिमते
स वः पायाद धृषिकेशोनिर्गुणस्सगुणश्च यः । १ ।
गुणाः पूर्व्व पुरुषानां कीर्त्यन्ते तेन पण्डितः
गुण कीर्त्तिरनश्यन्ती स्वर्ग्ग वास करी यतः । २ ।
अतः श्री बाउको धीमां स्व प्रतिहार वंशजाम्
प्रशस्तौ लेख या मास श्री यंशोविक्रमान्वितान् । ३ ।
स्व भ्राता रामभद्रस्य प्रतिहार्यं कृतं यतः ।
श्री प्रत्तिहार वंसोयमतश्चोन्नतिमान्पुयात् । ४ ।
विप्रः श्री हरिचन्द्राख्यः पत्नि भद्रा च क्षत्रिया
ताभ्यान्तु य सुता जाताः प्रतिहारांश्च तान्विदुः । ५ ।
बभूव रोहिल्लद्र्यंको वेद शास्त्रार्थ्य पारगः
द्विजः श्री हरिचन्द्राख्य प्रजापति समोगुरुः । ६ ।
तेन श्री हरिचन्द्रेण परिणिता द्विजात्मजा
द्वितिया क्षत्रिया भद्रा महाकुल गुणान्विता । ७ ।
प्रतिहारा द्विजा भूता ब्राह्मण्यां ये भवन्सुताः
राज्ञी भद्रा च यान्सुते ते भूताः मधुपायिनः । ८ ।
चत्वार श्चात्मजास्तस्यां जाता भूधरणक्षमाः
श्री मान् भोगभटः कक्को रजिलो दद्द एव च ॥ ९ ॥

माण्डव्यपुर दुर्गेस्मिन्नेभिर्निज भुजार्ज्जिते
प्राकारः कारितस्तुंगो विद्विशां भीति वर्द्धनः । १० ।
अमीशां रज्जिलाजातः श्रीमान् नरभटः सुतः
पेल्लापेल्लीति नामांभूद्दितीयां तस्य विक्रमैः । ११ ।
तस्मान् नरभटाजातः श्रीमान् नागभटः सुतः
राजधानिस्थिर यस्य महन् मेड़ेन्तकं पुरम् । १२ ।
राज्ञ्यां श्री जज्जिका देव्यास्ततो जातौ महागुणम्
द्वौ सुतौ तात भोजाख्यौ सान्दर्यो रिपु कर्द्दनौ । १३
तातेन तेन लोकस्य विद्युच्छंचल जीवितम्
बुध्वा राज्यं लघोर्भ्रातु श्री भोजस्य समर्प्पितम् । १४
स्वयंञ्च संस्थितऽ तातः शुद्धं धर्म्मं समाचरन्
माण्डव्यस्याश्रमे पुण्ये नदी निर्ज्झर शोभिते । १५
श्री यशोवर्द्धनस्तस्मात् पुत्रौ विख्यात् पौरुषः
भूतो निजभुज ख्यातिः समस्तोद्धृत कण्टकः । १६
तस्माच्च चन्डुकः श्रीमान् पुत्रो भूत् पृथुविक्रमः
तेजस्वी त्याग शीलश्च विद्विशां युधि दुर्द्धरः । १७
ततः श्री शिलुको जातः पुत्रो दुर्व्वारविक्रमः
येन सीमाकृता नित्या स्त्रवणि वल्ल देशयोः । १८
भट्टिकं देवराजं यो वेल्ला मण्डल पालकः
निपात्य तत्क्षणं भूमौ प्राप्तवानच्छत्रचिन्हकम् । १९
पुष्करिणो कारिता येन त्रेतो तीर्थे च पत्तनम्
सिद्धेश्वरो महादेवः कारितस्तुंग मंदिरः । २०
ततः श्री शीलुकाज्जातः श्रीमान् झोटो त्ररः सुतः
येन राज्य सुखं भुन्त्वा भागीरथ्यां कृता गतिः । २१
बभूव सत्ववान् तस्माद् भिल्लाविरयस्तपोमतिः :
यूना राज्यं कृतं येन पुतः पुत्राय दत्तवान् । २२
गंगा द्वारं ततो गत्वा वर्षाण्यष्टादश स्थितः
अन्ते चानशनं कृत्वा स्वर्ग लोकं समागत । २३
ततोपि श्री युतः कक्कः पुत्रो जातो महामतिः
यशो मुद्गागिरौ लब्धं ये न गौड़ै समं रणे । २४
छंदो व्याकरणं तर्को ज्योतिः शास्त्रं कलान्वितम्
सर्व्वं भाषा कवित्वं च विज्ञातं सुविलक्षणम् । २५
भट्टि वंश विशुधायां तदस्मात् कक्क भूपतेः
श्रीमत् पद्मिन्याः महाराज्ञाः जातः श्री भाउक सुत इति । २६
नन्दावलं प्रहत्वा रिपु बलमतुलं भूवकूप प्रयातं
दृष्ट्वा भग्नां स्वपक्षं द्विज नृप कुलजां सत्प्रतिहार भूपां

धिग् भूतैकेन तस्मिन् प्रकटित यशशो श्रीमता बाउकेन
स्फूर्जन् हृत्वा मयूरं तदनु नर मृगा घातिता हेतिनैव । २७
कस्यान्यस्यप्रभग्नः स सचिव मनुजं त्यज्यराणसु तंत्रः
केनैकेनातिभीते दशदिशि तु बले स्तम्भ्य चास्मान नेकं
धैर्यान्मुक्तवाहव दृष्ठं क्षिति गत चरणेनासि हस्तेन शत्रु
हित्वाभित्वा श्मशानं कृतमति भयदं बाउकान्येन तस्मिन् । २८
नव मण्डल नव निचये भग्ने हृत्वा मयूरमतिगहने
तदनु भृतासि तरंगा श्री मद् बाउक नृषिघेन । २९
सार्द्धार्द्धैः' प्रगलद्भिरक्तं सुषिरैर्व्वा हरुपादान्ग
कैरेन्त्रैश्चोपरि, लम्बि वितैविरचितम्
शषव गृहं फेत्कार सत्वा कुलम्
यच्छि बाउक मण्डलाग्र रचितं प्राग्शत्रु संघाकुले
तत्संस्मृत्य न कस्य संप्रति भवेत् त्रासोद्गमश्चेतसि । ३०
ननु समर धरायां बाउके नृत्यमाने
शव तनु सकलान्त्रेश्वेव विन्यस्त पादे
सममिव हि गतास्ते तिष्ठतिष्ठेति गीताद्
भय गत नृ कुरंगाश्चित्रमेत्तदासीत् । ३१
सं ८९४—चैत्र सुदि ५
उत्कीर्णा च हेमकार विदनु रवि सुनुना कृष्णेश्वरेण ।

गुर्जर प्रतिहार भोज की ग्वालियर प्रशस्ति

भाषा—संस्कृत — प्राप्तिस्थान—ग्वालियर म० प्र०
लिपि—नागरी — तिथि—९वी सदी

ए० इ० भा० १८ पृ० ९६

१ ओं नमो विष्णवे ॥
शेषाहि-तल्प-धवलाधार-भाग-भासि-वक्षः-स्थल-वोल्लसित-कौस्तुभकान्तिशोणं ।
श्यामं वपु (:) शशि-विरोचन-विम्ब (बिम्ब) चुम्वि (म्बि)
व्योम-प्रकाशम-व्रतान् नरक-द्विषो वः ॥ १ ॥
आत्म-आराम-फलद् उपार्ज्य विजरं देवेन दैत्य-द्विषा
ज्योतिर-ब्विजम्-अकृत्रिमे

२ गुरावन्त (f) क्षेत्रे यद्-उपां-पुरा ।
श्रेयः-कन्द-वपुस् = ततस् = समभवद् = भास्वान् = अतश = चा परे मन्व्–इक्ष्वाकु-ककुस्थ-मूल-पृथवः
क्ष्मापाल—कल्प-द्रुमाः ॥ २ ॥
तेषां वंशे सुजन्मा क्रम-निहित-पदे धाम्नि वज्रेषु-घोरं

रामः पौलस्त्य्-हिन्तूरं क्षत-विहति-समित-कर्म्म चक्रे पलाशैः ।
श्लाघ्य—

३ स—तस्यानुजो—सौमघव-मद-मुषो मेघनादस्य संख्ये
सौमित्रिस तीव्र-दण्डः प्रतिहरण-विधेरयः प्रतीहार आसीत् ॥ ३ ॥
तद वन्शे प्रतिहार-केतन-भृति त्रैलोक्य-रक्षास्पदे
देवो नागभटः पुरातन-मुनेर-मूर्त्तिर = ब्व (ब्ब) भूव्आद्भुतं ।
येनासौ सुकृत-प्रमाथि-व (ब लवन म्लेच्छ् आ -

४ धिप्-आक्षौहिणीः
क्षुन्दान स्फुरद-उग्र-हेति-रुचिरे (रै) र्-द्दोर्भिश्-चतुरभिर-ब्बभौ ॥ ४ ॥
भ्रातुस-तस्य आत्मजो-भूत-कलित-कुल-यशाः ख्यातकाकुस्थ-नामा
लोके गीतः प्रतीक-पृय-वचनतया कक्कुकः क्षमाभूव-ईशः
श्री मान्-अस्यानुजण्मा कुलिश-धर-धुराम = उद्वहन = देवराजो
यञ्जेच्छिन्-वोरु-पक्ष-क्षपित-ग-

५ ति कुलं भूभृतां सन्नियन्ता ॥ ५ ॥
तत् सुनुः प्राप्ये राज्यं निजम् उदयगिरि-स्पर्द्धिभास्वत्-प्रतापः
क्षमा-पालः प्रादुरासीन नत-सकल-जगद-वत्सलो वत्सराजः
यस्याक्षीर-आक्षिपन्त्य प्रणयि-जन-परिष्वङ्ग-कान्ता विरेजुः ॥ ६ ॥
ख्याताद् भण्डि)—

६ —कूलान-मद-वोत्कट करि-प्राकार-दुर्ल्लङ्घतो
यः साम्राज्यअधिज्य-कार्म्मुक-सखा संख्ये हठाद्-अग्रहीत
एकः क्षत्रिय-पुङ्गावेषु च यशो-गुर्व्वीन, धुरं प्रोद्वहन्न्
ऐ क्ष्वाक (ो): कुलम् उन्नतं सुचरितैश चक्रे स्व-नाम्-अङ्कितं ॥ ७ ॥
आद्यः पुमान्-पुनरपि स्फुट-कीर्त्तिर्-अस्माज्-
जाटस्-स स्व किल नागभटस्-तदाख्यः ॥
अत्र आ—

७ न्ध्र-सैन्धव-विदर्भ-कलिंग-भूपैः
कौमार-धामनि-पतंग-समैंर-पाति ॥ ८ ॥
त्र (त्र) य्य-आस्पदस्य सुकृतस्य समृद्धिम्-इच्छुर-
यः क्षत्र-धाम-विधि-वद्ध-वलि-प्रवन्धः ।
जित्वा पराश्रय-कृत-स्फुट-नीच-भावं
चक्रायुधं विनय-नम्र-वपुरव्यराजत ॥ ९ ॥
दुर्व्वार-वैरि-वर-वारण-वाजि-वार-

८ याण औघसंघटन-घोर-घन-अन्धकारं ।
निर्ज्जित्य वङ्गपतिम्-आभिरभूद् विवस्वान्
उद्यन्न-इव त्रिजगद्-स्क-विकासकौ-यः ॥ १० ॥

आनर्त्त-मालव-किरात-तुरुष्क-वत्स
मत्स्यादि-राज-गिरि-दुर्ग्ग-हठापहारैः ।
यस्य-आत्म-वैभवम्-अतीन्द्रियम्-आ-कुमारम्
आविर्ब्बभूव भुवि विश्वजनीन-वृत्तेः ॥११॥
तज्-जन्मा राम—

९ नामा प्रवर-हरि-बल-न्यस्त-भूभृत-प्रबन्धैर्
आवघ्नन्-वाहिनीनां-प्रसभम् अधिपतीन्-उद्धत-क्रूर-सत्वान् ।
पाप-आचार-अन्तराय-प्रथमन-रुचिरः संगत कीर्ति-दारैः
त्राता धर्म्मस्य तैस-समुचित चरितैः पूर्ब्बवन् निर्ब्बभासे ॥ १२ ॥
अनन्य-साधन-आधीन-प्रताप-आक्रात-दि

१० रामुखः ।
उपायैस् सम्पदां स्वामी यः स-व्रीडम्-उपास्यत ॥ १३ ॥
अर्थिभि-र्व्विनियुक्तानां सम्पदां जन्म केवलं ।
यस्ताभूतकृतिनः प्रीत्यैन्-आत्म-एच्छा-विनियोगतः ॥ १४ ॥
जगद्-वितृष्णुः स विशुद्ध-सत्वः
प्रजापतित्वं विनियोक्तुकामः ।
सुतं रहस्य-व्रत-सुप्रसन्नात् =
सूर्याद्-अवा-

११ -पन-मिहिराभिधानं ॥१५ ॥
उपरोध-एक-संरुद्ध-विन्ध्य-वृद्धेरगस्त्यतः
आक्रम्य भूभृतां भोक्ता यः प्रभुर्-भोज इत्य-अमात् ॥ १६ ॥
यशस्वी शान्त-आत्मा जगद् अहित-विच्छेद-निपुणः
परित्यक्तो लक्ष्म्या न च मद कलङ्केन कलितः ।
बभूव प्रेम-आर्द्रो गुणिषु सुनृत-

१२ गिराम्-
असौ रामो वाग्रे स्व-कृति-गणनायाम् इह विधेः ॥१७॥
यस्य आभूत् कुल भूमि-भृत्-प्रमथन-
व्यस्त-आन्य-सैन्य-आम्बुधेर-
व्यूढां च स्फुटित-आग्नि-लाज-निवहान्-हुत्वा प्रताप-आनले ।
गुप्ता वृद्ध-गुरी आनम्य गतिभिः शान्तैस्-सुध-श्रोद्भासिभिर-
द-धर्म्म, आपत्य-यशः प्रभूतिर्-अपरा लक्ष्मीः पुनर्भू—

१३ र्-भया ॥ १८ ॥
प्रीतै पीलनया तपोधन-कुलैः स्नेहाद्-गुरूणां गगौर-
भक्त्या भृत्य-जनेन नीति-निपुणैर-बृन्दैर्-अरीणां भुवः ।

विद्वेन्-आपि यदीयम्-आयुरमितं कर्तुं स्व-जिव-एषिणा
तन-निम्ना विदधे विघातरि यथा सम्पत्-पराद्ध याश्रय ॥ १९ ॥
अवितथम्-इदं यावद्-विश्वं श्रुतेर—

१४ -अनुशासनाद्-
भवति फल-भाक कर्त्तान्-तैश: क्षितिन्द्र-शतेष्व्-अपि ।
अचरित-कालेः कीर्त्ते भर्त्तु स-सतां सुकृतैर्-अभूद-
विधुरित-धियां सम्पद-वृद्धिर-यद्-अस्य तद् अद्भुतं ॥ २० ॥
यस्य वैरि-वृहद्-बङ्ग्लान्-दहतः कोप-वह्निा ।
प्रतापाद् अर्ण्णसां राशित-पाटुर-श्वैतृष्णाम् आवभौ ॥ २१ ॥
कुमारैव विद्यानां

१५ वृन्देन्-अद्भूत-कर्मणा ।
यः शशास-आसुरान्-घोरान्-स्त्रीर्णैन्-आस्त्र ऐक-वृत्तिना ॥ २२ ॥
यस्य आक्ष-पटले राज्ञः प्रभुत्वाद्-विश्व-सम्पदः ।
लिलेख मुखम्-आलोक्य प्रातिलेख्य-करो विधिः ॥ २३ ॥
उद्दाम-तेजः-प्रसर-प्रसूता शिख-एव कीर्तिर्-द्युमणिं विजित्य ।
जाया जगद्भर्तु—

१६ र्-द्वयाय यस्य चित्रम् त्व-इदम् यज-जलधीन्-स्ततार ॥ २४ ॥
राज्ञा तेन स्व-देवीनां यशः—पुण्य-आभिवृद्धये ।
अन्तः पुर-पुरं नाम्ना व्यधायि नरक-द्विषः ॥ २५ ॥
यावन्-नभः सुर-सरित-प (प्र) सर-वीत्तरीयं
यावत् सु-दुश्चर-तपः प्रभवः प्रभावः ।
सत्पत्-च यावद्-उपरिस्थ (स्ठ) म्-अवत्य अशेषं
तावत् पु-

१७ —नातु जगतीम्-इयम् आर्य कीतिण् ॥ २६ ॥
पातुर्-भ्विश्वस्य सम्यक-परम-मुनि-मट-श्रेदसस सन्निधानाद-
अन्तर-वृत्तिर-भ्विवेक : स्थितैव पुरतो भोजदेवस्य रागः ।
विद्वद्-बृन्द-आर्जितानां फलम्-इव तपसां भट्टघन्नेक सूनुर-
भ्वालादित्यः प्रशस्तेः कविर्-इह जगता साकम्-आ-कल्प वृत्तेः ॥ २७ ॥

पाल नरेश धर्मपालदेव का ताम्रपत्र-लेख

ए० इ० भा० ४

भाषा—संस्कृत प्राप्तिस्थान—खालीमपुर (मालदा जि०) बंगाल
लिपि—नागरी सदृश तिथि—८वीं सदी

ओं स्वस्ति । सर्व्वज्ञताम् श्रियम्-इव स्थिरम-आस्थितस्य वज्रासनस्य बहु-मार-कुल-औपलम्भाः । देव्या महा-करुणया परिपालितानि रक्षन्तु वो दश बलानि दिशो जयन्ति ॥ १ ॥

श्रिय इव सुभाशायाः सम्भवो वारिराशिश = शशधर-इवभासो विश्वमाह्लादयन्त्याः । प्रकृतिर्-अवनियानाम् सन्ततेर्-उत्तमाया अजनि-दयित-विष्णुः सर्व्वविद्यावदातः ॥ २ ॥

आसीद-आ सागराद = उर्व्वीम् गुर्व्वीभिः कृती मज्यन ।

खंडित-आरातिः श्लाघः श्री-व -ततः ॥ ३ ॥

मात्स्य-न्यायम्-अपोहितुम् प्रकृतिभिर-लक्ष्म्याः करन्-ग्राहितः

श्री गोपाल इति क्षितीश-शिरसाम् चूडामणिस्-तत्-सुताः ।

यस्य आनुक्रियते सनातन-यशो-राशिर-दिशाम्-आशयेतिम्ना.... यदि पौमास-रजनी ज्योत्स्न-आतिभार-श्रिया ॥ ४ ॥

शीतांशोर-इव रोहिणी हुत- भुजः स्वाह् एव तेजो निधेः शर्वाण्-ईव शिवस्य गुह्यक-पतेर्-भद्रेव तस्य विनोद-भूर्-भुर........लक्ष्मीर्-इव क्षमा पतेः ॥ ५ ॥

ताभ्याम् श्री धर्म्मपालः समजनि सुजनस्तू आवदानः स्वामी भूमि-पतीनाम्-अखिल-वसुमती मंडलं शासद्-एकः । चत्वारस्-तीर मज्जत्-करि-गण-चरण न्यस्त मुद्राः समुद्रा यात्राम् यस्य क्षमन्ते न भुवन परिखा विश्वग्-आशा जिगीषोः ॥ ६ ॥

यस्मिन्-उद्दाम-लीला—वलित वल-भरे दिग-जमाय प्रवृत्ते यान्त्या-इश्वम्भरायाँ चलित-गिरि तिरश्चीनताम् तद्-वशेन ।

मार-आभुग्न्........ज्जन्मणि विधुर शिरश-चक्र सहायकार्थम् शेष-ओदस्त दोष्णा त्वरिततरम्-अधो-धस्-तम् एव आनुयातम् ॥ ७ ॥

यत्त-प्रस्थाने प्रचलित-वल-आस्फालनाद-उल्लर्लाघर-धूली पू ैपिहित सकल व्योमभिर भूतधात्रयाः । सम्प्राप्तायाः परम-तनुतां चक्रवालं फणानाम् मग्न् ओन्मीलन्मणि फणिपतेर-लाघवाद-उल्ललास ॥ ८ ॥

विरुद्ध-विषय-क्षोभाद्-यस्य-कोप्-अग्निर और्ववत् । अनिर्वृति प्रजज्वाल चतुर-आम्भो-धिवारितः ॥ ९ ॥

ये-भूवन-पृथु-राम- राघव-नल-प्राया धरित्रीभुजस-तान-एकत्र दिदृक्षुण-एव निचितान सर्वान् समम् वेधसा । ध्वस्त आशेष-नरेन्द्र-मान-महिमा श्री धर्म्मपालः कलौ । लोल श्रीकरिणी-निबन्धन महास्तम्भः समुत्तम्भितः ॥ १० ॥

यासाम् नासीर-धूली धवल-दश दिशाम् द्राग्-अपश्यन्न इयंत्ताम् धत्ते मान-धात्रि-सैन्य-व्यतिकर-चकितो ध्यान तन्द्रीम् महेन्द्रः ।

तासाम्-अप्य-आहवेच्छा-पुलकित वपुषाम् वाहिनीनाम् विधातुं साहाय्यं यस्य वाह्वोर निखिल-रिपुकुल ध्वंसिनोर-न्-आवकाशः ॥ ११ ॥

भोजैर-मत्स्यैः समद्रैः कुरु-यदु-यवन-अवन्ति-गान्धार-कीरैर-भूपैर-व्यालोल मौली-प्रणति-परिणतः साधु संगीर्यमाणः ।

हृष्यत्-पञ्चाल-वृद्ध-नेधृत-कनकमय-स्वाभिषेकोदकुम्भो, दत्तः श्री कान्य-कुब्ज-स-ललित-चलित-भ्रुलता लक्ष्म येन ॥ १२ ॥

गोपैः सीम्नि वनेचरैर-वनभुवि ग्राम-ओपकन्ठे जनैः क्रीडद्भिः प्रतिचत्वरम् शिशु गणैः प्रत्यापण मानपैः । लीला वेदमनि पञ्जरोदर-शुकैर-उद्गीतम्-आत्म-स्तवम् यस्य्-आकर्ण्यत सत्रपा-विवलित आनम्रं सद-ऐव-आनम् ॥ १३ ॥

स खलु भागीरथी पथ-प्रवर्त्तमान-नानाविधनौवाटक समपादित-सेतुबन्धु-निहित शैल-शिखर-श्रेणि-विभ्रमात् निरतिशय घन-घनाघन-घटा श्यामायमान-वासर्लक्ष्मी समारब्ध-सन्तत-जलदसमय सन्देहात् उदीचीन्-अनेक-नरपति प्रभृतीकृत्-आप्रमेय-हयवाहिनी-खरखुर-औत्खात-धूली धूसरित दिगन्तरालात् परमेश्वर-सेवा समायात-समस्त जम्बूद्वीप-भूपाल-अनन्त-पादात-भर-नमद-अवनेः पाटलिपुत्र-समावासित-श्रीमज्-जयस्कन्धावारात् परमसौगतो महाराजाधिराज-श्री गोपालदेव पादानुध्यातः परमेश्वरः परमभट्टारको महाराजाधिराज श्रीमान् धर्म्मपालदेवः कुशली ।।

श्री पुण्ड्रवर्द्धनभुक्त्य-अन्तः पाति व्याघ्रतटी मण्डल-सम्बद्ध महन्ताप्रकाश विशये क्रोञ्च-श्वभ्र-नाम-ग्रामो अस्य च सीमा पश्चिमेन शंगिनिका । उत्तरेण कादम्बरी देवकुलिका खर्जूर वृक्षश्-च । पूर्व्वोत्तरेण राजपुत्र-देवट-कृत-आलिः । वीजपूरकं-गत्वा प्रविष्टा । पूर्व्वेण विटक-आलिः खातक यज्ञानिका गत्वा प्रविष्टा । जम्बू-यानिकाम् आक्रम्य जम्बू-यानक(म्)

गता । ततो निसृत्य पुण्याराम बिल्व-आर्धश्रोतिका(म्) । ततो विनिसृत्य नलचर्म्म (ट-ओ)त्तरानतम् गता नलचर्म्मटात् दक्षिणेन नामुण्डिकापि (हे)-(सद्रूम्मिः ?) कायाः । खण्ड-मुण्डमुखम् खण्डमुखा वेदसविल्विका वेदविल्विकातो रोहितवाटिः पिण्डारविटिजोटिका-सीमा उक्त आरजोऽस्य दक्षिणान्तः ग्रामबिल्वस्य च दक्षिणान्तः । देविका-सीमा विटि । धर्म्मया-जोटिका । एवम् माढ़ाशाम्मली नाम ग्रामः । अस्य च औतरेण गंगिनिका सीमा ततः पूर्व्वेण आर्धश्रोतिकया आम्रयानकोलर्घयानिकण-गतः ततौपि दक्षिणेन कालिकाश्वभ्रः । अतौ-पि निसृत्य श्रीफल भिपुकम् यावत् = पश्चिमेन ततौ-पि विल्वं-गोर्धश्रोतिकया गंगिनिकाम् प्रविष्टा । पालितके सीमा दक्षिणेन काणा द्वीपिका । पूर्व्वेण कोण्ठिया स्रोतः । उत्तरेण गंगिनिका । पश्चि-मेण जेनन्दायिका एतद-ग्राम संपारोण परकर्म्मकृद्वीपः । स्थालीक्कटविषय सम्बद्ध आम्रपण्डिका मण्डल्-आन्तः पाति गोपिप्पली ग्रामस्य सीमाः । पूर्व्वेण उद्रग्राम-मण्डल पश्चिम सीमा । दक्षि-णेन जोलकः पश्चिमेन वेसानिक-आख्या खाटिका । उत्तरेण ओद्र ग्रामयण्डल-सीमा कवस्थितो गो-मार्गः । यषु चतुर्ष्षु ग्रामेषु समुपगतान सर्व्वान्-एव राज-राजनक-राजपुत्र-राजामात्य-सेना-पति-विषयपति-भोगपति षष्ठाधिकृत-दण्डशक्ति-दाण्डपाशिक चौरोद्धरणिक दोस्साधनिक-दूत-गमागमिक आभित्वरमाण-हस्त्यश्वगोमहिष्यजा-नौकाध्यक्ष-बलाध्यक्ष-तरिक शौल्कि-गौल्मिक तदायुक्तक-विनियुक्त आदि राजपादोपजीविनो न्यांश च आकर्त्तितान् चाटभट जातीयान् यथा-काल आध्यासिनो जेष्ठकायस्थ महामहत्तर-महत्तरवाशग्रामि आदि-विषयव्यवहारिणः स-करणात् प्रतिवासिनः क्षेत्रकरांश्-च ब्राह्मण-मानना पूर्व्वकं यथार्हम् मानयति बोधयति समाज्ञापयति च । मतम्-अस्तु भवताम् । महासामन्ताधिपति-श्री-नारायणवर्म्मणा दूतक-युवराज-श्री त्रिभुवनपाल-मुखेन वयम्-एवम् विज्ञापिताः यथा अस्माभिर-स्मातापित्रोर-आत्मनश्-च पुण्य-आभिवृद्धये शुभ-स्थल्यान् देव कुलण कारितत-तत्र प्रतिष्ठापित भगवन-नन्न नारायण भट्टारकाय ततप्रति-पालक-लाटद्विज देवार्च्चक-आदि-पादमूल-समेताय पूज-ओपस्थान-आदि-कर्म्मणे चतुरो ग्रामान् अत्रत्य हट्टिका तल पाटक समेताः स्वसीमा-पर्यन्ता सोद्देशाः सदशापचाराः अकिञ्चित्प्र-ग्राह्याः परिहृत सर्व्वपीडा भूमिच्छिद्र न्यायेन चन्द्र-आर्क क्षिति-समकालं तथैव प्रतिष्ठापिताः । यतो भवद्भिस्-सर्व्वैर-इव भूमेर-दानफल-गौरवाद् अपहरणे च महानरकपति-आदि-भयाद्-दानम्-इदम्'अनुमोदय

परिपालनीयाम् । प्रतिवासिभिः क्षेत्रकरैश्-च् आज्ञाश्रवण-विधेयैर्-भूत्वा समुचितकर-पिण्डक्-आदि सर्व्वं प्रत्याय्-ओपनयः कार्य इति ॥ बहुभिरव्वसुधा दत्ता राजभिस्—सगर-आदिभिः ॥ यस्य यस्य यदा भूमिस्-तस्य तदा फलम् ॥ षष्टिम् वर्ष-सहस्राणि स्वर्गे मोदति भूमिदः । आक्षेप्ता च-अनुमन्ता च तान्येव नरके वसेत ॥

स्वदत्ताम् पर-दत्ताम् वा यो हरेत वसुन्धराम् स- विष्ठायां कृमिर् = भूत्वा पितृभिस्-सह पच्यते ॥ इति कमलदल आम्बुबिन्दु-लोलां श्रियम्, अनुचिन्त्य मनुष्य-जीवत-ञ् च । सकलम्-इदम्-उदाहृतञ्च बुध्वा न हि पुरुषैः पर-कीर्तयोविलोप्याः ॥ तडित-तुल्या लक्ष्मीस्तनुर्-अपि च दीपानल-समा भवो दुःख-ऐकान्तः पर-कृतिम-अकीर्त्तिः क्षपयताम् । यशान्स्य आचन्द्रार्क नियतम्-अजताम् अत्र च नृपाः करिष्यन्ते बुध्वा यद्-अभिरुचितम् किम् प्रबचनैः ॥ अभिवर्द्धमान-विजराज्ये सम्वत् ३२ मार्ग-दिनानि ॥ १२ ॥

श्रीभोगटस्य-पौत्रेण श्रीमत्सुमटा-सूनुना। श्रीमतां तातटेन् इदम् उत्कीर्ण्णं गुण-शालिना॥।

देवपाल का नालंदा ताम्रपत्र-लेख

ए. इ. भा १७

भाषा—संस्कृत — प्राप्तिस्थान—नालंदा, बिहार

लिपि—नागरी — तिथि—९वी सदी

१ ओं स्वस्ति । सिद्धार्थस्य परार्थसुस्थित मतेस्सन्मार्गक (म्य)-स्यत-
स्सिद्धिस्सिद्धिमनुत्तरां भगवतस्तस्य-प्रज्ञासु क्रिया-त् (।*)

३ यस्त्रैधातुकसत्वसिद्धिपदवीरत्युग्रवीर्योदयाज्जित्वा

४ निर्वृतिमाससाद सुगतस्सर्वार्थभूमीस्वरः ॥ १ ॥ सौभाग्यन्दधतुलं

५ श्रियस्स-पत्न्या
गोपालःपतिरभवद्वन्धरायाः (।*)

६ ष्टान्ते सति कृतिनां सुणि यस्मिन् श्रद्धेयाः पृथुसगरादयोदृप्यभूवन् ॥ २ ॥
विजित्य येना जलधेर्व्वसुन्धराम्बिमोचिता

७ मोघपरिग्रहो इति ।
सवाष्पमुद्वाष्पविलोचनान्पुनर्व्वनेषु व (ब) न्धून्ददृशुर्म्मतंगजाः ॥ ३ ॥

८ यानिचितं रजोभिः ॥
पादप्रचारक्षममन्तरिक्षम्बिहंगमानां सुचिरस्व (म्ब) भूव ॥ ४ ॥* शास्त्रार्थं भाजा चल-
तोनुशास्य वर्ण्णान्प्रतिष्ठापय-

९ ता स्वधर्म्मे (।*)
श्रीधर्मपालेन सुतेन सोभूत्स्वर्गस्थितानामनृणः पितृणाम् ॥ ५ ॥ अचलैरिव जंगमैर्यदीयै-
र्विचलद्भिर्द्विरदैः कदर्थ्यमाना ।

१० निरुपप्लवमम्ब (म्ब) रंप्रपेदे शरणं रेणुनिभेन भूतधात्री ॥ ६ ॥ केदारे विधिनोपयुक्त-
पयसां गंगासमेतेम्बु (म्बु) धौ । गोकर्ण्णादिषु चाप्यनुष्ठि ॥-

११ तवतात्तीर्थेषु धर्म्माः क्रिया (।★)
भृत्यानां सुखमेव यस्य सकलानुद्धृत्य दुष्टानिमाँल्लोकान्साधयतो (ऽ★) नुषंगजनिता सिद्धिः परत्रा-

१२ प्यभूत् ॥ ७ ॥
तैस्त्वर्द्दिग्विजयावसानसमये संप्रेषितानां परैः । सत्कारैरपनीय खेदमखिलं स्वां स्वां गतानां भुवम् (।★) कृत्यं भावयतां

१३ यदीयमुचितं प्रीत्या नृपाणामभूत् । सोत्कण्ठं हृदयं दिवश्च्युतवतां जाति स्मराणामिव ॥ ८ ॥ श्रीपरब (ब) तस्य दुहितुः क्षितिपतिना रा

१४ ष्ट्रकूटतिलकस्य
रण्णदेव्या पाणिर्जगृहे गृहमेधिना तेन ॥ ९ ॥ धृततनुरियं लक्ष्मीः साक्षात्क्षितिर्नु शरीरिणी । किमवनिपतेः कीर्तिम्-

१५ र्त्ताथवा गृहदेवता (।★)
इति विदधती शुच्याचा (रा) वितर्कवतीः प्रजाः प्रकृतिगुरुभिर्या शुद्धान्तङ्गुणैरकरोदधः ॥ १० ॥ श्लाघ्या प्र(प) तिव्रतासौ मु-

१६ क्तारत्नं समुद्रशक्तिरिव ।
श्रीदेवपालदेवम्प्रसन्न वक्त्रं सतमसूत ॥ ११ ॥ निर्म्मलोमनसि वाचि संयतः कायकर्म्मनि (णि) च यः स्थितः शुचौ (।★)

१७ राज्यमापनिरुपप्लवम्पितुर्वो (र्बो) धिसत्व इव सौगतं पदम् ॥ १२ ॥
भ्राम्यद्भि विजयक्रमेण । करिभिस्तामेव विन्ध्याटवीमुद्दामप्लवमानवा (बा) ष्पपय-

१८ (सो) दृष्टाः पुनर्व (ब) न्धवः (।)
कम्बो(म्बो) जेषु च यस्य वाजिषु(व) भिध्वस्तान्यराजौजसो हेषामिश्रित-हारि-हेषितत्वाः कान्ताश्चिरप्रीणिताः ॥ १३ ॥ यः पूर्वं व (ब) लि-

१९ ना कृतः कृतयुगे येनागमद्भूर्गव-
स्त्रेतायां प्रहृतः प्रियप्रणयिना कर्ण्णेन यो द्वापरे । विच्छिन्नः कलिना शकद्विषि गते कालेन लोकान्तरम्

२०
येन त्यागपथस्पृ एव हि पुनर्विस्पष्टमुन्मीलितः ॥ ४ ॥ आ गङ्गागम-महितात्स पत्नशन्या-मासेतु (तोः) प्रथितदशास्यकेतुकीर्त्तेः (।) उर्वीमा वरुण

२१ निकेतनाच्च सिन्धो-
रा लक्ष्मीकुलभवनाच्च यो वु(बु) भोज ॥ १५ ॥
स खलु भागोरथीपथप्रवर्त्तमाननानाविधनौवाटकसंपादित-सेतुष(ब) न्धनि-हित(शै)-

२२ लशिखरश्रेणिविभ्रमात् निरतिशयघनघनाघनघट्टा(टा) श्यामायमानवा-सरलक्ष्मीसमारब्ध (ब्ध) संततजलदसमयसन्देहात् उदीचीनानेक-

२३ नरपतिप्राभृतीकृताप्रमेयहयवाहिती-
खरखुरोत्खातधूलीधूसरितदिगन्तरालात् परमेश्वरसेवासमायाता-शेषजंबू (बू) द्वी-

२४ पभूपाल-
पादातभरनमदवनेः श्रीमुद्गिरिसमावासिश्रीमञ्जयस्कन्धावारात् परमसौगत-परमेश्वरपर-
मभ (ट्टा) रकम-

२५ हाराजाधिराजश्रीधर्मपालदेवपादानुध्यातः
परमसौगतः परमेश्वरः परमभटा(ट्टा)रको महाराजाधिराजः श्रीमान्देवपालदेवः-

२० कुशली । श्रीनगरभूक्तौ राजगृहविषयान्तःपाति अजपुरनयप्रतिव (ब) द्धस्वसम्ब (म्ब)
द्धाविच्छिन्नतलोपेत । नन्दिवनाक । मणि-

२७ वाटक । पिलिपिराकानयप्रतिव (ब) नाटिका । अचलानयप्रतिव (ब)द्ध ह(स्ति)
ग्राम । गयाविषयान्तः पातिकुमुदसू त्रवोथीप्रतिव (ब)द्ध पालाम-

२८ कग्रामेषु । समुपगताम्(न्) सर्व्वानिव राजराणक । राजपुत्र । राजामात्य । महाकार्त्ता-
कृतिक । महादण्डनायक । महाप्रतीहार । महा-

२९ सामन्त ।
महादौःसाधसाधनिक । महाकुमारा(मा) त्य (।★) प्रमातृ । शरभङ्ग (।★) राजस्थानी
(योपरिक) विषयपति (।★) दाशापराधिक । चौरोद्धर-

३० णिक । दाण्डि-
क (।★) दण्डपाशिक(।★) शौल्किक (।★) (गौ) ल्मिक । क्षेत्रपाल (।★) कोटपाल ।
खण्डरक्ष (।★) तदायुक्तक । विनियुक्तक । हस्त्यश्वोष्ट्र-नौव(ब) लव्यापृ-

३१ तक (।★)
किशोरवडवागोमहिष्यधिकृत । दूतप्रै(ष) णिक ।
गमागमिक । अभित्वरमाणक । तरिक । तरपतिक ।
ओद्र(ड्र)-मालव-खश-कुलिक । कर्णा

३२ ट(हू)ण ।
चाट्भ(ट★) सेवकादीनन्यांश्चाकीर्त्तिमान् स्वपादपद्मो-पजीविनः प्रतिवासिनश्च ब्राम्ह
(ब्राह्म) णेत्तरान् महत्तमकुटुम्वि(म्बि) पुरोगमेद्रान्ध्र-

३३ क । चण्डाल-
पर्यन्तान् समाज्ञापयति विदितमस्तु भवताम् यथोपरि-लिखितस्वसम्व (म्ब) द्धाविच्छिन्नत-
लोपेत नन्दिवनाकग्राम । मणिवाट-

३४ कग्राम ।
नटिकाग्राम । हस्तिग्राम । पालामकग्रामाः स्वसीमातृणयूतिगोचरपर्यन्ताः सतलाः सोद्देशाः
साम्रमधूकाः सजलस्थलः

३५ सोपरिकराः सदशापराधाः सचौरोद्धरणाः परिहृतसर्व्व (पीड़ाः) अचाट-
भटप्रवेशा अकिंचित्प्रग्रा (ह्या) राजकुलीय-

३६ समस्तप्रत्यायसमेता भूमिच्छि-
द्रन्यायेनाचन्द्रार्क्कक्षितिसमकालम् पूर्व्वदत्तभुक्तभुज्यमानदेव-त्र (ब) ह्मदेयवर्जिताः मया

३७ मातापित्रोरात्मन (श्च) पुण्ययशोभिवृद्धये ॥
सुव (र्ण्ण) द्वीपाधिपम (हा) राजश्रीवा (बा) लपुत्रदेवेन दूतकमुखे व्य म्विज्ञापिताः
यथा मया

३८ श्रीनालन्दायाम्बिहारः कारितस्तत्र
भगवतो (बु (ु) द्धभट्टारकस्य प्रज्ञापारमितादिसकलधर्म्मने त्रोस्थानस्यायार्थे तांत्र (त्रि)-

३९ कवो (बो) धिसत्वगणस्याष्टमहापुरुषपुद्गलस्य चातुर्द्दिशायभिक्षुसंङ्घस्य ब (ब)
लिचरूसत्रचीवरिपिण्डपातशयनासनग्लानप्रत्ययभे-

४० षज्याद्यर्थं धर्मरत्नस्य लेखनाद्यर्थं विहारस्य च खण्डस्फुटितसमाधानार्थं शासनीकृत्य
प्रतिपादित (।★) यतो भवद्भिः सर्व्वैरेव

४१ भूमेर्द्दानपाल (न★) गौरवादपहरणे च महानरकपातादिभयाद्दानमिदमभ्यनुमोप पालनीयं
प्रतिवासिभिरण्याज्ञाश्र-

४२ वणविधेयै-
र्भूत्वा यथाकालं समुचितभागभोगकरहिरण्यादिप्रत्यायोपनयः कार्य इति ॥
सम्वत् ३९ क (का) र्तिक दिने २१

४३ तथाच धर्मानुशासनश्लोकाः
ब (ब) हुभिर्वसुधा दत्ता राजभिः

४४ सगरादिभिः (।★)
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥ १६ ॥

४५ स्वदत्ताम्परदत्तान्वा (यो) ह (रे) त वसुन्धरां ।
स विष्ठयां कृमिर्भूत्वा पितृभिः

४६ सह पच्यते ॥ १७ ॥
षष्ठिम्वर्षसह (स्रा) णि स्वर्गे मोदति भूमिदः । आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव

४७ नरके वसेत् ॥ १८ ॥
अन्यदत्तां द्विजातिभ्यो यत्नाद्रक्ष युधिष्ठिर । महीं महीभृत्तां श्रेष्ठ दा-

४८ नाच्छ्रेयोनु पालनम् ॥ १९ ॥
अस्मत्कुलक्रममुदारमुदा (ह) रद्भिरन्यैश्च दानमिदमभ्यनुमोदनीयं ।
लक्ष्म्यास्तडित्सलिलवुद्वु (बुद्बु)द (चं)-

४९ चलायां
दनां फलं परयशःपरिपालनं च ॥ २० ॥ इति कमलदलाम्बु (म्बु) वि (बि)
न्दुलोलां श्रियमनुचिन्त्यमनुष्यजीवितं च (।★) सकलमि-

५० दमुदाहृतं च वु (बु) (द्ध्वा) नहि पुरुषैः
परकीर्त्तयः विलोप्याः॥२१॥ दक्षिणभुज इव राज्ञः परव (ब) लदने सहायनिरपेक्षः। (।★)

५१ दूत्यं श्रीव (ब) लवर्म्मा विधधे धर्माधिकारेऽस्मिन् ॥ २२ ॥
अस्मिन् धर्मारम्भे दूत्यं श्रीदेवपालदेवस्य । विदधे श्रीव (ब) लवर्म्मा व्याघ्रतटीमण्डला-
धिपतिः ॥ २३ ॥

५२ आसीदशेनरपालविलोलमौलिमालामणिद्युतिविधो (बो) धितपाद पद्मः । शैलेन्द्रवंश-
तिलको यवभूमिपालः श्रीवीरवैरिमथना-
नुगताभिधानः ॥ २४ ॥
हर्म्यस्थलेषु कुमुदेषु मृणालिनीषु शङ्खेन्दुकुन्दतुहिनेषु पदन्दधाना । निःशेषदिङ्मुखनिरन्तर-
लब्ध (ब्ध) गीतिः

५४ मूर्त्तेव यस्य भुवनानि जगाम कीर्त्तिः ॥ २४ ॥
भ्रूभङ्गोभवति नृपास्य यस्य कोपाग्नि (भि) न्नाः सह हृदयर्यैद्विषां श्रियोपि । वक्राणमि-

५५ ह हि परोपघातदक्षा जायन्ते जगति भृषङ्गतिप्रकाराः ॥ २४ ॥ तस्याभवन्नय-
पराक्रमशीलशाली राजेन्द्रमौलिशतदुर्ल्लोलताङ्घ्र-

५६ यग्मः ।
सूनूर्युधिष्ठिरपराशरभीमसेनकर्ण्णार्ज्जुनार्ज्जितयशाः समराग्रवीरः ॥ २७ ॥
उद्भूतमम्व (म्ब) रतलाव (द्यु) धि सञ्चरन्त्या यत्सेनयावनिरजःप-

५७ टसं पदोत्थम् ।
कर्ण्णानिलेन शनकम्वितीराणगण्डस्थलीमदजलैः शमयाम्व (म्ब)-भूव ॥ २८ ॥
अकृष्णपक्षमेवेदम-भूद्भुवनमण्डलं ।

५८ कुलन्दैत्याधिपस्येव यद्यशोभिरनारतम् ॥ २९ पौलोमीव सुराधिपस्य विदिता सङ्कल्पयो-
र्नेखि (प्रीतिः) शैलसुतेव मनन्मथरि-

५९ पोर्ल्लक्ष्मीर्मुरेखि ।
राज्ञः सोमकुलान्वयस्य महतः श्रीधर्मसेतोः सुता तस्याभूदवनीघुजोऽग्र महिषी तारेव तारा-
ह्वया ॥ ३० ॥ माया-

६० यामिव कामदेवविजयी शुद्धोदनस्यात्मजः स्कन्दो नन्दितदेववृन्दहृदयः शम्भोरुमायामिव ।
तस्यान्तस्यं नरेन्द्रवृन्दविनमत्पादारवि-

६१ न्दासनः
सर्व्वोर्व्वीपतिगर्व्वणचणः श्री वा (बा) लपुत्रोऽभवत् ॥३१॥ नालन्दागुण-
वृन्दलुब्ध (ब्ध) मनसा भक्तया च शौद्धोदनेर्वु (बुं) ध्वा शैलसरित्तरंगतरलां

६२ लक्ष्मीमिमां शोभनाम् ।
यस्तेनोन्नतसौधधामधवलः संघार्थमित्रश्रिया नानासद्गुणभिक्षुसंघवसतिस्त-स्याम्बिहारः
कृतः ॥ ३२ ॥ भक्त्या

६८ तत्र समस्तशत्रुवनितावैधव्यदीक्षागुरुं कृत्वा शासन माहितादरतया यम्प्रार्थ्य दूतैरसौ ।
ग्रामान् पञ्च विपञ्चिवसोपरियथोद्देशा-

६४ निमानात्मनः
पित्रो (ल्लो) कहितोदयाय च ददौ श्रीदेवपालं नृपं ॥ ३३ ॥
यावत्सिन्धोः प्रव (ब)न्धः पृथुलहरजटाशोभिताङ्गा च गंगा गुर्व्वी

६५ धत्ते फणीन्द्र प्रतिदिनमचले हेलया यावदुर्व्वी
यावच्चास्तोदयाद्री रवितुरगखुरोद्धृष्टचूडामणीस्तस्ता-वत्सत्कीर्तिरेषा प्रभव-

६६ तु जगताम्सत्क्रिया रोपयंती ॥ ३८ ॥

नारायणपालदेव का भागलपुर दानपत्र

इ० ए० भा० १५

भाषा-संस्कृत
लिपी-देव नागरी सदृश

प्राप्ति स्थान—भागलपुर, बिहार
तिथि—९वीं सदी

ओं स्वस्ति

१ मैत्री कारुण्यरत्न प्रमुदितहृदयः
प्रेयसीं सन्दधानः

२ सम्यक् सम्बोधिविद्या-सरिदम-
-लजल-क्षालिताज्ञानपङ्कः।

३ जित्वा यः काम
कारि-प्रभव मभिभवं शाश्वतीं प्राप शान्तिं

४ स श्रीमान् लोकनाथो जय,
ति दशवलोऽन्यश्च गोपालदेवः ॥ (१)
लक्ष्मी-जन्मनिकेतनं समकरो वोढु क्षमः क्ष्मा- रं

५ पक्षच्छेदभमादु
पस्थितवता मेकाश्रयो भूभृतां।

६ मर्य्यादा-परिपालनैकनिरतः शौर्य्यालयोऽस्मादभूद्दुग्धाम्भोधिविलास

७ हासि-महिमा श्रीधर्म्मपालो नृपः ॥ (२)

७ जित्वेन्द्रराज-प्रभृति-नराती-
नुपार्जिता यन महोदय-श्रीः।
दत्ता पुनः

८ सा बलिनार्थयित्रे
चक्रायुधायानति-वामनाय ॥ (३)
रामस्येव गृहीत-सत्यतपसस्तस्यानुरुपो गुणैः
सौमित्रे रुदपा-

९ दि तुल्य-महिमा वाक्पालनामानुजः।
यः श्रीमान्नय-विक्रमैक-वसति भ्रातुं स्थितः शासने
शून्याः शत्रु-पताकिनी-

१० भिरकरो देकातपया दिशः ।। (४)
तस्मादुपेन्द्रचरितै र्ज्जगतीं पुनानः
पुत्रो बभुव विजयी जयपालनामा ।
धर्म्मंद्विं

११ षां शमयिता युधि देवपाल
यः पूर्व्वजे भुवनराज्य सुखान्यनैषीत् ।। (५)
यस्मिन् भ्रातुर्न्निदेशाद्बलवति परितः प्रस्थिते

१२ जेतु माशाः
सीदन्नाम्नैव दूरान्निजपुर मजटादुत्कलानामधीशः ।
आसाञ्चक्रे चिराय प्रणयि-परिवृतो बिभ्रदु

१३ च्चेन मूर्द्धा
राजा प्रागज्योतिषाणामुपशमित-समित् संकथां यस्य चाज्ञां ।। (६)
श्रीमान् विग्रहपालस्तत्सूनुरजातशत्रुरि–
व जातः ।

१४ शत्रुवनिता-प्रसाधन-विलोपि-विमलासि,-जलधारः ।। (७)
रिपवो येन गुर्व्वीणां विपदा मास्पदीक्वताः ।
पुरुषायु

१५ ष-दीर्घाणां सुहृदः सम्पदामपि ।। (८)
लज्जेति तस्य जलधे रिव जह्नु-कन्या
पत्नी बभूव कृत-हैहय-वंशभूषा ।
यस्याः शुची

१६ नि चरितानी पितुश्च वंशे
पत्युश्च पावन-विधिः परमो बभूव ।। (९)
दिक्पालैः क्षितिपालनाय दधतं देहे विभक्ताः
श्रियः

१७ श्रीनारायणपालदेवमसृजत्तस्मां स पुण्योत्तरं
यः श्रोणीपतिभिः शिरोमणिरुचा श्लिष्टाङ्घ्रि-पीठोपलं
न्यायोपा-

१८ त्तमलञ्चकार चरितैः स्वैरेव धर्म्मासनं ।। (१०)
चेतः पुराण-लेख्यानि चतुर्व्वर्ग-निधीनि च
आरिप्सन्ते चलस्त्यानि चरितानि महीभृतः ।। (११)

१९ स्वीक्वत-सुजन-मनोभिः सत्यापित-सातिवाहनः सूक्तैः ।
त्यागेन यो व्यधत्त श्रद्धेया मङ्गराज कथां ।। (१२)
भयादरातिभिर्यस्य रण-

२० मूर्द्धनि विस्फुरन् ।
अखिरिन्दीवर-श्यामो ददृशे पीत-लोहितः ॥ (१३)
यः प्रज्ञया च धनुषा च जगद्विनीय
नित्यं न्यधीविशद-

२१ नाकुलमात्म-धर्म्मे ।
यस्यार्थिनो सविध मेत्य भृशं कृतार्था
नैवार्थितां प्रति पुनर्व्विदधुर्म्मनीषां ॥ (१४)
श्रीपतिरक्कृष्ण-कर्म्मा विद्या-

२२ धरनायको महाभोगी ।
अनल-सदृशोपि धाम्ना य श्चितन्नलसम श्चरितैः ॥ (१५)
व्याप्ते यस्य त्रिजगति शरच्चन्द्र-गौरे यशो
भि-

२३ र्म्मन्ये शोभान्न खलु बिभरामास रुद्राट्टहासः ।
सिंहस्मीणा मपि शिरसिजेष्वर्प्पिताः केतकीनां ।
पत्रापीड़ाः सुचिर म

२४ भवत् भृङ्ग-शब्दानुमेयाः ॥ (१६)
तपो ममास्तु राज्यं ते द्वाभ्यामुक्तामिदं द्वयोः ।
यस्मिन् विग्रहपालेन सगरेण भगीरथे ॥ (१७)
स खलु भा-

२५ गीरथीपथ-प्रवर्त्तमान-नानाविध-नौवाट-सम्पादित-
सेतुबन्ध निहित-शैलशिखरश्रेणी-विभ्रमात्, निरतिशय-धन-धनाघट-घटा

२६ श्यामायमान-वासरलक्ष्मी-समारब्ध-सन्तत-जलदसमय-सन्देहात्
उदीचीनानेकनरपति-प्राभृत्तीक्त्ता-प्रमेय-हयवाहिनी-खर-

२७ खुरोत्खात-धूलीधूसरित-दिगन्तरालात्, परमेश्वर-सेवा-समायाता-
शेष-जम्बूद्वीप-भूपालानन्त-पादात-भरनमदवनेः । श्रीमु-

२८ द्गगिरि-समावासित-श्रीमज्जयस्कन्धावारात्, परमसौगतो महाराजाधिराज-श्रीविग्रहपालदेव
पादानुध्यातः परमेश्वरः पर-

२९ मभट्टारको महाराजाधिराजः श्रीमन्नारायणपालदेवः कुशली ।
तीरभुक्तौ । कक्षवैषयिक-स्वसम्बद्धाविच्छिन्न-तलो-

३० पेत-मकुतिका-ग्रामे । समुपगताशेष-राजपुरुषान् । राज-

३१ राजनक । राजपुत्र । राजामात्य । महासान्धिविग्रहिक ।
महाक्षपटलिक । म-

३२ हासामन्त । महासेनापति । महाप्रतीहार । महाकार्त्ताक्वतिक ।
महा

३३ दौःसाधसाधनिक । महादण्डनायक । महाकुमारामात्य ।
राजस्थानीयोपरिक । दाशापराधिक । चौरोद्धरणिक ।

३४ दाण्डिक । दाण्डपाशिक । शौल्किक । गौल्मिक । क्षेत्रप ।
प्रान्तपाल । कोट्टपाल । खण्डरक्ष । तदायुक्तक । विनियुक्तक ।
हस्त्य-

३५ श्वोष्ट्र-नौबल-व्यापृतक । किशोर । वड़वा । गोमहिषाजाविकाध्यक्ष ।
दूतप्रेषणिक । गमागमिक । अभित्व(र)माण । विषयपति
ग्रामपति । तरिक । गौड । मालव । खश । हूण । कुलिक ।

३६ कर्णाट । ला(ट) । चाट । भट । सेवकादीन् । अन्यांश्चकीर्त्तितान् ।

३७ राजपादोपजीविनः प्रतिवासिनो ब्राह्मणोत्तरान् । महत्तमोत्तम पुरोगमेदा-न्ध(ध्र) चण्डाल-
पर्य्यन्तान् । यथार्हं मानयति ।

३८ बोधयति । समादिशति च । मतमस्तु भवतां । कैलाशपति ।
महाराजाधिराज-श्रीनारायणपालदेवेन स्वयं-कारित-सहस्रा-

३९ यतनस्य । तत्र प्रतिष्ठापितस्य । भगवतः शिवभट्टारकस्य ।
पाशुपत आचार्य्य परिषद श्च । यथार्हं पूजा-बलि-चरु-सत्र-नव-क

४० र्म्माद्यर्थं । शयनासन-ग्लान-प्रत्यय-भैषज्य-परिष्कारार्थं ।
अन्येषामपि स्वाभिमतानां । स्वपरिकल्पित विभागेन । अनवद्य-भो

४१ गार्थञ्च । यथोपरिलिखित-मकुतिकाग्रामः । स्वसीमा-तृणयूति-
गोचर-पर्य्यन्तः । सतलः । सोद्देशः । साम्रमधूकः । सजल

४२ स्थलः । सगर्त्तोषरः । सोपरिकरः । सदशापचारः । स-
चौरोद्धरणः । परिहृत-सर्व्वपीड़ः । अचाटभट-प्रवेशः ।
अकिञ्चि-

४३ त्-प्रग्राह्यः । समस्त-भाग-भोग-कर-हिरण्यादि-प्रत्याय-समेतः ।
भमिच्छिद्रन्यायेनाचन्द्रार्क्क-क्षिति-समकालं यावत् माता-पित्रो

४४ रात्मनश्च पुण्ययशोऽभिवृद्धये । भगवन्तं शिवभट्टारक-
मुद्दिश्य शासनीकृत्य प्रदत्तः । ततो भवद्भिः सर्व्वैरेवानु-

४५ मन्तव्यं माविभिरपि भूपतिभिर्भूमेर्दानफल-गौरवदप-
हरणे च महानरकपात-भयाद्दानमिदमनुमोद्य पालनीयं प्र-

४६ तिवासिभिः क्षेत्रकरैश्चाज्ञा-श्रवण-विधेयीभूय यथाकालं
समुचित-भाग-भोग-कर-हिरण्यादि-सर्व्वप्रतपायोपनयः का-

४७ र्य्यं इति । सम्वत् १७ वैशाखदिने ९ (।।) तथा च धर्म्मा
नुशङ्सिनः श्लोकाः ।
बहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभि सागरादिभिः ।()

४८ यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलं ॥
षष्टि वर्षसहस्त्राणि स्वर्गे मोदति भूमिदः ।
आक्षेप्ता चानुमन्ता च तान्येव न-

४९ रके वसेत् ॥
स्वदत्ताम्परदत्ताम्वा यो हरेत वसुन्धरां ।
स विष्ठायां क्रमिर्भूत्वा पितृभिः सह पच्यते ॥
सर्व्वानेतान् भाविनः

५० पार्थिवेन्द्रान्
भूयोभूयः प्राथमतेपष रामः ।
सामान्योऽयन्धर्म्म-सेतु र्नृपाणां
काले काले पालनीयः क्रमेण ।
इति क-

५१ मल दलाम्बु-विन्दुलोलां
श्रिवय मनुचिन्त्य मनुष्य-जीविनश्च ।
सकलमिदमुदाहृतश्च वुद्ध्वा
नहि पुरुषैः परकीर्त्तयो विलो

प्याः ॥

५२ वेदान्तैरप्यसुगमतमं वेदिता ब्रह्मत(ता)र्थ
यः सर्व्वासु श्रुतिषु परमः सार्द्ध्मङ्गैरधीती ।
यो यज्ञानां समुदित महाद-

५३ क्षिणानां प्रणेता
भट्टः श्रीमानिह स गुरवो दूतकः पुण्यकीर्त्तिः ॥
श्रीमता मंवदासेन शू(शु) भदासस्य श (सू) नुना ।
इदं सा (शा)

५४ शा(स)न मुत्कीर्णं सत्-समतट जन्मना ॥

सेन वंशी नरेश विजयसेन की देवपारा प्रशस्ति

ए. इ. भा. १

भाषा—संस्कृत **प्राप्तिस्थान—देवपारा (राजशाही) बंगाल**
लिपि—बंगाली शैली **तिथि—१२ वीं सदीं**

१ ओं (॥*) ओं नमः शिवाय ॥
वक्षोंशुकाहरणसाध्वसक्लृप्तमौलिमाल्यच्छटाहतरतालयदीपभासः ।
देव्यास्त्रपामुकुलितं मुखामिन्दुभाभिर्व्वीक्ष्याननानि हसितानि जयन्ति शम्भोः ॥
—(१*)

लक्ष्मी वल्लभ-

२ शैलजादयितयोरद्वैतलीलागृहं
प्रद्युम्नेश्वरशब्द (ब्द) लाञ्छनमधिष्ठानं नमस्कुर्म्महे ।
यत्रालिङ्गनभङ्गकातरत(या) स्थित्वान्तरे कान्तयो-
र्देवीभ्यां कथमप्यभिन्नतनुताशिल्पेऽन्तरायः कृतः ॥ (२*)
यस्सिंहासनमीश्वर—

३ गङ्गाशीकरमञ्जरीपरिकरैर्यच्चामरप्रक्रिया ।
श्वेतोत्फुल्लफणाञ्चलः शिवशिरः सन्दानदामोरगश्छत्रं यस्य जयत्यसावचरमो
राजा सुधादीधितिः ॥ ३ ॥
वंशे तस्यामरस्त्रीवि-

४ ततरतकलासाक्षिणो दाक्षिणात्यक्षोणीन्द्रैर्व्वीरसेनप्रभृतिभिरमित-
कीर्त्तिमद्भिर्ब्ब(र्ब्ब) भूवे ।
यच्चारित्रानुचिन्तापरिचयशुचयः सूक्तिमाध्वीकधाराः
पाराशर्येण विश्वश्रवणपरिसरप्रीणनाय प्रणीताः ॥ ४ ॥

५ तस्मिन् सेनान्वाये प्रतिसुभटशतोत्सादनब्र (ब) ह्मवादी
सब्र(ब) ह्मक्षत्रियाणामजनि कुलशिरोदाम सामन्तसेनः ।
उद्गीयन्ते यदीयाः स्खलदुदधिजलोल्लोलशीतेषु सेतोः
कच्छान्तेष्वप्सरोभिर्द्दशरथतनयस्पर्द्धया युद्धगाथा ॥ ५ ॥

६ यस्मिन् सङ्गरचत्वरे पटुरटत्तूर्योपहूतद्विप-
द्वर्गे येन कृपाणकालभुजगः खेलायितः पाणिना ।
द्वैधीभूतविपक्षकुञ्जरघटाविश्लिष्टकुम्भस्थली-
मुक्तास्थूलवराटिकापरिकरैः र्व्वर्पा-

७ संतदद्याप्यभूत् ॥ (६)
गृहाद्गृहमुपागतं व्रजति पत्तनं पत्तना-
द्वनाद्वनमनुद्रुतं भ्रमति पादपं पादपात् ।
गिरेर्गिरिसुन्दरीसरकदृष्टलग्नं यशः ॥ ७ ॥
दुर्वृत्तानामयमरि-

८ कुलाकीर्ण्णकर्ण्णाटलक्ष्मी-
लुण्टाकानां कदनमतनोत्तादृगेकाङ्गवीरः ।
यस्मादद्याप्यविहतवसामान्समेदः सुभिक्षां
हृष्यत्पौरस्त्यजति नदिशं दक्षिणां प्रे (त) भर्त्ता ॥ ८ ॥
उद्गन्धीन्याज्यधूमैर्म्मृगशिशुरसिताखिन्न-

९ वैखानसस्त्री-
स्तन्यक्षोण्णि कीरप्रकरपरिचितब्र (ब्र) ह्मपारायणानि ।
येनासेव्यन्त शेषे वयसि भवभयास्कन्दिभिर्म्मस्करीन्द्रैः

पूर्णोत्सङ्गानि गङ्गापुलिनपरिसरारण्यपुण्याश्रमाणि ।। ९ ।।
अचरमपरमात्माज्ञानभी-

१० ष्मादमुष्मान्निजभुजमदमत्तारातिमाराङ्गवीरः ।
अभवदनयसान्नोद्भिन्ननिर्विण्णचतत्तद्गुणानिवहमहिम्नां वेश्म हेमन्तसेन (१०)
मूर्द्धन्यर्द्धेन्दुचूडामणिचरणरजः सत्यवाक्कण्ठभित्तौ

११ शास्त्रं रिक्ता: पदभुवि भुजयोः क्रूरमौर्व्वीकिणाङ्कः ।
नेपथ्यं यस्य जन्मे सततमियदिदं रजपुष्पाणि हारा-
स्ताडङ्कंनूपुरस्त्रवकनकवलमपस्य भृत्याङ्गनानाम् ।। ११ ।।
यद्दोर्व्वल्लिविलासलब्ध (ब्ध) गतिभिः शल्यैर्व्विदीर्णेरसां

१२ वीराणां रण (तो) र्थवैभववशाद्दिव्यं वपुर्व्वि (बि) भ्रताम् ।
संसक्तामरकामिनीस्तनतटीकाश्मीरपत्राङ्कितं
वक्षः प्रागिव मुग्धसिद्धमिथुनैः सातङ्कमालोकितम् ।। १२ ।।
प्रत्यर्थिव्ययकेलिकर्म्मणि पुरः स्मेरं मुखं वि (बि) भ्रतोरे-

१३ तस्यैततदसेश्च कौशलमभूद्दाने द्वयोरभुतम् ।
शत्रोः कोपिदधेऽवसादमपरः सख्युः प्रसादं व्यधा-
देको हारमुपाजहार सुहृदामन्यः प्रहारं द्विषाम् ।। १३ ।।
महाराज्ञी यस्य स्वपरनिखिलान्तः पुरवधू-

१४ शिरोरत्नश्रेणीकिरणसरणिस्मेरचरणा ।
निधिः कान्ते (:) साध्वीव्रतविततनित्योज्ज्वलयशा
यशोदेवी नाम त्रिभुवनमनोज्ञाकृतिरभूत ।। (१४)
ततस्त्रिजगदीश्वरात्समजनिष्ट देव्यास्ततोप्यरातिव

१५ (व) लशातनोज्ज्वलकुमारकेलिक्रमः ।
चतुर्ज्जलधिमेखलावलयसीमविश्वम्भरा-
विशिष्टजयसान्वयो विजयसेन पृथ्वीपतिः ।। (१५)
गणयतु गणशः को भूपतींस्ताननेन प्रतिदिनरणभाजा ये जिता वा हता वा ।
इह जगति विषे-

१६ हे स्वस्य वंशस्य पूर्व्वः पुरुष इति सुधांशो केवलं राज्य शब्दः । ६
संख्यातीतकपोन्द्रसैन्यविभुना तस्यारिजेतुस्तुलां
किं रामेण वदाम पाण्डवचमूनाथेन पार्थेनवा ।
हेतो खड्गलतावतंसितभुजामात्रस्य येनार्ज्जितं

१७ ससाम्भोधितटीपिनद्धवसुधाचक्रैकराज्यं फलम् ।। (७)
स्वेकेन गुणेन यैः परणितं तेषां विवेकादृते कश्चिद्धन्त्यपरश्च कृत्स्नं जगत् ।
देवोयं तु गुणः कुतो व (ब) हुतिर्थर्द्धीमान् जघान द्विषो वृत्तस्यानपुषच्चचकार च

१८ [illegible]च्छेदेन दिव्याः प्रजाः ।। १८ ।।
[illegible]भुवः प्रतिक्षितिभृतामुर्व्वीमुरीकुर्व्वता

वीरासृग्लिप्तलाञ्छितोऽसिरमुना प्रागेव पत्रीकृतः ।
नेत्थं चेत् कथमन्यथा वसुमती भोगे विवादोन्मुखी
तत्राकृष्टकृपाणधारिणि गता भ-

१९ ङ्ग द्विषां सन्ततिः ।१९।
त्वं नान्यवीरविजयीति गिरः कवीनां श्रुत्वाऽन्यथामननरूढनिगूढरोषः ।
गौडेन्द्रमद्रवदपाकृत कामरूपभूपं कलिङ्गमपियस्तरसा जिगाय ॥ २०॥
शूरंमन्य इवासि नान्य किमिह त्वं राघव श्लाघसे
२० स्पर्द्धा वर्द्धन मुञ्च वीर विरतोनाद्यापि दर्प्पस्तव ।
इत्यन्योन्यमहर्न्निशप्रथिमिः कोलाहलैः क्ष्माभुजां
यत्कारागृहयामिकैर्न्नियमितो निद्रापनोदक्लमः ।।२१।।
पाश्चात्यचक्रजयकेलिषु यस्य यावद्गङ्गाप्रवाहमनुधावति

२१ नौविताने ।
भर्गस्य मौलिसरिदम्भसि भस्मपङ्कलग्नोज्झितेव तरिरिन्दुकला चकास्ति ।।२२।।
मुक्ताः कर्प्पासबीजैर्म्मरकतशकलं शाकपत्त्रैरलाबू (ब)
-पुष्पैः रूप्याणि रत्नं परिणतिभिदुरैः कुक्षिभिर्द्दाडिमानाम् ।
कुष्माण्डीवल्लरीणां त्रि—

२२ कसितकुसुमैः काञ्चमं नागरीभिः
शिक्ष्यन्ते जत्प्रसादाद्व (द्व) हुविभवजुषां योषितः श्रोत्रियाणाम् ॥ २३ ॥
अश्रान्तविश्राणितयज्ञयूपस्तम्भावलीं सागवलम्ब (म्ब) मानः ।
यस्यानुभावाद्भुवि सञ्चचार कालक्रमादेकपदोपि धर्म्मः ।।२४।।

२३ मेरोराहतवरिसङ्कुलतटावाहूय यज्वामरान्
व्यत्यासं पुरवासिनामकृत यः स्वर्गस्यमर्त्यस्य च ।
उत्तुङ्गैः सुरसद्मभिश्च विततैस्तल्लैश्च शेषीकृतं
चक्रे येन परस्परस्य च समं द्यावापृथिव्योर्व्वपुः ।।२५।।
दिक्शाखामूलकाण्डं गगनतलम-

२४ हाम्भोधिमध्यान्तरीयं
भानोः प्राक्प्रत्यगद्रिस्थितिमिलदुदयास्तस्य मध्याह्नशैलम् ।
आलम्व (म्ब) स्तम्भमेकं त्रिभुवनभवनस्यकशेषंगिरीणां
स प्रद्युम्नेश्वरस्य व्यधित वसुमतीवासवः सौधमुच्चैः ॥ (२६)
प्रासादेन तवामुनैव हरितामध्वा

२५ निरुद्धो मुधा
भानोद्यापि कृतोस्ति दक्षिणदिशः कोणान्तवासी मुनिः ।
अन्यामुञ्छपथीमृकच्छतु दिशं विन्ध्योप्यसौ वर्द्धतां
यावच्छक्ति तथापि तथापि नास्य पदवी सौधस्य गाहिष्यते ॥२७ ॥
स्रष्टा यदि स्त्रक्ष्यति भूमिचक्रे सुमेरुमृत्पिण्डविवर्त्तनाभिः ।

२६ तदा घटः स्यादुपमानस्मिन् सुवर्णकुम्भस्य तदर्प्पितस्य ॥ २४ ॥
वि (ब) लेशविलासिनी मुकुटकोटिरत्नाङ्कुर-
स्फुरत्किरणमञ्जरीच्छुरितवारिपूरं पुरः ।
चखान पुरवैरिणः स जलमग्न-

२७ पौराङ्गना-
स्तनैणमदसौरमोच्चलितचञ्चरीकं सरः ॥ २९ ॥
उच्चित्राणि दिगम्ब (म्ब) रस्य वसनान्यर्द्धाङ्गनास्वामिनी
रत्नालंकृतिभिव्विशेषितवपुः शोभाः शतं सुभ्रुवः ।
पौराढ्याश्च पुरीः श्मशानवसतेर्भिक्षाभु

२८ जोस्याक्षया
लक्ष्मीं स व्यतनीद्दरिद्रभरणे सुक्ष्मो हि सेनान्वयः ॥ ३० ॥
चित्रक्षौमेभचर्म्मा हृदयविनिहितस्थलहारोरगेन्द्रः
श्रीखण्डक्षोदभस्मा करमिलितमहानीलरत्नाक्षमालः ।
वेषस्तेनास्य तेने गरूडमणितागोन-

२९ स कान्तमुक्ता-
नेपथ्यव्रस्थिरिच्छासमुचितरचनः कल्पकापालिकस्य ॥ ३१ ॥
वा (बा) होः केलिभिरद्वितीयकनकच्छत्रं धरित्रीतलं
कुर्व्वाणेन न पर्यशेषि किमपि स्वनैव तेनेहितन् ।
किन्तस्मै दिशतु प्रसन्नवरदोप्यर्द्धेन्दुमौलिः

३० परं
स्वं सायुज्यमसावपश्चिमदशाशेषे पुनर्द्दास्यति ॥ ३२ ॥
प्रस्तोतुमस्य परितश्चरितं क्षमः स्यात् प्राचेतसो यदि पराशरनन्दनो वा ।
तत्कीर्त्तिपूरसुरसिन्धुविगाहनेन वाचः पवित्रयितुमत्र तु नः प्रयत्नः ॥ ३३ ॥
यावद्वास्तोस्पति-

३१ पुरधुनी भूर्भुवः स्वः पुनीते
यावच्चान्द्री कलयति कलोत्तं सतां भूतभर्त्तुः ।
यावच्चेतो गमयति सतां श्वेतिमानं त्रिवेदी
तावत्तासां रचयतु सखी तत्तदेवास्य कीर्त्तिः ॥ ३४ ॥
निर्ण्णिक्तसेनकुलभूपतिमौक्तिकानामग्रन्थिलग्र-

३२ थनपक्ष्मलसूत्रवल्लिः
एषा कवेः पदपदार्थविचारशुद्धवु (बु) द्धरुमापतिधरस्य कृतिः प्रशस्तिः ॥३५॥
ध (र्म्म) प्रणप्ता मदनदासनप्ता वृ (बृ) हस्पतेः सूनुरिमां प्रशस्तिं (।*)
चखान वारेन्द्रकशिल्पिगोष्ठीचूड़ामणि राणकशूलपाणिः ॥ (३६)

चंदेलवंशी राजा यशोवर्मन का खजुराहो लेख

ए. इ. भा. १ पृ. १२२

भाषा–संस्कृत प्राप्तिस्थान खजुराहो–म. प्र.

लिपि–कुटिल (देवनागरी) तिथि—वि. स. १०११ = ९५४ ई०

१ ओं नमो भगवते वासुदेवाय ।
दधानानेकां यः किरि पुरुष सिंहोभयजुषं
तदाकारोच्छेद्यां तनुमसुर मुख्यानजवरात् ।
जघान श्रीनुग्रान्जगति कपिलादीनवतुवः
सेवेकुण्ठः कण्ठध्वनि चकित निःशेष भुवनः ।।—(१)
पायासु र्व्वलिवञ्चनव्यतिकरे देवस्यविक्रान्तयः
सद्यो विस्मित देवदानवनुतास्तिस्त्रस्त्रिलेलोकीं

२ हरेः ।
यासु ब्रह्मवितीर्णभर्घसलिलंपादार विन्दयच्युतं
धत्तेद्यापि जगत्त्रैयक जनकः पुण्यसमूर्द्धा हरः ।।
देवः पातुस वः पयः कणभृति व्योम्नीव ताराचित (२)
दैत्यासिव्रणलांच्छने दिविसदः संत्यज्य सर्वानपि ।
तस्मिन्नउजन शैल भित्ति विपुले वक्ष (:) स्थले यस्य ताः
येतुर्मन्दरसङ्ग संभ्रम वलल्लक्ष्मीं कटाक्षच्छटाः ।। (३)
गंभीरो—

३ म्बुधयः शशांक रुचिमान्भास्व
त्पतापो ज्ज्वलो
धीरो धात्रिमहान्महीं धरवराः कल्पद्रुमास्त्यागवान् ।
आकल्पादविकल्प निर्म्मल गुण ग्रामाभिरामः प्रभुः
सत्यं व्रूतयदि क्वचित्पुनरभूत्तुल्योयशो वर्मणः ।। (५)
प्रधानादव्यक्तादभवदविकारादिह महान-
हंव्यरस्तस्मादजनि जनितोपग्रहगणः ।
ततस्तन्मात्राणि प्रसव

४ मलभन्त क्रमवशादथैतेभ्यो भूतान्यनुभुवनेमम्य। प्रवृते ।। (५)
इहाद्यो विधानां कविरखिल कल्प व्युपरतौ-
परसाक्षीदेवस्त्रिभुवन विनिर्माण निपुणः ।
स विश्वेषामीशः (:) स्मितकमल लि उजलक वसति-
र्महिम्नास्वेनैव प्रथममथ वेधाः प्रभुरमूत् ।। (६)
तस्माद्विश्वसृजः पुराग पुरुषादाम्नाय धाम्नः कवे र्ये भूवम्मु-

५ नयः पवित्र चरिताः पूर्व्वे मरीच्यादयः ।
तत्रात्रिः सुषुवे निरन्तर तपस्तीव्र प्रभावं सुतं-
चन्मात्रेयमकृत्रिमोज्वलतर ज्ञानप्रदीपंमुनि ।। (७)

अस्तिस्वस्ति विधायिनः स जगतां निःशेष विद्याविद-
स्तस्यात्मोपनता खिल श्रुति निधे र्व्वन्शः प्रशंसास्पदं ।
यत्राभून्नपराक्रमेण लघुता नो चाटुकारोद्धति
नाल्पाप्यंतरसा-

६ रतानच फल प्राप्तिः (:) क्षयायात्मनः ॥ (८)
त्रस्तत्राण प्र (व) गुण मनसां सर्व्व संपत्पदाना
मुद्युक्तानां कृतकृतयुगाचार पुण्यस्थितीनां
तत्रस्पानाममलयशसां भू भुजां का प्रशंसा-
येषां शक्तिः सकल धरणी ध्वंसने पालने वा ॥ (९)
तत्रक्षत्र सुवर्ण सारनिकषग्रावायश्चन्दन
क्रीडालंकृत दिक्पु-

७ रन्ध्र वदनः श्रीनन्नुको भूमृपः ।
यस्यापूर्व्वपराक्रम क्रमनमन्निःशेष विद्वेषिणः
संभ्रान्ताशिरसा वहन्नृपतयः शेषामिवाज्ञां भयात् ॥
यस्यानंदित वंदि रचितस्तोन्नक्रिया प्रक्रमा-(१०)
त्सक्रान्तम्बहुवैरि वर्ग जयिनः कंदर्पकल्पाकृतेः ।
नामक्षाम तनूभृतां मृगदृशां सद्यो विधत्ते पदं स्वान्तेषु-

८ द्विषतां चराशिषु वलोद्वेल्कव्यमव्याहतां ॥ (९१)
तस्मादभूदाजितारेः श्रीवाक्पतिर्वाक्पतितुल्यवाचः
यस्यामला भ्राम्यतिभाननुताभिः सहैव लोकत्रितयेपिकीर्ति । (१२)
यस्यामलोत्पन्ननिषण्ण किरात योपि
दुद्गीत तद्गुण कलध्वनिरम्यसानुः ।
क्रीडा गिरिः शिखर निर्झर वारि पात झात्का-

९ र ताण्डवितकेकिगणः सविन्ध्यः ॥ (१३)
तस्माद्विस्मय धाम्नः क्षीराब्धेः चन्द्रकौस्तुभौ यद्वत् ।
द्वावात्म जाव भूतां जयशक्ति विजयशक्तिश्च ॥ (१४)
तयेद्वियोरम्यमित प्रतापदावाग्नि दग्धाहितकाननामि ।
कर्माणि रोमांच जुषः समेताः समूर्द्धकम्पंक्षितिपास्तुवन्ति ॥ (२५)
तत्रानुजन्मातनयं राहिल्लाख्यमजोजनत् । निद्राद-

१० दरिद्रतां यान्ति यम्विचिन्त्य निशिद्विषः ॥ (१६)
भोम भ्राम्य दसि (स्तु) चिस्त्रववस्टक्संम्मुदिताज्याक्रिये
ज्यानिर्घोषवपटपदे क्रमचरत्संरब्धयोधात्विजि ।
अश्रान्तः समराध्वरे प्रतिहत क्रोधानलोद्दीपिते
वैरोर्दाचिषियः पशूनिवकृती मन्त्रैर्जुहावद्विषः ॥(१७)

श्रीहर्षभूप मथ भूमि भृताम्वरिष्ठः
सोसूत कल्पतरुकल्प मन-
११ ल्पसत्वः ।
अद्यापियस्त सुविकासियशः प्रसून
गन्धाधिवास सुरभीणि दिगन्तराणि ॥ (१८)
यत्र श्रीश्चसरस्वती च सहिते नीति क्रमो विक्रम-
स्तेजा सत्वगुणोज्ज्वलं परिणता क्षान्तिश्चनैसर्गिको
सन्तोषोवि जिगीषुता च विनयो मानश्चपुण्यात्मन-
स्तस्यानन्त गुणस्य विस्मय निधेः किन्नाम वस्तुस्तुमः ॥ (१९)
भीरुर्द्धर्मपराधेमधुरिपु-
१२ चरणाराधने यः सतृष्णः
पापालापेनभिज्ञो निजगुणगणनाप्रक्रमेष्वप्रगल्भः ।
शून्यः पेशुन्य वादेऽ नृतवचन समुच्चारणे जातिमूकः
सर्व्वत्रैवं प्रभाव प्रथित गुणतया नाम (कस्तू) यतेसौ ॥ (२०)
सोनुरूपां सुरुपाङ्गः कञ्चुकाख्यामकुण्ठधीः ।
सवर्णोम्विधिनोवाह चाहमानकुलोद्भवां ॥ (२१)
यस्यापतिव्रत तुलामधिरोढु मीशा-
१३ नारुन्धती गुरुतराममि मानिनीति ।
पत्युः समीहित विधान परापिसाध्वी-
कार्श्यन्तथा परमगादति लज्जितेव ॥ (२२)
गौडक्रीडा लतासिस्तुलित खसबलऽ कोशलः कोशलाना
नश्यत्कस्मीर वीरः शिथिलित मिथिलः कालवन्मालवानः ।
सीदत्सावद्यचेदिः कुरुतरुपु मरुत्संज्वरो गुर्जराणां
१४ तिलकः श्री यशो धर्मराजः ॥ (२३)
स दाता राधेयः स च शुचि वचाऽ पांडुतनयः
स शूरः पार्थोपि प्रथित महिमानः किमपिते
व्यतीता किं ब्रूमो यदिपुनरिहस्युः स्वचरिते
ह्रियानम्रीकुर्युर्वदनमवलोक्यैनमधुना ॥ (२४)
त्रस्त भ्रातरित तत्रभूमृति नृणां क्लेशाय शस्वंग्रहः ।
कामं दातरि सिद्धकेलि सुमनस्तल्पाय कल्पद्रुमाः ।
वित्तेशः पर-
१५ मर्थवृद्धिविधुर स्वान्तो विलासी स चे-
दास्ये तस्य सतीन्दुरुत्पलवन प्रीत्यैदृशामुत्सके ॥ (२५)
यस्योद्योगे बलानां प्रसरति रजसि व्याप्त भेदोन्तराले
स्वः सिन्धुर्व्वद्धरोधाः पिहितरुचिरभूद्भानुरादर्शरम्यः ।

सम्यग्देवेन्द्रदन्ती मुदमवितवियत्सा भ्रमालोच्यहृन्सा:
सोत्कण्ठास्तस्थुरासीन्नयन दश शती कूणिता वृत्तशत्रोः ॥ (२६)
अन्योन्या-

१६ वद्धकोप द्विपकलह मिलद्दन्त दण्डाभिघाय-
प्रोद्यज्ज्वालाकलाप प्रसृतहुत भुजि ज्याघन ध्वानभीमे ।
पीतासृक्षीवरक्ष: प्रमदकलकल लह्लादरौद्रप्रहासे
-घोरं भीतेव लक्ष्मीः समर शिरसि यं संभ्रमादालिलिङ्ग ॥ (२७)
क्रुध्यद्दुर्द्धर धन्वि मार्ग्गण गण प्रारब्धरक्षाक्रियं ।
उत्तुङ्गाञ्जनशैल सन्निभ चलन्मत्ताद्विपेन्द्रस्थित-
विख्यात क्षितिपालमौ

१७ लि रचना विन्यस्तपादाम्बुजं
संख्ये संख्यवलं व्यजेष्टगतभीर्यश्चेदिराजं हठात् ॥ (२८)
लक्ष्मच्छायाकलुषवपुषः कान्तिमद्दूरमिन्दो
रन्या यत्त स्फुरित विधुरात्सुन्दरं चार विन्दत् ।
यस्या···(चार्हवृत्ते)
संभ्रान्ताभिः कथमपि मुखं वीक्ष्य वैरि प्रियाभिः ॥ २९॥
गङ्गा निर्झर घर्घर ध्वनिभय भ्राम्यत्तुरङ्गव्रजाः
सद्यः सुप्त विवुद्ध केस-

१८ रि रव त्रस्यत्करीन्द्राकुलाः ।
यत्सैन्य प्रतिकल्पपादपमुमालूनप्रसूनोच्चयाः
प्रालेयाचलमेखलाः कथमपि क्रान्ताः शनैर्द्दिग्जये ॥ (३०)
उच्चप्राकार भित्ति स्थितसमद (शिखि खूर १)·······(विना) द
········श्लथ (रथ) तुरग प्राप्तवेगान्तरायः ।
यस्मिन्मध्यन्दिनेस्पात्तराणि सुदिनं नीलकण्ठाधिवासं
जग्राह क्रीडया यस्तिलकमिव भुवः-

१९ किञ्च कालंजराद्रि ॥ (३१)
आशस्त्रग्रहणादखण्डित महावीर व्रत प्रक्रियै-
रा वाल्याद विलुप्त सप्यसमयैरापाणि पीडा विधेः ।
अश्रान्तार्थिवितीर्ण्ण पूर्ण्ण विभवैत (र्येप्सिता) कांक्षिभि-
र्दूरोत्कर्ष कथा कुतोच्च पुलकैर्यः साधुमि (:) स्तूयते ॥ (३२)
निन्दाभूमि पुरुषान्तर सङ्गमेन शान्तिव्रजातु सकतत भ्रमणक्रमेण
यस्यातिपौरुष निरस्त मनुष्य भावे लोके समु-

२० द्गत कीर्त्तिरनिन्दितैवा । (३३)
एकैवोवाह लोकेस्मिन्पुत्रजन्मोन्नतंशिरः ।
कञ्छुका येन धीरेण देवकीव मधु द्विषा ॥ (३४)

शौर्यो दार्य नयादिनिर्मल गुण ग्रामाभिरामं यशो
यस्याशेष विशुद्ध नाथतिलकङ्कायन्तिसिद्धस्त्रियः ।
तस्यस्तोत्रमभित्र मर्द्दनरवेऽ स्यष्टप्रकाशीकृतः-
त्रैलोक्यस्यसहस्रसंस्य महसो दीप प्रदानोपमं ॥ (३५)
क्रोधोद्धृत्तान्तक भ्रू कुटिल-

२१ पटुरत्त (१ ण) च्चण्डको दण्ड यष्टि-
ज्या घात स्फार घोर ध्वनि चकित मनः संभ्रमभ्रान्त दृक्षु ।
स्पष्टं नष्टेषु दूरं क्वचिदपि रिपुषु क्षत्रतेजोम्बुराशे
—(र्यस्यौज न व्य) रंसीद्भुवन) विजयिनम्वण्डदो दिण्डकण्डू ॥ (३६)
यो लक्ष वर्ग नृपते शरदिन्दु कान्त,
माख्यातु मिच्छति यशः प्रसर वचोभि ।
दीपः प्रभा परिचयेन विमुग्ध बुद्धि
मंध्यन्दिने दिवसनाथ मुदीक्षतसो ॥ (३६)

२२ यत्राक्राम दवक्र मानस वलि व्याज प्रयोगाप्त-
त्पृथ्वीलंघन लब्ध लाघवमपच्छेदि पदं वामनः ।
लोकालोक शिरः शत प्रतिहृत ज्योतिर्विवस्वान्नप-
स्तस्य क्रामति तन्निशाकर महा श्री स्पर्द्धियुभ्रं यशः ॥ (३८)
धीरो दिग्विजयेषु केलिसरसी न्तीव्र प्रतापं दध-
न्निःशेष द्विषद व्ययो भयतटो विन्यस्त सेनाभरः ।
मज्जन्मत्त करीन्द्र तंकिल जलां श्रीलक्षवर्मा—

२३ भिध-
दवक्रे शत्रसमः कलिन्दतनयो जह्नोः सुतां च क्रमात् ॥ (३९)
आस्थानेषु महीभुजां मुनिजनस्थाने सतां संगने
ग्रामे पामर मण्डलीयु वणिजां वीथी पथे चत्वरे ।
रथ्वन्यध्वगसं कथासु निलये रण्यौ कसौ विस्मया-
न्नित्यं तद्गुण कीर्तनैक मुखराः सर्व्वत्र सर्वेञ्जनाः ॥ (४०)
अस्यानने शरदखण्डशशि प्रसन्ने
को व्यनक्ति हृदयस्थमरिप्रिया

२४ णां ।
सिंदूर भूषण विवर्जित कास्य पद्म-
मुत्सृष्ट हार वलयं कुचमण्डलं च (४१)
तनैतच्चारुचामी कर कलस लसद्योमधामव्यधायि
भ्राजिष्णु-प्रांशु वंश ध्वजगट पटलां बोलितां वृन्दं ।
स्याराद्तेस्तुषार क्षितिधर शिखरस्पर्द्धि वर्द्धिष्णुरागा
दृष्टे यात्रासु यत्र तृदिव वस (त) तयो विस्मयन्ते समेताः ॥ (४२)
कैलाशाद्भोटनाथः सुहृदिति ततः की-

२५ रराजः प्रपेदे-
साहिस्तस्मादवाप द्विपतुरगबलेनाणु हेम्ब पालः ।
तत्सूनोर्देवपालात्तमथ हयपतेः प्राप्य निन्ये प्रतिष्ठा-
वैकुण्ठ कुण्ठितारिः क्षितिधर तिलकः श्रीयशोवर्मराजः ॥ (४३)
श्रीधङ्गः स्वभुज प्रसाधित मही निर्व्याज राज्यस्थिति-
स्तस्मादास महोदधेरि व विधुः सुनूर्जनानन्दकृत ।
युद्धे नश्यदरातिवर्ग्ग सुभट प्रस्तूयमानस्तुतिर्नि-

२६ त्यं नम्रमहीपमैलि गलित स्त्रक्पूजितांघ्रिद्वयः ॥ (४४)
आकालञ्जरमा च मालव नदी तीरस्थिते भास्वतः
कालिन्दीसरितस्तादित इतोप्या चेदिदेशावधेः ।
आतस्मादपि विस्मयैकनिलयाद्गोपाभिधानाद्गिरे-
र्यः शास्ति क्षितिमायतोर्जितभुज व्यापार लीलार्जितां ॥ (४५)
यस्त्यागविक्रम विवेककलाविलास
प्रज्ञा प्रताप विभव प्रभवश्चरिज्ञात् ।

२७ चक्रेकृती-
सुमनसां मनसामकस्मा-
दस्मादकाल कलिकाल विरामशंकीं ॥ (४६)
शब्दानु शासनविदा पितृयान्व्यधत्त देहेन माधव कविः
स इमां प्रशस्ति ।
यस्यामलं कवियशः कृतिनः कथासु रोमाञ्च कञ्चुक
जुषः परिकीर्त्तयन्ति ॥ (४७)

कर्णदेव का जबलपुर ताम्र-पत्र-लेख

ए० इ० भा० २ पृ० ४

भाषा संस्कृत
लिपी-नागरी

प्राप्ति स्थान-जबलपुर, म० प्र०
तिथि—१२वी सदी

१ (॥) ओं नमो व (ब) ह्मणे ॥
जयति जलजनाभःस्तस्य नाभीसरोजं जयति जयति तस्माज्जातवानञ्ज सूतिः ॥
अथ जयति स तस्यापत्यमत्रिस्तदक्षणस्तदनु जयति जन्म प्राप्तवा-
नब्धिबन्धुः ॥ (१)

२ अथ वो (बो) धनसादिराजपुत्रं गृहजामातरमञ्जवान्धवस्य ।
तनयं जनयांव (ब) भूव राजागगनाभोगतडागराजहंसः ॥ (२)
पुत्रं पुरूरवसमौरसमाप सू-

३ नुर्देवस्य ससजलराशि(शि) रसायनस्य ।
आसीदनन्यसमभाग्यशतोपभोग्या यस्योर्व्वसी(शी) च सकुलयमिहोर्व्वरा च॥३ आ (ब्रा)

न्वये किल शताधिकससिमेधयूपोपरुद्धयमुनो-
क्तविविक्तकीर्त्ति ॥

४ सप्ताब्धि(ब्धि) रत्नरम् (श) नाभरणाभिरामविस्व (श्वं) भ(रा) सु (शु)
भरतो व(ब) भूव ॥ (४)
हेलागृहीतपुनरुक्तसमस्तम(श) गोये जयत्यधिकयस्य स कार्त्तवीर्यः ॥

५ अत्रैव हैहयनृपान्वभपूर्व्वपुंसि राजेति नाम स(श) शलक्ष्मणि चक्षमेयः ॥ (५)
स हिमाचल इव कलचुरिवंस (श) मसूत क्षमाभृतां भर्त्ता ।
मुक्तामाणिभिरिविामलवृत्तैः पूतं महीपतिभिः ॥ (६)

६ तत्रान्वये नयवतां प्रवरो नरेन्द्रः पौरन्दरीमिव पुरीं त्रिपुरीं पुनानः ॥
आसीन्मदान्धनृपगन्धगजाधि (राज) निर्माणकेसरियुवा युवराजदेवः ॥ (७)
सिंहासने नृप-

७ तिसिंहमपुष्य सूनुमारुरुपन्नवनिभर्त्तुरमात्यमुख्याः ॥
कोकल्लमर्ण्णाविचतुष्टयवीचिसंत्रसंघघट्टरुद्धचतुरङ्गचमूप्रचारं ॥ (८)
इन्दुप्रभां निंदति हारगुच्छं जुगुप्सते

८ चंदनमाक्षिपन्ती (।)
यत्र प्रभौ दूरतरं प्रभाते वियोगिनीव प्रतिभाति कीर्त्तिः ॥ (९)
मरकतमणिपट्ट प्रौढवक्षाः स्मिताक्षो नगरपरिघदैर्घ्या(र्घ्य) लंघय (न्दो)
र्द्वयेन ।
(शिर) सि

९ कुलिस(श) पातो वैरिणां वीरलक्ष्मीपतिरभवद पत्यं यस्य गाङ्गेयदेवः ॥ (१०)
सवीरसिंहासनमौलिर (त्नं) स विक्रमादित्य इति प्रसिद्ध ।
य(स्माद) कस्मादप (वर्ग ९) –

१० मिच्छन्नकु(च्छ) ल(:) (कु स्वजि ?) तां व(ब) मार (११)
प्राप्ते प्रयागवटमूलनिवेस (श) व (ब) न्धो सार्द्धं शतेन गृहिणीभिरमुत्र मुक्ति ।
पुत्रोऽस्य खङ्गदलि(तारि) करीन्द्रकुम्भमुक्ता फलैः
स्म ककुभोर्च्चति कर्ण्णदेवः ॥ (१२)

११ कनकसि (शि) खर वेल्लद्वैजयन्तीसमीरग्लपितग (ग) नखेलत्खेचरीचक्र
खे (द): ॥
किमपरमिह कास्यां (श्यां) य(स्य) दुग्धाब्धि (ब्धि) वीचीवलयव(ब) ?)
-हल (कीर्त्ती):) कीर्त्तनं कर्ण्णमेरु: ॥ (१३)

१२ अग्रंय धाम (श्रे)यसो वेदविद्यावल्लीकंदः स्वः स्रवन्त्याः किरीटं ।
ब्र (व्र) ह्मस्तंभोयेन कर्ण्णावतीति प्रत्य (द्यापि)क्ष्मातल(ब्र)ह्मलो (कः)॥ १४

१३ अजनि कलचुरीणां स्वामिना तेन हूणान्वयजलनिधिलक्ष्मयां श्रीमदावल्लदेव्यां ।
शशभृदुदयस(श)ङ्काक्षुब्ध(ब्ध)दुग्धाब्धि(ब्धि)वेलसहचरितयस(श): श्रीः
श्रीयस (श) कर्ण्ण देवः ॥ (१५)

१४ (चंद्रार्कदीप) वतिपर्व्वतराजपूर्णकुम्भावभासिनि महा(वि्घ) चतुष्कमध्ये । चक्रे पुरोहितपुर (स्क) तिपूत (कर्म्मा) धर्म्मात्मनोऽस्य हि पितैव महाभिषेकं ॥ (१६)

१५ न खलु स(मदगो) ष्ठीपक्ष पातस्य पात्रं । न खलु कलुषचर्याकज्जलो(द्गावकश ?) कलयति कलिनामन्युदनमं यस्त्रिजा(या) मातमसि जम्बूदीपरत्नप्रदीपः

१६ चिन्तामणि (कृष्णा) सु(शु) क्तिभु (रम) क्रोडे स्याद्यदि कामधेनुदुग्धं । दृस्ये (श्ये) तदृशो-स्तस्य दातुःसादृस्यं (श्यं) (ध) वलारुणेक्षणस्य ॥ (१८)
यः ककुप्कुञ्जरालानस्तंभसन्न (ब्र) ब्रह्मचारिणः ।

१७ (आसा (शा) न्ते) षु जयस्तम्भानुवस्तंभयदुच्चकैः ॥ (१९)
यो व (ब्र)ह्मणां पाणिषु पंचषाणि दाता निधत्ते पयसः पृषन्ति ।
तैरैव तृष्णामवधूय ते च रत्नाकरेपि प्रथमन्त्यव (ज्ञां) (२०)

१८ महीभर्त्ता महादानैस्तैस्तुलापुरुषादिभिः (।)
-गरिम्णा (मे) रुरत्यर्थं कृतार्थयति योथिनः । (२१)
स्वर्ग्गराजगजदन्तरुचीनि क्षीरनीरनिधिसं (शं) ससु(शु) चीनि ।
सा(शा)र्ङ्गि—

१९ (वेष ?) फणिकंचुकभांसि स्फोततां दधति यस्य यसां (शां) सि ॥ (२२)
अन्धाधीस(श) मरन्ध्रदोर्व्विलसितं स्वच्छन्दमुच्छिन्दता ।
येनाभ्यचर्चात भूरिभिः स भगवान्भीमेस्व (ख) रो(भूप)र्णैः ॥

२० यस्या(व) र्ण्ण (यदात्त ?) नृत्यलहरीद्रुवल्लिगोदावरी
(वीर्याण्यु ?) न्मदहंसनादमधुरैः स्त्रोतः स्वरैः सप्तभिः ॥ (२३)

कन्नौज राजा विजयचन्द्र का कमौली लेख

ए० इ० भा० ४ तथा ८

भाषा-संस्कृत — प्राप्तिस्थान–कमौली राजघाट, वाराणसी
लिपी-नागरी — तिथि–१२ वीं सदी

१ अकुंठोत्कंठ वैकुंठ-कंक (ठ) पी (पो) ठ-लुठत्-करः । संरंभः सुरत-आरंभे स श्रियः श्रेयसे = स्तु वः ॥ (।) (आ) भी भी (सी) द् = असो (शी) तद्युति-वंश-जात् (क्ष्म्) आपाल-माला सु दिवं गतासु । साक्षाद्-विवस्वान् = इव

२ (भू)रि धाम्ना नाम्ना यशोविग्रह इत्य = उदारः ॥ (२) तत् (सु) तो = भूत् = महीचं (द्र) श = मृद-धाम निभं निजं (।)
येन = आपार (म् = अ) क्त (कू) पार-पारे व्या (पा) रितं भ (य) शः (३) तस्य आभूत = तन यो नय-ऐ (क) रसिकः क्रीनथि

३ पन्-मंडलो वि (ध्व) स्त्-ओद्य (द्ध) त-वीर-ओध तिमिर(–:) श्रीचचंद्रदेवो नृपः । येन ओदारतर-प्रता (प)–स (श) मित-आशेष-प्रजोपद्रवं श्रीमद् गाधिपुर-आधिगा (रा)ज्यम् = असमं दोर-विक्रमेण = आर्जितं ।।(४) तीर-थानी का-

४ शि-कुशिक-आ(ओ)त्तरकोशल-(एं) द्रस्था (नो) यकानि परिपालयता = आवि(धि)गम्य (।) हेम = आत्म-तुल्यं अनिशां (शं) ददता द्वि (ए)भ्यो येन=अंकिता बभु(सु)मती(ती) स(श) भशलु (स् = तु) लाभिः ॥(ऽ)

५ तस्य=आत्मजा (जो) मवनपाल इति क्षिती(म्)द्र चूडाम (ण) र्=व्विजयते निज-गोत्र-चंद्रः । यस्य = आ(भि)षेक-कलश-ओल्लसितैः पयोभिः (प्र) क्षालितं (क) लि रजः-पटलं धरित्र्याः ॥ (६)
यस्(य)=आ-

६ सीद्=विजय-प्रयाण-समये तुंग् = आचल्-वोच्चै (श्-च) लन्-माद्यत् कुंभि-पद(क्र) म् आ (स)म-भर-भ्र(श्य) न् महीमंडले । चूडारत्न-विभिन्न-तालु-म(ग)लित-स्त्यान-आसृग्-उद्भासितः पेष-वशाद्-इव (क्ष)-

७ णम्=असा(सौ) क्रोड (?) निलीन्-आननः ॥ (७)। त(म्म) आद=अजायप(त) निज-आयत-वा(बा) हुवल्लि-वं (बं) ध्-अव(र्)द्ध-नव-राज्य रजो नरे(ं)द्रः । सां(द्र)-आमृत-द्रव-मुरां(चां) प्रववो गवां यो गोविन्दचंद्र इति-च(ं)द्र इव् = अंवु (ब) राशः (शेः) ॥ (८) ॥

८ (न) कथम् = अप्य = अलभंत तलकुमांस् = तिभ्रिपु (षु) दिक्षु गजान् = अ (थ) वज (र्) इणः । (क) कुभि बभ्रभुर = क्षभ्रमुवल्मभ-प्रतिभटा इव य (स्य) घटा-गजाः ॥ (९) । (अ) जनि विजयचन्द्रो नाम तस्मान् = नर (एं) द्र (:) सुरप-

९ तिर = इव भूभृत्-पक्ष-विच्छेद-दक्षः ।
भुवन-वलन-हेला-हर्म्य-हम्मीर-नारी-नयन-जलध-धा (र) आ-शांत-भूलोक-ताधः (पः) ॥ (१०) यस्मिं (श् = च) लत्य उदधिनेभि-मही-जयाम माद्यत-करींद्र-गुरु-भार-नि

१० पीधि (डि) त्-एव (।) त्त (प्र) जापति-पदं शरण-आर्थिनी (भू) स = त्व (ं) गत्-तुरंग-निवह्-आ (ओ) त्थ-रजस-छलेन ॥ (।।) सो = यं समस्त-राजल (च) क्र-संस (ए) वि (व) नि (त) चरण । स व (च) परमभट्टारक महाराजाधि

११ राज-परम (ँ) श्वर परममाह (ँ) श (व्) र-निजभुज (ओ) पार्जित-कान्य-कु (ब्जा) (ब्जा)) धिपत्य-श्रीचंद्रवे (१) व-पादानुध्यात-परमभट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-परमभट्ट (१) श् (व्) र-श्री (म) बनपाल-देव

१२ पादानुध्यात-परमभट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-परममाह (ँ) श्वर- अवश्य (प) तिगजपरिनरपतिराजत्रयाधिपति विधिधविद्याधि विचार वाचस्पति-श्रीगोविंदचंद्रदेव-

१३ पादानुध्यात-परमभट्टारक-महाराजाधिराज-परमेश्वर-परममाह (ँ) श्वर अश्वपतिगज-पतिनरपतिराजत्रयाधिपति-विविध-विद्याधि (वि) चार वाचस्पति-श्रीमदविजयचंद्र-

१४ देवा (वो) विजयी ॥ जिआवै-पट्टलायां हरिपुर-ग्राम-नि(वा)सिना (नो) निधि (खि)ल-जनपदान=उपगतान् = अपि च राज-रा (ज्ञो)-मन्त्रि-पुरोहित-प्रतीहार-सेनापति-(भाण्डा)-

१५ गारी(क) अक्षपटलिक-भिषक (ग्)-नैमित्तिक-अंतःपुरि (क)-दू)(त)-करितुर्गपट्टनाकर-स्थानगोकुलाधिकारी-पुरु(षा) न्=आ (ज्ञ) पयति वो(बो) धयति (त्य=) आदिशति (च) यथा-

१६ विदिवय=अस्तु भवतां व (य)ग्(थ्) ओपरि (लि)खित्र=ग्रामः स-जल-(स्थल): स-(लोह)-लवल् (ण) आकर: स गर्त्त ओय (ष)रः। (स)-मत्स्य-आकर: स-आम्वर(म्र)-(मधूक): पि(वि)टप-(वा)टि(का)-सहितः।

१७ तृण-दा(यू)ति-गोचर-प(र्) यन्तः स्-आ(ओ) र्ध्व-आधश=चतुर-आघाट्-विसु (शु)द्धः (स्व-सी)मा-पर्यन्तः। (च) तुरन्वि(ं) शत्याधि(क)-(द्वा) दशास (श) त स ( ) व (त्स) रे स (ं) का = पि सं १२२४ (आ) शाढ़-ना (मा) स (सि) (शुक्ल) ?–पक्षे) दशाम्यां

१८ (ति) थौ रवि-दिने स (ग्र-ए)ह श्रीमद् (वा) राणस्य (आं) गङ्गाया (ं) स्नात्वा द(ˋ) व-श्री-(श्रच) आदिकेशवसञ्ज्ञिणौ विधिवत् = मन्त्र-दे (व) मुनि-मनुज-भूत प् (f) तृ-गणां (स = त) र्प्पयित्वा तिमिर-पटल-पाटन-पटु-

१९ महसम् + उष्णारा (रो) वि (चि) षम् = उप (स्थ) आय-आषधिपति-शकल-ले (शे) ष (ख) रं समभ्यर्च्य त्रिवु (भु) वन-त्रातुर = (भ) गवतः कृणस्य पूजां विधाय प (ˋ) तस्य = एव दीक्षा-ग्रहण-प्रस्तावे (वे) मातापित्रोर = आत्मनश् = च पु-

२० ण्य-यशो-धि (भि) वृद्धयेऽस्म (त्-स) म्मत्या समस्तराजप्रक्रिय (ओ) पेत-रा (यो) व (रा) ण्याभिधि (कत)-माघ (हा) राजपुत्र-श्री-जय (च्च) न्द्रर् (ˋ) व् (ˋ) न गोकर्ण्ण-(कु) (शलता-पूत-करतल-ओदक-पू (र्व्व) म् = आ-

२१ (चंद्र-आर्क) पां (या) वत (त्) वं (बं) धुल-गोत्राय। व (बं) धुल-। (अ) घमर्षण-विसा (श्वा) मि (त्र) त्रिःप्रवराय। दीक्षित-पुण्ड-(प्र) पौत्राय। दीक्षि (ते) वील्हा-पोत्राय। मल (हा) पुरा (रो) हित दी (क्षित) श्री-जागू-पुत्राय। वैष्णव

२२ (पू) जाविधि (गु) रवे। महापुरो (हि) त-श्री-प्रहराजस- (श्र) मण् (ˋ) त्रां (त्रा) ह्मणाषा (य) सासनोकृत (त्व) ष् (प्र) दत्ता (त्तो) मत्वा षु (य) थादो (य) ग (मा) वि (न)-(भागभो) गकर (-प्र) वणिकर-ज (ला) ल (त) कर-गोकर-तुरुष्क-

२३ (वं) ड-क(कु) मा (म) रगदियाणक-आदि समस् (त्) अ-नियतानि (य) त्-आदायान् आ (ज्ञा) विध (ˋ) यो-(भूय) दस्यथ = (ˋ) ति॥ स (भ) व (ˋ) ति च्-आत्र धग् (र्म्) आनुशां (शा) सिनः प (ो) राणिक-श्ल (ओ) काः। (जैसा ऊपर के लेख में उल्लिखित)

३१ ......लिदिव (खि) तम् = इदंठकुर श्रीं-कुसुमपालेन प्रमाणम् = इवि (ति)॥

परमार अभिलेख

ए. इ. भा. १

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—उदयपुर, राजस्थान

लिपि—नागरी | तिथि—१२ वीं सदी

१ ओं (॥) जयति व्योमकेशोसौ यस्सर्गाय विभर्भितां। ऐन्दवीं सि(शि) रसा लेखां जगद्बीजां

२ कुराकृति॥ तन्वन्तु (न्तु) वां स्मराराते: कल्याणमनिशं जटाः। कल्पान्त समयोद्दाम तडिद्व-

३ लयपिङ्गलाः परम भट्टारकमहाराजाधिराज परमेश्वर श्री वाक्पति

४ राजदेव पादानुध्यात परम भट्टारकमहाराजाधिराज परमेश्वर श्रीं सिन्धदेव पादानुध्यात
५ परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर श्रीभोजदेव पादानुध्यात परमभट्टारक
६ महाराजाधिराज परमेश्वर श्रीजयसिंहदेवः कुशली ।।पूर्णा पथक मंडले ल (कु) त्याग्राम
७ द्विचत्वारिंश दन्तः पाति भीम ग्रामे समुपगतान्समस्त राज पुरुषान्वा (ब्रां) ह्म-णोत्तरान्द्र
८ ति निवासि पट्टकिल जनपदारीश्च समादिशत्यस्तु वः संविदितं ।। यथा श्रीमद्धा (द्वा) रा व
९ स्थितैरस्माभिः स्नात्वा चराचरगुरूं भगवन्त भवानीपतिं समभ्यच्चर्य संसारस्थासारतां-
दृष्ट्वा ।
१० वाताभ्र विभ्रममिदं वसुधाधिपत्यमपात मात्र मधुरो विषयोपभोगः । प्राणांस्तृणा-
११ ग्र जलविन्दु समानाराणां धर्म्मः सखा परमहो परलोकयाने ।। भ्रमत्संसार चक्राग्रधाः
१२ रा धारामिमां श्रियं । प्राप्य येन ददुस्तेषां पश्चात्तापः परं फलं ।। इति जगतो दिनश्वरं
१३ स्वरूपमाःवलप्यो परिलिखित ग्रामोयं स्व सीका तृणगोचर यूतिपर्यंयन्तः सहिरण्य
१४ भागभोगः सोपरिकरः सर्व्वादाय समेतश्च (श्च) श्री अमरेश्व (श्व) रे पट्टशाला ब्राह्मणेभ्यः
१५ स्व पस्तोयं श्री जयसिङ्घ देवस्य ।।

द्वितीय-भाग

१६ सोजनादिनिमित्तं मातापित्रोरात्मनश्च पुण्य यशोभिवृद्धयेऽदृष्ट
फलं अंगी-
१७ कृत्य चन्द्रार्कार्ण्णवक्षिति समकालं यावत्परया भक्त्या शाश (स) ने नोदक पूर्व्वं प्रतिपादित
इति
१८ मत्वा तन्निवासि पट्टकिल जनपदैपथादीपमान भागभोगकर हिरण्यादिकं
१९ देवब्राह्मणभुक्ति वर्ज्जमाना श्रवणविधेयैर्भू त्वा सर्व्वमेम्यः समुपनेतव्यं ।
२० सामान्य चैतत्पुण्यफलं बुद्धाऽस्यद्वंशजैरन्यैरपि भाविभोक्तृभि-
-रस्मत्प्रदत्तधर्म-
२१ दायोय मनुमन्तव्यः पालनीयश्च उक्तं च । बहुभिर्व्वसुधाभुक्ता राजभिः सगरादिभिः
२२ यस्य यस्य यदाभूमिस्तस्य तदाफलं ।। पानीय (ह) दन्तानि पुरानरैन्द्रैर्द्दत्ता (ना)
२३ नि धर्म्मार्थ यशस्कराणि । निर्म्माल्य वान्ति प्रतिमानी तानि कोनाम साधुः पुनराददीता ।।
२४ अस्मत्कुलक्रममुदार मुदाहरद्भिरन्यैश्च दानमिद मभ्यनुमोदनीयं ।
२५ लिल बुद्बद चंचलाया दानंफलं पर यशः परि पालनं च । सर्व्वानेतान्भाविनः पार्थिवेन्द्रा-
न्भूयो भूयो
२६ याचते रामभद्रः । सामान्योयं धर्म्म सेतुर्नृपाणां काले काले पालनीयो भवद्भिः ।। इति
कमलदलाम्बु बिन्दुलोलां
श्रियमनुचिन्त्य मनुष्य जी-
२८ वितं च सकलमिदमुदाहृत च वृद्धा नहि पुरुषैः परकीर्त्तयो विलोप्या इति ।।
२९ संम्वत् १११२ आषाढ़ वदि (।) स्वयमाज्ञा ।
मंगलंमहाश्रीः । स्वहस्तोयं
श्री जय सिङ्घदेवस्य (।।)

अध्याय १९

दक्षिण तथा पश्चिमी भारत के लेख

इस अध्याय में दक्षिण भारत के प्रमुख राजवंशों के अभिलेख संग्रहीत हैं जिनसे ऐतिहासिक घटनाओं पर विशेष रूप से प्रकाश पड़ता है। दक्षिण भारत के सातवाहनों के पश्चात् कई छोटे राज्य सुसंगठित किए गए। मैसूर के प्रदेश में सातवाहनों के सामन्त चुटु जाति के नरेश शासन करते रहे। उनके नष्ट होने पर कदम्ब वंश का राज्य आरम्भ हुआ। मैसूर के चितलदुर्ग के भाग (शिकारपुर जिले) में मलवल्ली से चुटु लोगों के लेख प्राप्त हुए हैं। उसी स्तम्भ पर कदम्ब नरेश मयूरशर्मन का भी लेख अंकित है जो प्रमाणित करता है कि चुटु के पश्चात् मैसूर क्षेत्र में कदम्बों का राज्य विस्तृत हो गया था। कदम्बों का अधिकार कुंतल प्रदेश पर भी हो गया जो कदम्ब राजा कुंतलेश नाम से संस्कृत साहित्य में विख्यात था। क्षेमेन्द्रने अपनी पुस्तक 'औचित्य विचार चर्चा' में वर्णन दिया है कि कालिदास ने कुंतलेश के यहाँ दूत का कार्य किया था। कहनेका तात्पर्य यह है कि दक्षिण के कदम्ब राजा के साथ भी गुप्त सम्राटों का राजनैतिक सम्बन्ध रहा।

इस चन्द्रवल्ली लेख में मयूर शर्मन का नामोल्लेख है।

दूसरा लेख भी इसी भूभाग से प्रकाश में आया है। इससे पता चलता है कि कदम्बों का राजा ककुत्स्थ वर्मन द्वितीय चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का समकालीन था। इस कुंतलेश ने अपनी कन्या का विवाह गुप्त नरेश से सम्पन्न किया था।

गुप्तादिपार्थिवकुलाम्बुरुहस्थलानि
स्नेहादरप्रणयसम्भ्रमकेसराणि
श्रीमन्त्यनेकनृपषट्पदसेवितानि
योऽबोधयत् दुहितृदीधितिभिर्नृपार्कः

(ए. इ. भा. ८ पृ० २४)

अतएव गुप्त शासकों का दक्षिण भारत से वैवाहिक सम्बन्ध का परिज्ञान होता है।

इसी युग में द्वितीय चन्द्रगुप्त ने अपनी पुत्री प्रभावती गुप्त का विवाह दक्षिण नरेश वाकाटक वंशज रुद्रसेन से किया था। इसके अध्ययन से प्रकट होता है कि गुप्त सम्राट् द्वितीय चन्द्रगुप्त ने दक्षिण भारत से मैत्री रखने की आवश्यकता का अनुभव किया। स्वयं मालवा गुजरात काठियावाड़ को जीत लिया था अतएव दक्षिण से निर्भीक रह कर शासन करता रहा यही उसकी राजनीति थी।

इस लेख की लिपि यह घोषित करती है कि उत्तरी भारत से कारीगर पूना में जाकर ताम्रपत्र पर अंकन किया था। सम्भव है। प्रभावती गुप्त ने अपने पिता से प्रशस्ति लिखने के लिए कारीगर माँगा हो। वह उत्तरी भारत का रहने वाला था अतः बाक्स नुमा दक्षिण भार-

वीय लिपि अंकित करने में असमर्थ रहा। यही कारण है कि कील नुमा ब्राह्मी में लेख अंकित है।

पश्चिमी चालुक्य वंशी राजा पुलकेशिन् द्वितीय का अभिलेख कई विचारों से महत्त्व-पूर्ण है। इस प्रशस्ति में पुलकेशिन् की उपलब्धियों का विस्तृत विवरण उपलब्ध है। उसके संरक्षण में रहने वाला रवीकीर्ति ने प्रशस्ति की रचना की है तथा जैन मंदिर के निर्माण का वर्णन भी किया है। पश्चिमी चालुक्यों के लेख शक सम्वत् में तिथियुक्त हैं। चालुक्य प्रशस्ति में शक काल या शक नृपति राज्य अभिषेक सम्वत्सर (ए. इ. भा. ६ पृ. ७) का उल्लेख मिलता है। शक सम्वत् का सर्वप्रथम उल्लेख चालुक्य लेखों की विशेषता है। अयहोल का लेख भी शकसम्वत् ५५६ (= ६३४ ई०) में ही तिथियुक्त है (पद्य ३४) अतएव इसे पूर्व मध्य युग का प्रमुख लेख मानते हैं जिससे भारत की राजनीति का परिज्ञान हो जाता है। हर्ष वर्धन के समस्त अभिलेखों तथा दानपत्रों में उसके दिग्विजय का ही उल्लेख है। हर्ष के पराजय का वर्णन अयहोल लेख में ही उल्लिखित है (पद्य २३)। यानी ऐसी प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना का इस लेख के अतिरिक्त अन्य लेख उपलब्ध नहीं है।

अयहोल प्रशस्ति में पुलकेशिन् द्वितीय के पूर्वजों का भी विवरण मिलता है। प्रारम्भ में चालुक्य वंश की ऐसे समुद्र से उपमा दी गई है जहाँ अमूल्य मोती निकलते हों। यानी चालुक्य वंशी मोती के सदृश प्रमुख तथा प्रभाव शाली (चमकते हुए) थे। द्वितीय पुलकेशिन् के पूर्वजों में प्रथम पुलकेशिन्, कीर्ति वर्मन तथा मंगलेश का नामोल्लेख श्रेयस्कर है। प्रथम पुल-केशिन् ने चालुक्य राजधानी वातापीपुरी को बसाया था अतएव वह उस नगरी का पति था।

वातापिपुरीवधूवरताम्।

उसने अश्वमेध यज्ञ किया था (हयमेधयाजिना) उसका पुत्र एवं द्वितीय पुलकेशिन् का पिता कीर्तिवर्मन प्रभावशाली तथा शक्तिशाली राजा था। उसने नल (= दक्षिण कोंकण) मौर्य (उत्तरी कोंकण) तथा कदम्ब (बनवासी, मैसूर) शासकों को परास्त किया था। उसके गुणों के विषय में लिखा है—

परदारनिवृत्तचित्तवृत्ते-
रपि धीर्यस्य रिपुश्रियानुकृष्टा।

कीर्तिवर्मा के विजय की समाप्ति न हो पायी थी कि उसके अनुज ने सिंहासन पर अधिकार कर लिया। मंगलेश समझता था कि गद्दी के वास्तविक अधिकारी को राज्य न मिले, इस कारण अपनी शक्ति सुदृढ़ कर रहा था। ऐसी स्थिति में द्वितीय पुलकेशिन् राज्य से अप-रुद्ध हो गया (भाग गया) और पिता की गद्दी को कालान्तर में प्राप्त किया। इसके लिए मंगलेश से गृह युद्ध करना पड़ा और अंत में विजय लक्ष्मी पुलकेशिन् को प्राप्त हुई।

मंगलेश के सम्बन्ध में भी प्रशस्तिकार लिखता है कि उसने पश्चिमी तथा पूर्वी समुद्र के मध्य समस्त भूभाग पर अधिकार कर लिया। मध्य प्रदेश (महाकोशल) के शासक कल-चुरि को भी परास्त किया और आराकान समुद्री किनारे पर रेवती द्वीप को अधिकार में ले लिया। बम्बई के समीप रत्नागिरि से आठ मील की दूरी पर स्थित द्वीप समूह (लकद्वीप) पर भी राज्य विस्तृत किया। इस परिस्थिति में आकर मङ्गलेश अपने पुत्र को सिंहासन पर बिठाना

चाहता था। उस समय पुलकेशिन् द्वितीय राज्य-त्याग या देश का बहिष्कार कर चुका था किन्तु अपहोल प्रशस्ति के १४वें तथा १५वें पद्यों में गृह युद्ध का विवरण मिलता है। राज्य के वास्तविक उत्तराधिकारी द्वितीय पुलकेशिन् समीपस्थ राजाओं की सहायता लेकर सन् ६१० ई० में सिंहासनारूढ़ हुआ।

द्वितीय पुलकेशिन् की यश गाथा तथा विजय की वार्ता प्रशस्ति के अधिकांश भाग में वर्णित है।

चालुक्य वंश में कलह से लाभ उठा कर राष्ट्रकूट कुमारों—अपायिका एवं गोविन्द—ने चढ़ाई कर दी किन्तु द्वितीय पुलकेशिन् के हाथों परास्त हुए। पंढरपुर के समीप भीमरथी नदी के किनारे सम्भवतः युद्ध हुआ था परन्तु पराजित शासक चालुक्य नरेश के मित्र बन गए। द्वितीय पुलकेशिन् ने निम्न लिखित राजाओं को परास्त किया—

(१) कदम्ब शासक (बनवासी, मैसूर)
(२) गंग (गंगवाडी प्रदेश उत्तरी मैसूर)
(३) अलूप (मालावार के शासक)
(४) महाराष्ट्रीक (९९ हजार ग्रामों का समूह)
(५) पश्चिम भारत में लाट (दक्षिण गुजरात)
(६) मालवा
(७) गर्जुर (भरौंच के शासक
(८) पूर्वी भाग में महाकोशल (मध्यप्रदेश)
(९) कलिंग देश
(१०) पिष्टपुर=पीठापुर (उत्तरी आंध्रप्रदेश)

इस प्रदेश को विजयकर उसने अपने कनिष्ठ भ्राता विष्णु वर्धन को गद्दी पर बिठाया जिसने पूर्वी चालुक्य वंशी राज्य की स्थापना की। बेंगी (गोदावरी-कृष्णा के बीच) उसकी राजधानी निश्चित की गयी। उसके दक्षिण में द्वितीय पुलकेशिन् ने कांची के पल्लव नरेश महेन्द्रवर्मन को पराजित किया था। वहीं चालुक्य नरेश ने कावेरी नदी को पार कर चोल, केरल एवं पांड्य राजाओं को हराया था। प्रशस्ति के १८वें पद्य में पल्लव को प्रकृतिरिपु कहा गया है। सम्भवतः पल्लव सुदूर दक्षिण के चोल, केरल तथा पांड्य का समान रूप से शत्रु था। यही कारण था कि चोल चालुक्य नरेश का मित्र बन गया। इसका तात्पर्य यह है कि सुदूर दक्षिण से लेकर नर्मदा तक तथा गुजरात से लेकर कलिंग देश तक समस्त शासकों को परास्त कर द्वितीय पुलकेशिन् ने अपना राज्य विस्तृत किया था। ऐसा पराक्रमी एवं शक्तिशाली राजा चालुक्य वंश में दूसरा न हुआ। इस प्रशस्ति की विचित्र बात यह है कि २३वें पद्य में उत्तरी भारत के राजा (सकलोत्तरापथनाथ) हर्ष वर्धन के पराजय का वर्णन है जो अन्यत्र उल्लिखित नहीं है। उत्तरी भारत में हर्ष का बोलबाला था परन्तु नर्मदा के दक्षिण गुजरात से कलिंग तक सर्वत्र चालुक्य नरेश द्वितीय पुलकेशिन् का यशोगान हो रहा था। पांड्य तथा केरल तक इसकी विजय पताका फहरा रही थी। इसी सार्वभौम विजय के पश्चात् द्वितीय पुलकेशिन् ने चालुक्य वंश को गृह युद्ध के सर्वनाश से बचाया तथा सर्वतोमुखी प्रतिभा के कारण चालुक्य वंश को दक्षिण भारत का एक सुदृढ़ साम्राज्य बना दिया।

प्रशस्ति के अन्त में वर्णित है कि इस विजय यश के सहित राजा वातापी नगर में प्रवेश किया और देवता तथा ब्राह्मण को दान किया। इस लेख की तिथि श. का. ५५६ (= ६३४ ई०) दी गयी है, जिसका प्रयोग दक्षिण भारत में होने लगा था। प्रशस्ति के अंत में रवीकीर्ति का नामोल्लेख है जो (प्रशस्तिकार) कालिदास तथा भारवि के सदृश काव्य में प्रवीण तथा कवि बतलाये गए हैं : इस लेख में अलंकार पूर्ण पंक्तियाँ हैं जिनकी समता रघुवंश तथा किरातार्जुनीय के पद्यों से की जा सकती है। रघु के दिग्विजय के सदृश द्वितीय पुलकेशिन् की विजय यात्रा।

अपहोल पद्य	५	रघुवंश	७। ४८
,, ,,	१७	,,	३। २६
,, ,,	२१	,,	४। २९
,, ,,	१०	किरात	५। ९

गुप्तशासन के पश्चात् पश्चिमी भारत में भी सामन्त स्वतन्त्र हो गये। काठियावाड़ के बलभी के मैत्रक नरेश पहले गुप्त नरेशों के अधीन होकर शासन करते रहे किन्तु साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने पर ई० स० ४८५ ई० के समीप मैत्रक सेनापति भट्टारक ने बलभी राज्य की स्थापना की। डा० राय चौधरी का मत है कि मध्य युग में हूण राजाओं का प्रभुत्व था जिसकी प्रतीक्षा कर मैत्रकों के तीसरे राजा द्रोण सिंह ने स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। धरसेन की प्रशस्ति में—'स्वयमुपहितराज्याभिषेको परममाहेश्वर महाराज' वाक्य द्रोण सिंह के लिए उल्लिखित है। यानी मैत्रकों का तीसरा राजा पूर्ण स्वतंत्र हो गया। उसके पश्चात् उसका छोटा भाई श्री ध्रुवसेन भी 'महाराज' पदवी से विभूषित था। उसके उत्तराधिकारी भी इसी पदवी को धारण किये थे। अतएव इसमें संदेह नहीं किया जा सकता कि द्रोण सिंह के वंशजों ने स्वतंत्र रूप से शासन किया था। इस प्रशस्ति के नायक श्री धरसेन महासामन्त महाराज पदवियों से विभूषित किए गए हैं। इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है कि उत्तरी भारत के मौखरि नरेश तथा काठियावाड के बलभी राजा बहुधा युद्ध करते रहे और उसमें धरसेन पराजित हुआ था। इसीलिए उसे महासामन्त कहा गया है। उसके दानपत्रों में सन् ५८०, ५८८, और ५८९ तिथियाँ उल्लिखित हैं। मोखरि राजा ईशान वर्मा (ई०स० ५५४) ने स्यात् मैत्रक नरेश धरसेन को परास्त किया हो। ह्वेनसांग ने बलभी को एक पृथक् देश कहा है। किन्तु इसका कथन कसौटी पर नहीं उतरता। विद्वानों का मत है कि धरसेन द्वितीय के पश्चात् गृह कलह से बलभी दो भागों में विभक्त हो गया। अस्तु। इस बलभी दानपत्र से मैत्रकों की धार्मिक प्रवृत्ति का स्पष्ट पता लगता है। मैत्रकों के प्रथम तीन शासक-परममाहेश्वर (शिव के पुजारी) कहे गए हैं। चौथा राजा ध्रुवसेन अपने को विष्णु का भक्त (परम भागवत) घोषित करता है। उसका छोटा भाई परम आदित्य भक्त (सूर्य का भक्त) कहा गया है। दानपत्र में नायक द्वितीय धरसेन भी अपने को शिव का पुजारी (परममाहेश्वर) कहता है। इससे प्रकट होता है कि मैत्रक नरेश शिव या विष्णु के पुजारी थे। उस वंश में हठवाद न था।

सबसे विचित्र बात यह है कि द्वितीय धरसेन ने बलभी के आचार्य भदन्त स्थिरमति द्वारा स्थापित बौद्ध बिहार को दान दिया था जिसकी आय से भगवान् बुद्ध की पूजा निमित्ति पुष्प गन्ध धूप दीप का प्रबन्ध किया गया था। इसके अतिरिक्त उस विहार में निवास करने

वाले भिक्षुओं के वस्त्र (चीवर) भोजन, आसन तथा औषधि के लिए भी व्यय निमित्त द्रव्य का उपयोग करने का विधान था। उस दानपत्र में यह भी उल्लिखित है कि उस आर्य से विहार के मरम्मत (खण्ड स्फुटित संस्कार) का भी प्रबन्ध किया जाय। इस प्रकार परम-माहेश्वर (शिव के पुजारी) धरसेन ने बौद्ध सम्बन्धी विहार एवं पूजा आदि के लिए दान दिया। इस दानपत्र में सभी बातों का विवरण है जो मध्यकालीन दानपत्रों की विशेषता समझी जाती है। उसी प्रसंग में समस्त करके ग्रहण करने का अधिकार दान ग्राही का कार्य कहा गया है विविध करके नाम इस प्रकार हैं—सोद्रंम सोपरिकरो सवातभूतप्रत्यायौ सधान्य भाग भोग हिरण्य आदि। कहने का तात्पर्य यह है कि बलभी नरेश द्वितीय धरसेन का यह लेख (दानपत्र) मैत्रकों के धार्मिक सहिष्णुता के विचार को पूर्ण रूप से व्यक्त करता है।

इस बलभी दानपत्र की तिथि (२६९) गुप्त सम्वत् में उल्लिखित है। अतएव यह अनुमान सही होगा कि गुप्त सम्राटों के पश्चिमी भारत पर से अधिकार हट जाने पर भी मैथकों ने उसी गुप्त सम्वत् को ही अपनाया जिसका विचार वहाँ था। स्कन्दगुप्त की गिरना (काठियावाड़) प्रशस्ति भी गुप्त सम्वत् १३७, १३८ (ई० स० ४५७, ४५८) में तिथि युक्त पर्वत पर अंकित की गई थी। वहाँ मैत्रकों ने अधिकार स्थापित कर, उसी सम्वत् का प्रयोग उचित समझा, इसी लिये बलभी अभिलेख (दानपत्र की तिथि गुप्त सम्बत् २६९ ई० ५८९) में ही दी गई है। गुप्त शासन के नष्ट होने पर भी वहाँ इसका प्रभाव शेष रह गया था।

८ वीं सदीसे दक्षिण भारत में एक शक्तिशाली राजवंश का उदय हुआ जो राष्ट्रकूट के नाम से विख्यात है। उस समय (मध्य युग में) उत्तरी भारत में किसी स्थायी शासन का अभाव था। बंगाल में अराजकता छाई थी। उसका अंतकर गोपाल ने एक नये वंश की स्थापना की जो पाल वंश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। पश्चिम दिशामें गुर्जर प्रतिहार शासन कर रहे थे। मध्यप्रदेश का इतिहास अन्धकारमय था। दक्षिण पूर्वी भाग में बेंगी के चालुक्य राज कर रहे थे। उसी युग में राष्ट्रकूट वंशका उत्थान हुआ था। जिनकी प्रशस्तियों का यहाँ संग्रह किया गया है। उससे राष्ट्रकूट वंश विशेषकर दक्षिण भारत के इतिहास का परिज्ञान हो जाता है। लेख पूना के समीप किसी स्थान से प्राप्त हुआ था जो भोर संग्रहालय में सुरक्षित है। द्वितीय दानपत्र प्रथम अमोघवर्ष के शासन में अंकित कराया गया था। इन दोनों के सर्वेक्षण से इस वंश के इतिहास पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है।

राष्ट्रकूटों की प्रमुख शाखा में मान्यखेट के राजाओं की गणना होती है। दोनों प्रशस्तियों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इन्द्र इस शाखा (मान्यखेट) का सर्व प्रथम शासक था जो अधिक योग्य तथा महत्वाकांक्षी था। उसी ने राष्ट्रकूट वंश की सत्ता दृढ़तापूर्वक स्थापित की। अमोघवर्ष के संजन ताम्रपत्र अभिलेख में वर्णन आता है कि इन्द्र ने गुर्जर चालुक्य नरेश की कन्या भवनागा से राक्षस विवाह किया था। इसका पुत्र दन्तिदुर्ग बड़ा ही पराक्रमी तथा दूरदर्शी शासक था जिसने राष्ट्रकूट वंश की स्वतन्त्रता और महत्ता पर अधिक बल दिया। राष्ट्रकूट वंश के अन्य लोगों (भाई आदि) को शासक का भार सौंप कर तत्कालीन राजनीति में सफलता प्राप्त की। उस समय मुसलमान शासक मालवा तथा गुजरात पर आक्रमण कर रहे थे। चालुक्य तथा पल्लवों में पारस्परिक युद्ध होता रहता था। दन्तिदुर्ग ने उस अस्थिर

वातावरण में अपनी नीति से काम लिया और कूटनीति तथा संघर्षों से अपने अभियान में सफलता पाई। पिता से भी अधिक राष्ट्रकूट वंश को सुदृढ़ बनाया। एलौरा के लेख से पता चलता है कि दन्तिदुर्ग ७४२ ई० तक चालुक्य के अधीन था और उसी से महासामन्त कहा गया है। किन्तु कुछ ही वर्षों के पश्चात् (७५४ ई०) दन्तिदुर्ग ने स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। उसने सिन्ध, कोशल (मध्यप्रदेश) कांची तथा पश्चिमी चालुक्य राज्य पर विजय प्राप्त किया। इस तरह दन्तिदुर्ग के हाथ में खानदेश नासिक, पूना, सतारा और कोल्हापुर के जिले आ गए। उज्जैन पर भी उसके अधिकार का परिज्ञान संजन ताम्रपत्र से हो जाता है जिसमें वर्णित है कि दन्तिदुर्ग ने उज्जैन में हिरण्यगर्भ दान किया था जिस समय वहाँ के शासक प्रतिहार का काम कर रहा था—

हिरण्यगर्भ राजन्यैरुज्जयिन्यां यदासितम्
प्रतिहारकृतं येन गुर्जरेशादि राजकम्।

इस प्रकार के दिग्विजय उपरान्त दन्तिदुर्ग ने महाराजाधिराज परमेश्वर भट्टारक की पदवी धारण की। बेगूमारा प्रशस्ति में उल्लिखित अशुद्ध पाठ 'कृत प्रजाबाधे' (जिसने प्रजा को दुख दिया) पर विद्वानों में मतभेद रहा है किन्तु वास्तविक शुद्ध पाठ "अकृत प्रजाबाधे" है यानी उसने प्रजा के दुख को दूर किया।

तस्मिन्दिवं प्रयाते वल्लभराजेऽकृतप्रजाबाधे

पुत्र के अभाव में प्रथम कृष्ण (दंतिदुर्ग के चाचा) को राजसिंहासन मिला। भोर दानपत्र में वर्णन आता है कि प्रथम कृष्ण ने चालुक्य नरेश राहप्प को परास्त किया था। सम्भवतः चालुक्य राजा दंतिदुर्ग से पराजित होकर शान्त थे किन्तु उसकी मृत्यु पश्चात् चालुक्यों ने अपनी शक्ति का विस्तार कर लिया था। उसी के दमन करने के लिए प्रथम कृष्ण ने राहप्प तथा कीर्तिवर्मा दोनों चालुक्य शासकों को पराजित किया। प्रथम कृष्ण ने गंग (मैसूर) बेंगी (चालुक्यों की पूर्वी शाखा) तथा दक्षिण कोंकण पर विजय कर राज्य का विस्तार किया। इस प्रकार कोंकण, कर्नाटक, हैदराबाद प्रदेश (आंध्र) को मिलाकर राष्ट्रकूट राज्य तिगुना हो गया।

प्रथम कृष्ण के बड़े पुत्र को सिंहासन प्राप्त हुआ जिसने (गोविन्द द्वितीय) बेंगी के चालुक्य नरेश विष्णुवर्धन चतुर्थ को परास्त कर अपनी योग्यता का परिचय दिया। गोविन्द का छोटा भाई ध्रुव खानदेश का राज्यपाल था किन्तु उसने गोविन्द के विरुद्ध विद्रोह खड़ा कर दिया। इस रूप से ध्रुव राज्य का स्वामी बन गया। भोर दानपत्र के १८वें तथा १९वें श्लोक में इस दुर्घटना का वर्णन मिलता है। प्रतिशोध के कारण ध्रुव ने सर्व प्रथम गंग तथा पल्लव वंशी शासकों को पराजित किया। इस दिशा में दक्षिण भारत से निश्चित होकर ध्रुव ने उत्तरी भारत के गुर्जर प्रतिहार तथा बंगाल के पाल नरेशों से संघर्ष छेड़ा। यह राष्ट्रकूट वंश का सर्वप्रथम राजा था जिसने उत्तरी भारत की राजनीति में भाग लिया। इस प्रकार प्रतिहार, पाल तथा राष्ट्रकूट संघर्ष का आरम्भ हुआ जिसे त्रिराज्य संघर्ष कहते हैं।

उस युग में गुर्जर प्रतिहारों की शक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। सन् ७८३ ई० में वत्सराज ने कन्नौज पर आक्रमण कर दिया और इन्द्रायुध को परास्त कर अपने अधिकार

में कर लिया। उसी समय बंगाल का शक्तिशाली पाल नरेश धर्मपाल भी सम्पूर्ण उत्तरी भारत में अपने साम्राज्य विस्तार का प्रयास कर रहा था (खालीमपुर ताम्रपत्र)। वह कन्नौज पर अधिकार करना चाहता था। अतः वहाँ के शासक इन्द्रायुध के भ्राता चक्रायुध को सिंहासन पर बैठाने की चेष्टा करने लगा। प्रतिहार तथा पाल नरेश कन्नौज के लिए युद्ध में रत हो गए। अन्त में वत्सराज सफली रहा। इसी बीच ध्रुव भी उत्तरी भारत में पदार्पण किया। वत्सराज से उसे पूर्व शत्रुता थी क्योंकि गोविन्द के विरुद्ध गृह युद्ध में गुर्जर लोगों ने गोविन्द की सहायता की थी। रधनपुर दानपत्र से प्रकट होता है कि वत्सराज ध्रुव के सम्मुख युद्ध में पराजित हुआ अतएव वत्सराज राजस्थान की ओर लौट पड़ा। तत्पश्चात् ध्रुव तथा पाल नरेश धर्मपाल युद्ध करने लगे। संजन ताम्रपत्र लेख में वर्णन मिलता है कि गंगा-यमुना घाटी में ध्रुव ने धर्मपाल (गौडाधिपति) को पराजित किया—

गंगायमुनयोर्मध्ये राज्ञो गौड़स्य नश्यतः
लक्ष्मी लीलरविन्दानि श्वेतच्छत्राणि योऽहरत् (संजन लेख)

सूरत तथा बरोदा लेखों में भी यही उल्लिखित है। ध्रुव ने अपनी शक्ति तथा संगठन से राज्य की ख्याति की वृद्धि की। राजसत्ता का प्रभाव सारे भारत में विस्तृत हो गया। इसी पराकाष्ठा के कारण ध्रुव भारत का महान् विजेता कहा गया है। भोर संग्रहालय लेख में ध्रुव धारावर्ष के विजय स्वरूप निम्न पंक्तियाँ उल्लिखित हैं—

श्रीकांचीपति गंगवंशीकयुता ये मालवेशादयः
प्राज्यानानयतिस्म तान् क्षितिभृतो यः प्रातिराज्यानपि।

जिनसेन के हरिवंश नामक ग्रंथ में भी वर्णन आया है कि ध्रुव (ई० स० ७८३) में दक्षिण का शासक था। इस प्रशस्ति में ध्रुव के लिए परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर की महान् पदवी का उल्लेख है। उसके संगठन, नीति तथा कार्यकुशलता से राष्ट्रकूट वंश उन्नति के शिखर पर पहुँच गया था।

भोर प्रशस्ति के अन्त में दान का वर्णन है जिसमें दानग्राही वेद वेदांग पारग (साङ्गोपांग वेदार्थतत्वविदुषे) कहा गया है। पचीसवें श्लोक में संसार को विद्युत ऐसा चंचल मानकर दान को परमपुण्य समझ कर कार्य करने की वार्ता वर्णित है।

राष्ट्रकूट वंश के संजन ताम्रपत्र में उत्तरी भारत में दूसरे युद्ध का भी वर्णन है जिस समय ध्रुव का पुत्र तृतीय गोविन्द ने आक्रमण किया था। ध्रुव के लौट आने पर बंगाल के राजा धर्मपाल ने कन्नौज पर आक्रमण कर चक्रायुध को सिंहासन दिलाया इसी परिस्थिति में गोविन्द तृतीय ने उत्तरी भारत में हस्तक्षेप किया था। संजन प्रशस्ति के २२वें श्लोक में प्रतिहार नरेश नागभट्ट का नामोल्लेख है जो युद्ध में पराजित हुआ था। तृतीय गोविन्द का अभियान भी सफल रहा। द्वितीय नागभट्ट को परास्त कर तीसरे गोविन्द ने पराजित राजाओं से कर लेकर वापस चला आया। उत्तरी भारत के आक्रमण की अवधि में दक्षिण के गंगवाडी, केरल, चोल, पाण्ड्य तथा कांची नरेशों ने एक विरोधी संघ कायम कर लिया था। संजन ताम्रपत्र लेख में सभी नरेशों का उल्लेख है। गोविन्द तृतीय ने इस संघ को नष्ट कर सभी को पराजित किया। इस प्रकार गोविन्द ने हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक शासकों को पराजित कर राष्ट्रकूट गौरव की अभिवृद्धि की।

ऐसे महान् विजेता का पुत्र प्रथम अमोघवर्ष (संजन ताम्रपत्र में उल्लिखित) अल्प आयु में ही सिंहासनारूढ हुआ था। परन्तु उसका चाचा कर्क उसका संरक्षक था। प्रथम अमोघवर्ष की अल्पायु के कारण समीप के राजा विद्रोही होते गए। गंग नरेश ने स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। चालुक्य नरेश ने राष्ट्रकूट साम्राज्य पर आक्रमण कर दिया। सम्भवतः कर्क ने अपनी शक्ति का परिचय देकर अमोघवर्ष को सम्राट् घोषित किया। नौसारी ताम्रपत्र लेख में (ई० स० ८२१) कर्क की वीरता का परिचय मिलता है। राष्ट्रकूट वंश के कई लेखों में अमोघवर्ष के विजय का उल्लेख है। डा० अलतेकर का मत है कि ई० स० ८६० के समीप अमोघवर्ष ने चालुक्यों पर विजय पाई थी।

संजन ताम्रपत्र में अमोघवर्ष को प्रशंसा के पद्य अधिक हैं। वह स्वयं विद्वान् था और 'कविराजमार्ग' नामक ग्रंथ कन्नड़ भाषा में लिखा था। विद्वानों का आश्रयदाता था। इसी लेख में उसे विक्रमादित्य से भी अधिक दानी कहा गया है, और प्रसंगवश गुप्त वंश की चर्चा की गई है। विक्रमादित्य के सम्बन्ध में कहा गया है कि उसने भाई को मार कर (रामगुप्त को) उसकी पत्नी (रानी) से विवाह कर लिया। पंक्ति सुनिए—

हत्वा भ्रातरमेव राज्यमहरद्देवी च दीनस्ततो
लक्षयकोटि लेखयन्किल कलौ दाता स गुप्तान्वयः।

लेख के अन्त में भूमिदान का वर्णन है। यह दानपत्र श० का० ७९३(= ८७१ ई०) में अंकित किया गया था। दानपत्र के शेषभाग में धर्मश्लोक उल्लिखित हैं। भोर प्रशस्ति तथा संजन ताम्रपत्र में इन श्लोकों की संख्या सबसे अधिक मिलती है।

कदम्ब राजा मयूरशर्मन का चन्द्रवल्ली लेख

मैसूर आ. स. वा. री. १९२९

भाषा—प्राकृत | प्राप्तिस्थान—चन्द्रवल्ली चितलदुर्ग, मैसूर
लिपि—दक्षिण भारतीय ब्राह्मी | तिथि—चौथी सदी

१ कदंबाणं मयूरशम्मण विनिम्मिअं
२ तटाकं (कुट)-तेकूड-अभिर-पल्लव-पुरि-
३ योतिक-सकस्थ (न)-सयिन्धक-पुण्ड-मोकरि (ण) (॥★)

शान्तिवर्मन का तालगुंड स्तम्भलेख

ए० इ० भा० ८ पृ० २४

भाषा—संस्कृत | प्राप्तिस्थान—तलगुण्ड शिभोगा, मैसूर
लिपि—दक्षिण भारतीय ब्राह्मी (बाक्सनुमा) | तिथि—(चौथी सदी)

१ नमश्शिवाय ॥
जयति विश्वदे(व)-स(ं) घात-निचितैकमूर्त्तिस्सनातनः (।★)
स्थानुरिन्दु-रश्मि-विच्छुरित-द्युतिमज्जटाभार-मण्डः ॥१

तमनु भूसुरा द्विज-प्रवरास्सामर्ग्यजुर्वेद-वादिनः (।*)
यत्प्रसादस्त्रायते नित्यं भुवन-त्रयं पाप्मनो भयात् ॥२
अनुपदं सुरेन्द्रतुल्य(व)पु × काकुस्थवर्म्मा विशाल-धीः (।*)
भूपति × कदम्ब-सेनानी-वृहदन्वय-(व्यो)म-चन्द्रमाः

२ अथ वभूव द्विज-कुलं प्रांशु विवरद्गुणेन्द्वंशु-मण्डलम् (।*) ३
त्र्यार्षवर्त्म-हारितीपुत्रमृषिमुख्य-मानव्य-गोत्रजम् ॥४
विविध-यज्ञावभृथ-पुण्याम्बु-नियताभिषेकार्द्र-मूर्द्धजम् (।*)
प्रवचनावगाह-निष्णातं विधिवत्समिद्धाग्नि-सोमपम् ॥ ६
प्रणवपूर्व्व-षड्विधाद्धेयय-नानर्द्यमानान्तरालयम् ॥
अकुश-चातुर्म्मास्य-होमेष्टि-पशु-पार्व्वण-श्राद्ध-पौष्टिकम् ((॥*)६

३ अतिथि-नित्यसंश्रितावसथं सवनत्रयावन्ध्य-नैत्यकम् (।*)
गृह-समीप-देश संरूढ-विकसत्कदम्बैकपादम् ॥७
तदुपचारवत्तदास्य-साधर्म्म्यमस्य तत् (।*)
प्रववृते सतीर्त्थ्य-विप्राणां प्राचुर्य्यतस्तद्विशेषणम् ॥८
एवमागते कदम्ब-कुले श्रीमान्बभूव द्विजोत्तमः ।*)
नामतो मयूरशर्म्मेति श्रु त-शील-शौचाद्यलंकृतः

४ यः प्रयाय पल्लवेन्द्र-पुरीं गुरुणा समं वीरशर्म्मणा (।*)
अधिजिगांसु प्रवचनं निखिलं घटिकां विवेशाशु तर्क्कुकः ॥१०
तत्र पल्लवाश्वसंस्थेन कलहेन तीव्रे ण रोषितः (।*)
कलियुगे (ऽ*)स्मिन्नहो बत क्षत्रात्परिपेलवा विप्रता यतः (॥*) ११
गुरुकुलानि सम्यगाराद्धय शाखामधीत्यापि यत्नतः (?*)
ब्रह्म-सिद्धिर्य्यदि नृपाधीना किमत परं दु × खमित्यतः (।।) १२

५ कुश-समिद्दृषत्स्रु गाज्य-चरु-ग्रहणादि-दक्षेन पाणिना (।*)
उद्ववर्ह दीप्तिमच्छस्त्रं विजिगीषमाणो वसुन्धराम् ॥ १३
यो (ऽ—)न्तपालान्पल्लवेन्द्राणां सहसा विनिर्जित्य संयुगे (।*)
अद्ध्युषास दुर्गमामटवी श्रीपर्व्वत-द्वार-संश्रिताम् ॥ १४
आददे करान्वृहद्वाण-प्रमुखाद्बहून्राजमण्डलात् (।*)
एवमेभि पल्लवेन्द्राणां भ्रुकुटी-समुत्पत्ति-कारणैः ॥१५

६ स्वप्रतिज्ञा-पारणोत्थान-लघुभि × कृतार्थेश्च चेष्टितैः (।*)
भूषणैरिवाबभौ बलवद्यात्रा-समुत्थापनेन च ॥ १६
अभियुयुक्षयागतेषु भृशं काञ्ची-नरेन्द्रेष्वरातिषु (।*)
विषम-(दे)श-प्रयाण-संवेश-रजनीष्वस्कन्द-भूमिषु ॥ १७
प्राप्य सेना-सागरं तेषां प्राहन्बली श्येयवत्सदा (।*)
आपदन्तान्धारयामास भुज-खड्गमात्र-(व्य)पाश्रयः ॥ १८

७ पल्लवेन्द्रा यस्य शक्तिमिमां लब्ध्वा प्रतापान्वयावपि (।*)
नास्य हानिश्श्रेयसोत्युक्त्वा यम्मित्रमेवाशु वव्रिरे ॥ १९

संश्रितस्तदा महीपालानाराध्य युद्धेषु विक्रमैः (।★)
प्राप पट्ट-बन्ध-संपूजां कर-पल्लवै‿पल्लवैर्द्धं ताम् ॥ २०
मङ्गुरोर्म्मि-वलितैर्नुत्यदपरार्णवाम्भ × कृतावधिम् (।★)
प्रेहरान्तामनन्य-संचरण-समय-स्थितां मूमिमेव च ॥ २१

८ विबुध-संघ-मौलि-संमृष्ट-चरणारविन्दष्षडाननः (।★)
यमभिषिक्तवाननुध्याय सेनापतिं मातृभिस्सह ॥ २२
तस्य पुत्र × कङ्कवर्म्मोग्र-समरो(द्ध)र-प्रा(ं)शु-चेष्टितः(।★)
प्रणत-सर्व्व-मण्डलोत्क्रिष्ट-सित-चामरो (द्ध)त-शेखरः ॥ २३
त(त्सु)त × कदम्ब-भूमिवधू-रुचितैकनाथो भगीरथः (।★)
सगर-मुख्य(स्व)यं कदम्बकुल-प्र(च्छन्न)-ज(न्मा) जनाधिपः (॥★) २४

९ अथ नृप-महितस्य तस्य पुत्रः
प्रथित-यशा रघु-पार्थिवः
पृथुरिव पृथिवीम्प्रसह्य यो (ऽ★)रीन्
अकृत पराक्रमतस्स्वव (ं)श-भाज्याम् ॥ २५
प्रतिभय-समरेष्वराति-शस्त्रो-
ल्लिखित-मुखो(ऽ★)भिमुख-द्विषां प्रहर्त्ता (।★)
श्रुतिपथ निपुण × कविः प्रदाता
विविध-कला-कुशल‿प्रजा-प्रियश्च ॥ २६

१० भ्रातास्य चारु-वपुरब्द-गभीर-नादो
मोक्ष-त्रिवर्ग्ग-पटुरन्वय-वत्सलश्च (।★)
भागीरथिर्न्नरपतिर्म्मृगराज-लीलः
काकुस्थ इत्यवनि-मण्डल-घुष्ट-कीर्त्तिः ॥ २७
ज्यायोभिस्सह विग्रहो(ऽ★)तिषु दया सम्यक्प्रजा-पालनम्
दीनाभ्युद्धरणं प्रधान-वसुभिर्म्मुख्यद्विजाभ्यर्हणम्

११ यस्यैतत्कुल-भूषणस्य नृपतेः प्रशोत्तरं भूषणम्
तम्भूपा × खलु नेनिरे सुर-सखं काकुस्थमत्रागतम् ॥ २८
घर्म्माक्रान्ता इव मृगगणा वृक्षर (।★) जि प्रविश्य
च्छाया-सेवा-मृदित-मनसो निर्वृत्तिं प्राप्नुवन्ति (।★)
तद्वज्ज्यायो-विहत-गतयो बान्धवास्सानुबन्धाः
प्रापुश्शर्म्मान्यथित-मनसो यस्य भू(मिं) प्रविश्य ॥ २९

१२ नानाविध-द्रविण-सार-समुच्चयेषु
मत्त-द्विपेन्द्र-मद-वासित-गोपुरेषु (।★)
संगीत-वल्गु-निनदेषु गृहेषु यस्य
लक्ष्म्यङ्गना धृतिमती सुचिरं च रेमे ॥ ३०
गुप्तादि-पार्त्थिव-कुलाम्बुरुह-स्थलानि
स्नेहादर-प्रणय-सम्भ्रम-केसराणि (।★)

श्रीमन्त्यनेक-नृपषट्पद-सेवितानि
यो (ऽ★) बोधयद्दुहितृ-दीधितिभिर्नृपार्क्कः ।। ३१

१३ यन्दैवसम्पन्नमदीनचेष्टं
शक्तित्रयोपेतमथासनस्थम् (।★)
शेषैर्गुणैः पञ्चभिरप्यसाद्ध्या-
स्सामन्त-चूडामणयः प्रणेमु ।। ३२
सयिह भगवतो भवस्यादिदेवस्य सिद्धयालये सिद्ध-गान्धर्व्व-रक्षो-गणैस्सेविते
विविध-नियम-होम-दीक्षा परैर्ब्रा (ह्म)णै(ः★) स्नातकै स्तूयमाने सदा मन्त्र-
वादैश्शुभैः (।★)

१४ भुक्तिभिरवणीश्वरैरात्म-निश्श्रेयसं प्रेप्सुभिस्सातकर्ण्यादिभिश्श्रद्धयाभ्यार्च्चिते
इदमुरुसलिलोपयोगाश्रयं भूपति = कारयामास काकुस्थवर्म्मा तडाकम्म(हत्)
(।।★) ३३
तस्यौरसस्य तनय(स्य) विशाल-कीर्त्तेः
(प)ट्ट-त्रयार्प्पण-विरा(जित)-चारुमूर्त्तेः (।★)

प्रभावती गुप्त का पूना ताम्रपत्र

ए. इ. भा. १५

भाषा-संस्कृत लिपि-मिश्रित गुप्त तथा दक्षिण भारतीय कील सहित अक्षर

प्राप्ति-स्थान पूना महाराष्ट्र
तिथि चौथी सदी

a वाकाटक-ललामस्य
b (क्र) म-प्राप्त-नृपश्रिय [:★] (।)
c जनन्या युवराजस्य
d शासनं रिपु-शास (न) [:★] (।।¹)

१ सिद्धम् (।।★) जितं भगवता (।★) स्वस्ति नान्दिवर्द्धनादासीद्गुप्तादि-रा (जो) (म) ह (राज)-
२ श्रीघटोत्कचस्तस्य सत्पुत्रो महाराज-श्रीचन्द्रगुप्तस्तस्य सत्पुत्रो-
३ (ऽ★) नेकाश्वमेध-याजी लिच्छवि-दौहित्रो महादेव्यां कुमारदेव्यामुत्पन्नो
४ महाराजाधिराज-श्रीसमुद्रगुप्तस्तत्पुत्रस्तत्पाद-परिगृहीतः
५ पृथिव्यामप्रतिरथस्सर्व-राजोच्छेत्ता चतुरुदधि-सलिलस्वादित-
६ यशा नेक-गो-हिरण्य-कोटी-सहस्र-प्रद :परम-भागवतो महारा-
७ जाधिराज-श्रीचन्द्रगुप्तस्तस्य दुहिता धारण-सगोत्रा नाग-कुल-सम्भू
८ ताया (:★) श्री-महादेव्या (:★) कुबेरनागायामुत्पन्नोभयःकुलालङ्कार-भूता-
त्यन्त-भगवद्भक्ता
९ वाकाटकानां महाराज-श्रीरुद्रसेनस्याग्रमहिषी युवराज-
१० श्री दिवाकरसेन-जननी श्री-प्रभावतिगुप्ता सुप्रतिष्ठाहारे
११ विलवणकस्य पूर्व-पार्श्वे शीर्षग्रामस्य दक्षिण-पार्श्वे कदापिञ्जनस्यापर-पार्श्वे

१२ सिविविवरकस्योत्तर-पार्श्व उक्कणग्रामे ब्राह्मणाद्यान्ग्राम-कुटुम्बिन—कुशल-
१३ मुक्त्वा समाज्ञापयति (।*) विदितमस्तु वो यथैव ग्रामो (ऽ*)स्माभि स्व-पुण्या-प्यायना (र्थं)
१४ कार्तिक-शुक्ल-द्वादश्या (ं*) भगवत्पाद-मूले निवेद्य भगवद्भुक्ताचार्य्यु-चनालस्वामिने (ऽ*) पूर्व्व-
१५ दत्या उदक-पूर्व्वमतिसृष्टो यतो भवाद्भिरुचितमर्य्यादया सर्व्वाज्ञा × कर्त्तव्या (:*) पूर्व्व-
१६ राज्जानुमता (ं) श्चात्र चातुर्विद्याग्रगार-परीहारान्वितरामस्तद्यथाभट-छत्र -प्रावेश्य:
१ प्रशस्ति के मुहर की पंक्तियां
१७ अ-चारासन-चर्म्माङ्गार-किलण्व-क्रेणि-खानक (:) अ-पा (र*) म्पर (:*) अ-(पशु) मेध्य: अ-पुष्प-क्षीरसन्दोह:
१८ स-निधिस्सोपनिधिस्स-कॢप्तोपकॢप्त: (।*) नदेष भविष्यद्राजिभिस्संरक्षितव्य (:*) परिवर्द्ध-
१९ यितव्यश्च (।*) यश्चास्मच्चासनमगणयमानस्स्वल्पामप्यत्राबाधां कुर्य्यात्कारयेत वा
२० तस्य ब्राह्मणरावेदितस्य स-दण्ड-निग्रहं कुर्य्याम (।*) व्यास--गितश्चात्र श्लोको भवति (।*)
२१ स्व-दत्ताम्पर-दत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां (।) गवा (ं*) सत-सहस्रस्य हन्तुर्हरति दुष्कृतम् (।*)२
२२ संवत्सरे च त्रयोवशमे लिखितमिद (ं*) शासनम (।*) चक्रदासेनोत्कट्टितम् (।।*)
२९ (ति) पार्थिव (।:) ।। स्वदाना (त्) फलमानन्त्य
परद (त्तानुपालन) ।।
३० ....
३१ :—(प्र) यच्छति ।।

पुलकेशी द्वितीय का अपह्रोल लेख

ए. इ. भा. ६ पृ. ३

भाषा-संस्कृत लिपि-दक्षिण भारतीय बाक्सनुमा

प्राप्ति-स्थान बीजापुर (मैसूर) तिथि-श—का० ५५६-६३५ ई०

जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो वीतजरामरणजन्मनो यस्य ।
ज्ञानसमुद्रान्तर्गतमाखिलं जगदन्तरोपमिव ।। १ ।।
तदनु चिरमपरिमेय श्चुलुक्यकुलविपुलजलनिधिर्जयति ।
पृथिवीमौलिललाम्नां य: प्रभव: पुरुषरत्नानाम् ।। २ ।।
शूरेविदुषु च विभजन्दानं मानं च युगपदेकत्र ।
अविहितयाथासंख्यो जयति च सत्याश्रय: सुचिरम् ।। ३ ।।
पृथिवीवल्लभशब्दो येषामन्वर्थतां चिरं यात: ।
तद्वंशेषु जिगीषुषु तेषु बहुष्वप्यतीतेषु ।। ४ ।।

नानाहेतिशताभिघातपतित भ्रान्ताश्वपत्तिद्विपे
नृत्यद्भीमकबन्धखड्गकिरणज्वाला सहस्रे रणे ।
लक्ष्मीर्भावितचापलापि च कृता शौर्येण येनात्मसा—
द्राजासीज्जयसिंहवल्लभ इति ख्यातश्चलुक्यान्वयः ॥ ५ ॥
तदात्मजोऽभूद्रणरागनामा
दिव्यानुभावो जगदेकनाथः ।
अमानुषत्वं किल यस्य लोकः
सुप्तस्य जानाति वपुः प्रकर्षात् ॥ ६ ॥
तस्याभवत्तनूजः पोलेकेशी यः श्रितेन्दुकान्तिरपि ।
श्रीवल्लभोप्ययासीद्वातापिपुरीवधूवरताम् ॥ ७ ॥
यस्त्रिवर्गपदवीमलं क्षितौ
नानुगन्तुमधुनापि राजकम् ।
भूश्च येन हयमेधयाजिना
प्रापितावभृथमज्जनं बभौ ॥ ८ ॥
नलमौर्यकदम्बकालरात्रि—
स्तनयस्तस्य बभूव कीर्तिवर्मा ।
परदारनिवृत्तचित्तवृत्ते—
रपि धीर्यस्य रिपुश्रियानुकृष्टा ॥ ९ ॥
रणपराक्रमलब्धजयश्रिया
सपदि येन विरुग्णमशेषतः ।
नृपतिगन्धगजेन महौजसा
पृथुकदम्बकदम्बकदम्बकम् ॥ १० ॥
तस्मिन्सुरेश्वरविभूतिगताभिलाषे
राजाभवत्तदनुजः किल मङ्गलेशः ।
यः पूर्वपश्चिमसमुद्रतटोषिताश्व—
सेनारजः पटविनिर्मितदिग्वितानः ॥ ११ ॥
स्फुरन्मयूखैरसिदीपिकाशतै—
र्व्युदस्य मातङ्गतमिस्रसञ्चयम् ।
अवाप्तवान्यो रणरङ्गमन्दिरे
कटच्छुरि श्रीललनापरिग्रहम् ॥ १२ ॥
पुनरपिच जघृक्षोस्सैन्यमाक्रान्तसालं
रुचिरबहुपताकं रेवतीद्वीपमाशु ।
सपदि महदुदन्वत्तोयसंक्रान्तबिम्बं
वरुणबलमिवाभूदागतं यस्य वाचा ॥ १३ ॥
तस्याग्रजस्य तनये नहुषानुभावे
लक्ष्म्या किलाभिलषिते पुलिकेशी नाम्नि ।

सासूयमात्मनि भवन्तमतः पितृव्यं
    ज्ञात्वापरुद्धचरितव्यवसायबुद्धौ ॥ १४ ॥
स यदुपचितमन्त्रोत्साहशक्तिप्रयोग—
    क्षपितबलविशेषो मङ्गलेशः समन्तात् ।
स्वतनयगतराज्यारम्भयत्नेन सार्द्धं
    निजमतनु च राज्यं जीवितं चोज्झति स्म ॥ १४ ॥

तावत्तच्छत्रभङ्गो जगदखिलमरात्यन्धकारोपरुद्धं
    यस्यासह्यप्रतापद्युतिततिभिरिवाक्रान्तमासीत्प्रभातम् ।
नृत्यद्विद्युत्पताकैः प्रजविनि मरुति क्षुण्णपर्यन्त भागै—
    र्गर्जद्भिर्वारिवाहैरलिकुलमलिनं व्योम यातं कदा वा ॥ १६ ॥
लब्ध्वा कालं भुवमुपगते जेतुमाप्यायिकाख्ये
    गोविन्दे च द्विरदनिकरैरुत्तरां भैमरथ्याः ।
यस्यानीकैर्युधि भयरसज्ञत्वमेकः प्रयात-
स्तत्रावाप्तं फलमुपकृतस्यापरेणापि सद्यः ॥ १७ ॥
वरदातुङ्गरङ्गतरङ्गविलसद्धंसावलीमेखलां
    वनवासीमवमृद्नतः सुरपुरप्रस्पर्धिनी सम्पदा ।
महता यस्य बलार्णवेन परितः सञ्छदितोर्वीतलं
    स्थलदुर्गं जलदुर्गतामिव गतं तत्तत्क्षणे पश्यताम् ॥ १६ ॥
गङ्गालुपेन्द्रा व्यसनानि सप्त
    हित्वापुरोपार्जितसम्पदोऽपि ।
यस्यानुभावोपनताः सदास—
    न्नासन्नसेवामृतपानसौण्डाः ॥ १९ ॥
कोङ्कणेषु यदादिष्टचण्डदण्डाम्बुवीचिभिः
    उदस्तास्तरसा मौर्यपल्लवाम्बुसमृद्धयः ॥ २० ॥
अपर जलधेर्लक्ष्मीं यस्मिन्पुरी पुरभित्प्रभे
    मदगजघटाकारैर्नावां शतैरवमृन्दति ।
जलदपटलानीकाकीर्णन्नवोत्पलमेचकं
    जलनिधिरिव व्योम व्योम्नः समाऽभवदम्बुधिः ॥ २१ ॥
प्रतापोपनता यस्य लाटकालवगुर्जराः ।
    दण्डोपनतसामन्तचर्याचर्या इवाभवन् ॥ २२ ॥
अपरिमितविभूतिस्फीतसामन्त सेना—
मुकुटमणिमयूखाक्रान्तपादारविन्दः ॥
युधिपतितगजेन्द्रानीक बीभत्सभूतो
    भयविगलितहर्षो येन चाकारि हर्षः ॥ २३ ॥
भुवगुरुभिरनीकैः शासती यस्य रेवा—
    विविधपुलिनशोभावन्ध्यविन्ध्योपकण्ठः ।

अधिकतरमराजत्स्वेन तेजोमहिम्ना
शिखरिभिरिभवर्ज्यो वर्ष्मणा स्पर्द्धयेव ॥ २४ ॥
विधिवदुपचिताभिः शक्तिभिः शक्रकल्प—
स्तिसृभिरपि गुणौघैं स्वैश्च माहाकुलाद्यैः ।
अगमदधिपतित्वं यो महाराष्ट्रकाणां
नवनवतिसहस्रग्रामभाजां त्रयाणाम् ॥ २५ ॥
गृहिणां स्वगुणैस्त्रिवर्गतुङ्गा
विहितान्यक्षितिपालमानभङ्गाः ।
अभवन्नुपजातभीतिलिङ्गा
यदनीकेन सकोसलाः क.लिङ्गाः ॥ २६ ॥
पिष्टं पिष्टापुरं येन जातं दुर्गमदुर्गमम् ।
चित्रं यस्य कलेर्वृत्तं जातं दुर्गमदुर्गमम् ॥ २७ ॥
सन्नद्धवारणघटास्थगितान्तरालं
नानायुधक्षतनखक्षतजाङ्गरागम् ।
आसीज्जलं यदवमर्दितमभ्रगर्भं
कौनालमम्बरामिवोर्ज्जितसान्ध्यरागम् ॥ २८ ॥
उद्धूतामलचामरध्वजशतच्छात्रान्धकारैर्बलैः
शौर्योत्साहरसोद्धतारिमथनैर्मौलादिभिः षड्विधैः ।
आक्रान्तात्मबलोन्नतिं बलरजः सञ्छन्नकाञ्चीपुर—
प्राकारान्तरितप्रतापमकरोद्यः पल्लवानां पतिम् ॥ २९ ॥

कावेरी द्रुतशफरीविलोलनेत्रा
चोलानां सपदि जयोद्यतस्य यस्य ।
प्रश्च्योतन्मदगजसेतुरुद्धनीरा
संस्पर्श परिहरित स्म रत्नराशेः ॥ ३० ।
चोलकेरलपाण्ड्यानां योऽभूत्तत्र महद्धपे ।
पल्लवानीकनोहारतुहिनेतरदोधितिः ॥ ३१ ॥
उत्साहप्रभुमन्त्रशक्तिसहिते यस्मिन्समस्ता दिशो
जित्वा भूमिपतीन्विसृज्य महितानाराध्य देवद्विजान् ।
वातापीं नगरीं प्रविश्य नगरीमेकामिवोर्वीमिमां
चञ्चन्नीरधिनीलनीरपरिखां सत्याश्रये शासति ॥ ३२ ॥
त्रिंशत्सु त्रिसहस्रेषुभारतादाहवादितः ।
सप्ताब्दशतयुक्तेषु गतेष्वब्देषु पञ्चसु ॥ ३३ ॥
पञ्चाशत्सु कलौ काले षट्सु पञ्चशतासु च ।
समासु समतीतासु शकानामपि भूभुजाम् ॥ ३४ ॥
तस्याम्बुधित्रयनिवारितशासनस्य
सत्याश्रयस्य परमाप्तवता प्रसादम् ।

शैलं जिनेन्द्रभवनं भवनं महिम्नां
निर्मापितं मतिमता रविकीर्तिनेदम् ।। ३५ ।।
प्रशस्तेर्वसतेश्चास्या जिनस्य त्रिजगद्गुरोः ।
कर्ता कारयिता चापि रविकीर्तिः कृती स्वयम् ।। ३६ ।।
येनायोजि नवेश्मस्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म ।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रित—
कालीदासभारविकीर्तिः ।। ३७ ।।

धरसेन द्वितीय का बलभी ताम्रपत्र

ए. का. इ. हृ. भा. ३

भाषा-संस्कृति । लिपि-ब्राह्मी — प्राप्ति-स्थान-बलभी (काठियावाड़)
छठी सदी — तिथि गु. स. २६९-५८९ई.

स्वस्ति । विजयस्कन्धावाराद्भद्रपत्तन वासकालप्रसभप्रण चतामित्राणां मैत्रकाणामतुलसपत्न मण्डला भोगसंसक्तसंप्रहारशतलब्धप्रतापः प्रतापोपनतदान-मानार्जवोपार्जितानुरागानुरक्त मौल-भृत श्रेणि बलावाप्तराज्य-श्री परममाहेश्वरः
श्रीसेनापतिभटार्कः

तस्य सुतस्तत्पादरजोरुणावनपवित्री कृतशिराः शिरोवनतशत्रुचुडामणिप्रभाविच्छुरितपा-दनखपङ्क्तिदीधितिर्दीनानाथकृपणजनोपजीव्यमानविभवः परममाहेश्वरः श्रीसेनापति धरसेनः

तस्यानुजस्तत्पादप्रणामप्रशस्ततरविमलमणिर्मन्वादिप्रंणीतविधिविधानधर्मा—धर्मराज इव विनयव्यवस्थापद्धतिरखिलभुवनमण्डलाभोगैकस्वामिना परमस्वामिना स्वयमुपहितराज्याभिषेको महाविश्राणनावपूतराजश्रीः परममाहेश्वरो महाराज
श्रीद्रोणसिंहः,

सिंह इव तस्यानुजः स्वभुजबलपराक्रमेण परगजघटानीकानामेकविजयी शरणैषिणां शरण-मवबोद्धा शास्त्रार्थतत्त्वानां कल्पतरुरिव सुहृत्प्रणयिनां यथाभिलाषितकामफलभोगदः परम-भागवतो महाराज श्रीध्रुवसेनः,

तस्यानुजस्तच्चरविन्दप्रणतिविधौताशेषकल्मणः सुविशुद्धस्वचरितोदकप्रक्षालिताशेषकलि-कलङ्कः प्रसभनिर्जितारातिपक्षप्रथितमहिमापरमादित्यभक्तः श्रीमहा-राजधरभटः,

तस्य सुतस्तत्पादसपर्यावाप्तपुण्योदयः शैशवात्प्रभृति खड्गद्वितीयबाहुरेव समदपरगजघटा-स्फोटनप्रकाशितसत्वनिकषस्तत्प्रभावप्रणतारातिचूडारत्नप्रभासंसक्तसव्यपादनखपङ्क्तिदीधितिः सकलस्मृतिप्रणीतमार्गसम्यक्परिपालनप्रजाहृदयरञ्जनादन्वर्थराजशब्दो रूपकान्तिस्थैर्यधैर्यबुद्धि-सम्पद्भिः स्मरशशाङ्काद्रिराजोदधित्रिदशगुरुधनेशानतिशयानः शरणागताभयप्रदानपरतया तृणा-वदपास्तशेषस्वकार्यफलः प्रार्थनाधिकार्यप्रदानन्दितविद्वस्सुहृत्प्रणयिहृदयः पादचारी व सकल-भुवनमण्डलाभोगप्रमोदः परममाहेश्वरो महाराज श्रीगुहसेनः,

तस्य सुतस्तत्पादनखमयूखसन्तानविसृतजाह्नवी—जलौघप्रक्षालिताशेषकल्मषः प्रणयिशत-सहस्रोपजीव्यमानभोगसम्पद्रपलोभादिवाश्रितः सरभसमाभिगामिकैर्गुणैः सहेजशक्ति शिक्षाविशेष-

विस्मापिताखिलधनुर्द्धरः प्रथमनरपतिसमतिसृष्टानामनुपालयिता धर्मदायानामपाकर्त्ता प्रजोपघातकारिणामुपप्लवानां दर्शयिता श्रीसरस्वत्योरेकाधिवासस्य संहताराातिपक्षलक्ष्मीपरिभोगदक्षविक्रमो विक्रमोपसंप्राप्तविमलपार्थिवश्रीः परममाहेश्वरो महासामन्तमहाराजश्रीधरसेनः कुशली सर्वानेव स्वानायुक्तकद्राङ्गिकमहत्तरचाटभट शौल्किक ध्रुवाधिकरणिकविषयपतिराजस्थानीयोपरिककुमारामात्यहस्त्यश्वारोहादीनन्यांश्च यथासंबध्यमानकान्समाज्ञपयति ।

अस्तु वस्संविदितं यथा मया मातापित्रोः पुण्याप्यायनायात्मनश्चैहिकामुष्मिकयथाभिलषितफलावाप्तये वलभ्यामाचार्यभदन्तस्थिरमतिकारित श्रीबप्पपादीयविहारे भगवता बुद्धानां पुष्पधूपगन्धदीपतैलादिक्रियोत्सर्पणार्थं नानादिगभ्यागतार्यभिक्षुसङ्घस्य च चीवरपिण्डपातग्लानभैषज्यार्थं विहारस्य च खण्डस्फुटितविशीर्णतिसंस्करणार्थं हस्तवप्राहरणयां महेश्वरदासेनकग्रामोधाराखेरस्थल्यां च देवभद्रिपल्लिकाग्रामः सोद्रङ्गौ सोपरिकरौ सवातभूतप्रत्यायौ सधान्यभागभोगहिरण्यादेयौ सोत्पद्यमानविष्टिकौ सदशापराधौ समस्तराजकीयानामहस्तप्रक्षेपणीयौ भूमिच्छिद्रन्यायेनाचन्द्रार्कार्णवसरिक्षितिस्थितिपर्वत समकालीनौ उदकातिसर्गेण देवदायौ निसृष्टौ । यत उचितया देवविहारस्थित्या भुञ्जतः कृषतः कर्षयतः प्रतिदिशतो वा न कैश्चिद्व्याघाते वर्तितव्यो आगामिभद्रनृपतिभिरस्मद्वंशजैरन्यैर्वानित्यान्यैश्वर्याण्यस्थिरं मानुष्यं च भूमिदानफलमवगच्छद्भिरयमस्मद्दायोऽनुमन्तव्यः परिपालयितव्यश्चा यश्चैनमाच्छिद्यादाच्छिद्यमानं वानुमोदेत स पञ्चभिर्महापातकैस्सोपपातकैः संयुक्तः स्यादित्युक्तं च भगवता वेदव्यासेन व्यासेन ।

षष्टिं वर्षसहस्राणि स्वर्गे मोदति भूमिदः ।
आच्छेत्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् ॥ १ ॥

बहुभिर्वसुधा भुक्ता राजभिः सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥ ३ ॥

अतोदकेष्वरण्येषु शुष्ककोटरवासिनः ।
कृष्णसर्पा हि जायन्ते धर्मदायापहारकाः ॥ ३ ॥

स्वदत्तां परदत्ता वा यो हरेत वसुन्धरां ।
गवां शतसहस्रस्य हन्तुः प्राप्नोति किल्बिषम् ॥ ४ ॥

यानीह दारिद्र्यभयान्नरेन्द्रै—
धर्नानि धर्मायतनीकृतानि ।
निर्माल्यवान्तप्रतिमानि तानि
को नाम साधुः पुनराददीत ॥ ५ ॥

लक्ष्मीनिकेतं यदपाश्रयेण
प्राप्तोनु कोऽभिमनंनृपार्थ ।
तान्येव पुण्यानि विवर्धयेथा
न हापनीयो ह्युपकारिपक्षः ॥ ६ ॥

स्वहस्तो मम महाराजश्रीधरसेनस्य । दूतकः सामन्तशीलादित्यः । लिखितं सन्धिविग्रहाधिकारणाधिकृतदिविरपतिस्कन्दभटेन । सं० २६९ चैत्र ब० २ ।

ध्रुवका भोर संग्रहालय लेख

संदर्भ—ए० इ० भा० २२ सं० २८

भाषा–संस्कृत | प्राप्तिस्थान–अज्ञात

लिपि–नागरी सदृश | तिथि—श० क० ७०२ = ७८० ई०

१ ओम्
स बोध्याद्वेघसा धाम यं (यन्) नाभि कमलं कृतं (तम्)
हरश्च यस्यका (कां) तेंदुकलया कमलं कृतं (तम्)
आसिद्वि (द्वि) प

२ ति (त्ति) मिरमुद्यतमण्डलाग्रो द्रुव (ध्व) स्तिं नयनं (यन्न) भिमुखो रणशर्व्वरीषु (।)
भूपशु (पद्दशु) चिर्विधुरिवास्त (प्त) दिगंतकीर्ति–

३ र्ग्गोविंदराज इति राजसु राजसिंघ (हः) ॥ २ ॥
दृष्ट्वा चमून (म) भिमुखों सुभट्टाट (टाट्ट) हासामुना (न्ना) मितं सपदि येन रणे–

४ षु नित्यं (।) दष्टाधरेण दधता भ्रुकुटी ललाटे खड्गं कुलश्च हृदयञ्च निजश्च श (स)
त्वं (त्वम्) ॥ ३ ॥
खड्ग कराग्रां (ग्रा) न्मुखत–

५ श्च शोभां मानो मनस्तस (स्स) मवेष यस्य (।) महाह्वे नाम निशम्य सद्यस्त्रयं रिपूणां
विगलत्यकाण्डे ॥ ४ ॥ त-

६ स्यात्मजो जगति विश्रुतदीर्घकीर्तिरार्त्तिहारिहरि-विक्रम (धाम) धारी (:)
भूपस्त्रिविष्टपकृता (नृपा) नुकृति (तिः) कृत-

७ ज्ञः श्रीकर्क्कराज इति शोत्रमणिर्वि (र्ब) भूव ॥ ५ ॥
तस्यो (स्य) प्राभिन (प्रभिन्न)-ककट (कण्ट) च्य (च्यु) तदानि (न) दंतिदंतप्राहाररुचि-

८ रोलि (ल्ल) खितंश (तांस) पौठ (:) क्षितौ क्षपितशत्रुरभूत (त्त) नूजः सद्राष्ट्रकुटकन-
काद्र (द्र) रिवेंद्रराज (:) ॥ ६ ॥

९ तस्योपार्जितमहसस्तनयश्चतुरुदधिवलयमालिन्या (:)
भोक्ता भुवः शतक्रतुसदृशः श्रीद (दं)-

१० तिदुर्गराजोभूत् ॥ ७ ॥ काञ्चीशकेरलनराधिपचोर (ल) पाण्ड्यश्रीहर्षवज्रटविभेद-
विधानदक्ष (क्षम्) (।)
कर्ण्णाटकं प (ब) लमंचित्यम-

११ जेयमन्यै (मन्यै) भृ (र्भृ) त्यै (त्यैः) कियद्भिरपि यः सहसा जिगाय: (य) ॥ ८ ॥ आ
(अ) भ्रविभं-गगृहीतनिशातशस्त्रं (स्त्र) मश्रांतमप्रतिह-

१२ ताज्ञमपेतयत्नं (त्नम्' (।) यो वल (ल्ल) भं श (स) पदि दण्ड (ब) लेन जित्वा राजा-
धिराजप (र) मेश्वरतामवाप (॥ ९ ॥ आ सेतोर्व्विपुलो-

१३ पलावलिलस (ल्लो) लोर्म्मिमालाजलादाप्रालेयकलंकिता-
मलंशिलाजालात्तुषाराचलात् (।) आ पूर्वाप-

१४ रवारिराशिपुलिना (न) प्रांतप्रसिघा (द्धा) वर्धेयेनेयं जगति (ती) श्व (स्व) विक्रमव (ब) लेनैकातपत्रीकृतं (ता) ५१० ।। तस्मिदि (स्मिन्दि)-

१५ वं प्रयाते वल्लभराजे क्षतप्रजावा (बा) घः
श्रीकर्क्कराजसुनुर्म्महीपतिः **कृष्णराजोभूत** (।। ११ ।।
यस्य

१६ स्वभुजपराक्रमनिशे (श्शे) षोच्छा (त्सा) दितारिदिक्चक्रं (।)
कृष्णस्येवाकृष्णं चरितं श्रृ (श्री) कृष्णराजस्य ।। १२ ।।
शुभतुंगतुंगतुरगप्र-

१७ वृद्धरेणु (णू) र्द्धं (र्ध्वं) रुध्य (द्ध) रविकिरणं (णम्)
ग्रीष्मेपि नभो निखिलं प्रावृट्कालायते स्पष्टं (ष्टम्) ।। १३ ।। दीनानाथप्रणयिषु यथेष्ट-चेष्टं स-

१८ मोहितमजश्र (स्तम्) तत्क्षणमकालवर्ष (र्षं) वर्षति सर्व्वार्तिनिर्व्वपणं (णम्) ।। १४ ।।
राहप्पमात्मभुजजातब (ब) लावलेपभाजौ विजि-

१९ त्य निशिताश्रि (सि) लताप्रर्हा (हा) रैः (।) पालिद्ध (ध्व) जावलिशुभामचिरेण यो हि राजाधिराजपरमेश्वरतां तता (न ।। १५ ।।) क्रोधादुत्खातख-

२० ड्गप्रश्रृ (सृ) तरूचिचयैः (यैं) र्भासमानं समंतादाजादु (वु) द्वृत (त्त) वैरिप्रकटगजगज-घटाटोपसंक्षो-
(भ) दक्षं (क्षम्) (।) शौर्यं त्यक्ता (त्वा) वि-

२१ गर्गो भयचकित (व) पु (:) क्वापि दृष्ट्वैव सद्य (द्यो) दर्प्पाध्मातारिचक्रक्षयकरमगमद्यस्य दोर्द्दण्डरु (रू) पं (पम्) (।। १९ ।। पाता यश्चतु-

२२ रं (बु) राशिरशनालंकारभाजो भुवः स्तैय (वस्त्रय्या) श्वापि कृता (त) द्विजामरगुरुः (रु) प्राज्याज्यपूजादरो (रः) (।) दाता मान-भृदग्रणीर्ग्गुणव-

२३ तां योसौश्रृ (श्रि) यो वल्लभो भोक्तुं स्वर्ग्गफलानि भूरितपसा स्थानं जगामामरं (रम्) (।। १७ ।।) येन श्वेतातपत्रप्रहतरवि-

२४ करव्राततापात्सलीलं (ज) ग्मे नाशो (सो) रधूलोधवलितशिरसा वल्लभाख्यं सदाजा (।।) **श्री (गो) विंदराजो** जितजग-

२५ दहितस्त्रैणवैधव्यहेतुः (तु) स्तस्यासो (त्) सूनुरेकः क्षणरणदलितारातिमा (म) त्तेभकुंभः ।। १८ ।। तस्यानुज(ः) **श्री ध्रुव-**

२६ **राजनामा** महानुभावोप्रहतप्रताप(ः) प्रसाधिताशेषनरेंद्रचक्रं (क्रः) क्रमेण वा (बा) लार्क्क-वपू (पु) र्व्वं (र्बं) भूव ।। १९ ।। ज्जा (जा) ते यत्र च राष्ट्रकूटति-

२७ लके सद्भूपचूडामणौ, गुर्व्वी तुष्टिरथाखिलस्य जगतः सुस्वामिनि प्रत्यहं (हम्) (।) स्व (स) त्यं श (स) त्यमिति प्रसा (शा) सति स-

२८ ति क्षमामात्स (स) मुद्रांतिकामासीच (बद्ध) न्मंपरे गुणामृतनिधौ सत्यव्रताधिष्ठि (ष्ठि) ते ।। २० ।। श्री काञ्चीपतिगांगवे (बें) गिकयुता
ये माल (बे) शावयः प्राज्यानानयति स्म ता (तान्) क्षितिभृतो यः प्रातिराज्यान्तति (प) (।) माणिक्याभरणानि हेमनिचयं

३० यस्य प्रवद्धोपरि स्वं (स्वं) येन प्रति तं तथापि न कृतं चेतोन्यथा भ्रात (रम्) ।। ३१ ।। सामाद्यैरपि वल्लभो न हि यदा सं (धिं) व्य-

३१ धातं तदा (चं तदा) चा (भ्रा) तुर्द्दंत (त्त) रणो विजित्य तरसा पश्चात (त्त) तो भूपवे (तीन्) (।) प्राच्योदीच्यपराच्ययाम्यविल्ल (ल) सत्पलिघ्वजै-

३२ र्भूषितं चिह्नैर्यः परमेश्वरत्वमखिलं लेभे महेन्तो (न्द्रो) विभुः ।। २२ ।। शशधरकरनिकरनिभं यस्य यशः सुरन-

३३ गाग्रसानुस्थै (ः ।) परिगीयतेनुरक्तैर्व्विद्याधरसुंदरी (नि) व हैं (ः ।। २३ ।।) हृष्टोन्बहं योधिजनाय सव्वं सर्व्वस्वसानं दितवं (बं)-

३४ धुवर्गा (: ।) प्रादात्पुरुष्टो हरति स्म वेग (गात्) प्राणा (न्) यमस्याधि (पि) नितांतवियं (वीर्यः) ।। २४ ।। तेनेदमनिलविद्युत (च्च) च्चलमव-

३५ लोक्य जीवितमसांर (रम्) (।) क्षितिदान-परमपुण्यं प्रवर्त्तितो ब्र (ब्र) ह्मदायोयं (यम्) ।। २५ ।। स च परमभट्टारकमहा-

३६ राजाधिराजपरमेश्वरपरमभट्टारकश्रीमद (द्) अकालवर्षदेवपादानुध्यातपरमभट्टारक-

३७ महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीधारावर्षश्रीध्रुवराजनाम (।) श्री निरुपमदेव (:) कुशली सर्वानेव य-

३८ था (सं) ब (ब) ध्यमानकं (कान्) राष्ट्रपतिविषयपतिग्रामकूटायुक्तका (क) नियुक्तकाधिकारिकमहत्तरादो (न्) समा-

३९ दिशत्यस्तु वः संविदितं यथा श्रीनीरानदीसंगमशमावासितेन मया मातापित्रोरात्मन श्चैहिका-

४० मुस्मि (ष्मि) कपुराययशोभिवृध (द्ध) ये करहाडवास्तव्यतच्चातुर्व्विद्यसामान्यगार्ग्यसगोत्रब (ब)—

४१ ह्वृच (ह्वृच) सब्र (ब) ह्मचारिणो दुग्गा (र्ग) भटपुत्राय सांगोपांगवेदार्थतत्वविदुषे वासुदेव-भट्टा

४२ य श्रीमालविषयांतर्गतलघुवि (वि) गनामा ग्रामः तस्य चाघट्ट (ट) नाणि (।) पूर्व्वतः श्रीमालपतन (त्तनं) द-

४३ क्षिणात (तो) लमणगिरि (:) पश्चिमतः वृ (वृ) हद्विंगकग्रामः उत्तरतः नीरा नाम नदी (।) एवमयं चतुराघा-

४४ टनोपलक्षितो ग्राम (:) सोद्रंग (:) स (सो) परी (रि) करस (रस) दण्डदशापराधस (स्स) भूतोपा (तवा) तप्रत्यायसो (स्सो) त्पद्यमा-

४५ नविष्टिक (:) सधान्यहिरं (र) न्या (ण्या) देयो अ (योऽ) चारभटप्रवेश्यः सर्व्वराजकीयानामहस्तप्रक्षेपणी-

४६ य आचंद्राक्कर्ण्णवक्षितिसरित्पर्व्वतसमकालीन (:) पू (पु) त्रपौत्रान्वयक्रमोपभोग्य (ग्यः) पूर्व्वप्रत्तदे-
४७ वत्रा (ब्र) ह्मदायरहितोभ्यंतरसिध्या (द्धचा) भूमिच्छिद्रन्यायेन शकनृपकालातीतसंवत्सरस (श)-
४८ तेषु सप्तसु वर्षद्वयाधिकेषु सिद्धाथ (र्थ) नाम्नि संवत्सरे माघसितरथसप्तम्यांम-
४९ हापर्व्वणि व (ब) लिचरुवैश्वदेवाग्निहोत्रातिथिपञ्चमहायज्ञक्रियोत्सर्पणार्थ (र्थं) स्नात्वाद्योद-
कातिसर्गेण
५० प्रतिपादितो (तः) (।) यतोस्यो उचितया व्र (ब्र) ह्मदायस्थित्या भुंजतो भोजयतः (:) कृषतः प्रतिदिशतो वा न कै-
५१ श्चिदल्पापि परिपंथना कार्या (।) तथा-गामिभद्रनृपतिभिरस्मद्वंश्यैरं (र) न्यैर्व्वा स्वा (सा) मान्यं भूमिदानफल-
५२ मवेत्य विद्युलो (ल्लो) लान्यनित्यैश्वर्याणि तृणाग्रलग्नजलविं (बि) दुचञ्चलञ्च जीवित-
माकलय (य्य) स्वदायनि-
५३ र्व्विशेषोयमस्मदा (दा) योनुमंतव्यः प्रतिपाल (लयि) तव्यश्च (।) यश्चाज्ञानतिमिरपट-
लावृतमतिराछि (च्छि) द्या-
५४ दाच्छिद्यमानकं वानुमोदेत स पञ्चभिर्महापातकैशो (श्चो) पपातकैश्च संयुक्तः (:) स्या
(त्) इत्युक्तञ्च भगव-
५५ ता वेदव्यासेन (।) षष्टि वर्षसहस्रा (स्रा) णि स्वर्गे तिष्ठति भूमिदः (।) आच्छेता (त्ता) चानुमंता च तान्यै (न्ये) व नर-
५६ रके वसेत् (।। २६ ।।) विंध्याटवीश्व (ष्व) तोयासु शुष्ककोटरवासिन (:।) कृष्णाह्यो हि जायंते भूमिदानं ह-
५७ रंति ये (।। २७ ।।) अग्नेरपत्यं प्रथमं सुवर्णं भूर्व्वैष्णवी सूर्यसुताश्च गावः (।) लोकत्रयं तेन भवे-
५८ धि (द्ध) तत्तं यः काञ्चनं गाञ्च महि (हीं) ञ्च दद्यात् (।। २८ ।।) व (ब) हुभिर्व्वसुधा-
भुक्ता राजभिः सगरादिभिः (:।) यस्य य-
५९ स्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलं (लम्) (।। २९ ।।) यानीह दता (त्ता) नि पुरा नरे (रं) द्रैर्द्दा-
नानि धर्मार्थयशस्कराणि (।) निर्म्मा-
६० ल्यवांतप्रति (मानि) तानि को नाम साधुः (:) पुनराददीत (।। ३० ।।) स्वदत्तं (त्तां) पर-
दत्तां वा यत्नाद्रक्ष नराधिप (।) (महीं) मही-
६१ मता (तां) श्रेष्ठ दानाच्छ्रे (च्छ्रे) योनुपां (पा) लनं (नम्) ।। ३१ ।।
इति कमलदलांवु (म्बु) विं (बि) दुलोलां श्रि (श्रि) यम-नुचिं (चिं) त्य मनुष्यजीवि-
६२ तञ्च (।) अतिविमल (म) नोभिरात्मनीनैर्ण्ण (र्न) हि पुरुषै परकीर्त्तयो विलोप्या (।।३२।।) श्रीनाग-
६३ (प) ण्णकदूतकं लिखितं श्रीगौडसुतेन श्रीसावं (मं) तेन ।।

प्रथम अमोघवर्ष का संजान ताम्रपत्र-लेख

भाषा-संस्कृत　　　　　　　　　　　　　　प्राप्ति-स्थान–संजान (थाना) महाराष्ट्र
लिपि–ब्राह्मी　　　　　　　　　　　　　　　　　　　श. का. ७९३ = ८७१ ई.

ए० इ० भा० १८

१ ओं (॥*) स वोव्याद्वेधसा धाम यन्नाभिकमलं कृतं ।
हरश्च यस्य कान्तेन्दुकलया कमलंकृतं ॥ १ ॥
अनन्तभोगस्थितिरत्रपातु वः प्रतापशीलप्रभवोदयाचलः (।*)

२ शुराष्ट्रकूटोच्छ्रितवंशपूर्व्वजः स वीरनारायण एव यो विभुः । (२*)
तदीय वीर्य्यायतपादपान्वये क्रमेण वार्द्धाविव रत्नसंचयः (।*)
बभूव गोविन्दमहीप्रतिर्भुवः

३ प्रसाधनो पृच्छकराजनः ॥ ३ ॥ बभार यः कौस्तुभरत्नविस्फुरद्गभस्तिविस्तीर्ण्णमुरस्थलं
ततः (।) प्रभातभानुप्रभवप्रभाततं हिरण्मयं में टिवाभि तस्तटं ॥ ४ ॥ मनांसि

४ यत्रासमयानि सन्ततं वचांसि यत्कीर्त्तिविकीर्त्तनान्यपि । शिरांसि यत्पादनतानि वैरिणं
यशांसि यत्तेजसि नेशुरन्यतः ॥ ५ ॥ धनुस्समुत्सारितभूभृता मही प्रसारिता

५ येन पृथुप्रभाविना । महौजसा वैरतमो निराकृतं प्रतापशीलेन स कर्क्कराट् प्रभुः ॥ ६ ॥
इन्द्रराजस्ततोगृह्णान् यश्चालुक्यनृपात्मजां (।*) राक्षसेन विवाहेन रणे स्वे-

६ टकमण्डपे ॥ ७ ॥ ततोभवद्दन्तिघटाभिमर्द्दनो हिमाचलादास्थिसेतुसीमतः (।*) खलीकृतो
दृत्तमहोपमराडलः कुलाग्रणीर्यो भुवि दन्तिदुर्गराट् ॥ ८ ॥ हिरण्य-

७ गर्भं राजन्यैरुज्जयन्यां यदासितं (।*) प्रतिहारीकृतं येन गुर्जरेशादिराजकम् ॥ ९ ॥ स्वयं-
वरीभूतरणांगणे ततस्पनिर्व्यपेक्षं शुभतुंगवल्लभः (।*) चकर्ष चालुक्यकुल श्री-

८ यं वलाद्विलोलपालिध्वजमालभारिणां ॥ १० ॥ अपोध्यसिंघासनचामरोर्जितस्सितातपत्रो-
प्रतिपक्षराज्यभाक् (।*)

अकालवर्षो हृतभूपराजको बभूव राज-

९ रिषिरशेषपुण्यकृत् ॥ ११ ॥ ततः प्रभूतवर्षोभूद्धारावर्षस्त-तश्शरैर्द्धारावर्षायितं येन संग्राम-
भुवि भूभुजा ॥ १२ ॥
युद्धेषु यस्य करवालनिकृत्तशत्रुमूर्ध्नाङ्कवीष्णरुचिरास-पवान-

१० मतः । आकण्ठपूर्ण्णजठरः परितृसमृत्युरुद्गारयन्निव स काहलघोरनादः ॥ १३ ॥ गङ्गा-
यमुनयोर्मध्ये राज्ञो गौडस्य नश्यतः (।*) लक्ष्मीलीलारविन्दानि श्वेतछत्राणि यो
हरेत ॥ १४ ॥

११ व्यप्ता विश्वम्भरान्तं शशिकरधवला यस्य कीर्त्ति समन्तात्
प्रेखंच्छंकालिमुक्ताफलधातशफरानेकफेनोर्म्मिरूपैः ।
पाण्वान्यतोरोत्तरणमविरलं कुर्व्वतीव प्रयाता स्व-

१२ र्गं गीर्व्वाणहारद्विरदसुरसरिद्धात्तराष्ट्रच्छलेन ॥ १५ ॥
प्राप्तो राज्याभिषेक निरूपमतनयो य स्वसामन्तवर्गा
स्त्वेषां पदेषु प्रकटमनुनयै स्थापयिष्यानश-

१३ षाम् ॥ १६ ॥ पित्रा यूय समाना इति गिरमरणोन्मन्त्रिवर्गा त्रिवर्गोयुक्तः कृत्येषु दक्षः क्षितिमवति यदोन्मोक्षयन्वद्धगंग । दुष्टांस्तावत्स्वभृत्यां झटिति विघ-

१४ टिता स्थापितान्येशपाशां युद्धे युद्धा स वध्वा त्रिपमतरमहोक्षानिवोग्रान्समग्रां (१७) मुक्त्वा सार्द्रान्तरात्मा विकृतिपरिणतौ वाडवाग्निं समुद्रः क्षोभो नाभूद्विपक्षान-

१५ पि पुनखि तां भूभृतो यो बभार ॥ १८ ॥ उपशतविकृतिः कृतघ्नगंगो यदुदितदण्डपलायनो-नुबन्धाप्यपगतपद—श्रृंखलः खलो यस्सनिगलबन्धगलः

१६ कृतस्स येन श्रीमान्धाता विधातु प्रतिनिधिरपरो राष्ट्रकूटान्वयश्रीसारान्सारामरम्यप्रविततनगरग्रामरामाभिरामामुर्व्वीमुव्वश्वराणां मकु-

१७ टमकरिकाश्लिष्टपादारविन्दः पारावारोरुवारिस्फुटरवरशनां पातुमुम्युद्यतो यः ॥ १९ ॥ नवजलधरवीरध्वानगम्भीरभेरीरवर्वधिरितविश्वाशान्तरा

१८ लो रिपुणां (।*) पटुरवपदढक्काकाहलोत्तालतर्यत्रिभुवनधवलस्योद्योगकालस्य कालः ॥ २० ॥ भूभृन्मूर्ध्नि सुनीतपादविशरः पुण्योदयस्तेजसा क्रान्ताशे-

१९ षदिगन्तर प्रतिपदं प्राप्तप्रतापोन्नतिः (।* भूयो योप्यनुरन्तामण्डलयुतः (:) पश्चाकटानन्दितो मार्त्तण्ड स्वयमुत्तरायणगतस्तेजो-निधिर्दुस्सहः ॥ २१ ॥ स नाग-

२० भटचन्द्रगुप्तनृपयोर्यशोर्य्य रणेस्वहार्यमपहार्य धैर्य विकलानथोन्मोलयत् (।*) यशोर्ज्जनपरनृपान्स्वभुवि शालिसस्यानिव (।) पुन पुनरतिष्टि-

२१ परस्वपद स्व चान्यापि ॥ २२ ॥ हिमवत्पर्व्वतनिर्झराम्बु तुरगैः वीतराय गजजै-

२२ र्ध्वनितं मज्जनतूर्यकैर्द्विगुणितं भूयोपि तत्कन्दरे (।*) स्वयमेवोपनतौ च यस्य महतस्तौ धर्म्मचक्रायुधौ (।) हिम्वान्कीर्त्तिसरूपतामुपगतस्त-

२३ त्कीर्त्तिनारायणः ॥ २३ ॥ तत प्रतिनिवृत्य तत्प्रकृतभृत्यकर्म्मेत्ययः प्रतापमिवनर्म्मदातरमनु प्रयात पुनः (।*) सकोशलकलिंगवेंगिडहलौड्रक (।)-

२४ न्मालवां विलम्य निजसेवकैं स्वयमक्षभुजद्विक्रमः ॥ २४ ॥ प्रत्यावृत्तः प्रातिराज्यं विधेयं कृत्वा रेवामुत्तरं विन्ध्यपादे (।*) कुर्व्वन्धर्म्मान्कीर्त्तनैः पुण्य(वृ)न्दैरध्यष्टात्तान्सो-

२५ चितां राजधानो ॥ २५ ॥ मण्डलेशमहाराज-सर्व्वस्व यदभूद्भुवः । महाराज सर्व्वस्वामी भावी तस्य सुतोजनि ॥ २६ ॥ यज्जन्मकाले देवज्ञैरादिष्ठ(ष्टं) विषहो भुवं (।*) भोक्तेति हि-

२६ मवत्सतुपर्यान्ताम्बुधिमेखलां ॥ २७ ॥
योद्धारोमोघवर्षेण वद्धा यो व युधि द्विपः (।*)
मुक्ता ये विकृतास्तेषां भस्मतश्शृंखलोद्धृतिः ॥ २८ ॥ तत प्रभूतवर्षस्सन्स्वसंपूर्णम-

२७ नोरथः (।*) जगतुंगस्स मेरुर्वा भूभृतामुपरि स्थितः ॥ २९ ॥ उद (ति) ष्ठदवष्टम्भं भंक्तुं द्रविल-
भूभृतां(।*)स जागरणचिन्तास्थमन्त्रणभ्रान्तचेतसां ॥ ३० ॥ प्रस्थानेन हि के-

२८ वलं प्रचलति स्वच्छादिताच्छादिता धात्री विक्रमसाधनैस्सकलुषां विद्वेषिणां द्वेषिणां(।*) लक्ष्मीरप्पुरसो लतेव पवनप्रायासिता यासिता धूलिर्नैव दिशो-

२९ धामद्विपुयशस्सन्तानकं तानकं ॥ ३१ ॥
त्रस्यत्केरलपाड्यचौलिकनृपस्संपल्लव पल्लवं प्रम्लानिं गमयन्कलिंगमगधप्रायासको यासक:
(।★) गर्ज्जद्गुर्ज्जरमौशो—

३० शौर्यविलयो लंकारयन्नुद्योगस्तदनिन्द्यशासनमतस्सद्विक्रमो विक्रमः ॥ ३२ ॥ निकृति विकृत-
गंगाश्शृंखलोवद्धनिष्ठा मृतिमयूरनुकूला मण्डलेशा स्वभृ-

३१ त्या (।★) विरजसमहितैर्नुयस्य वाह्यालिभूमि परिवृति विष्ट्या वेंगिनाथादयोपि ॥ ३३ ॥
राजामात्यवराविव स्वहितकार्यालस्यनष्टौ हठाद्दण्डेनैवनि-

३२ यस्य मूकवधिरावानीय हेलापुरे (।★)
लंकातच्छिल तत्प्रभुप्रतिकृती का (ष्पी) (ञ्चौ) मृषेतौ ततः कीर्त्तिस्तम्भनिभौ शिवायनके
येनेह संस्थापितौ ॥ ३८ ॥ या-

३३ स्या कीर्त्तिस्तुलोक्यान्निजभुवनभरं भर्त्तुमासोत्समर्थं । पुत्रश्चास्माकमेकस्सफलमिति कृतं
ज्जन्म धर्म्मैरनेकैः (।★) किं कर्त्तुं स्थेयमस्मिन्निति विम-

३४ लयश◡पुण्यशोपानमार्गं स्वर्गप्रोत्तुंगसौध प्रतिरदनुपमः कीर्तिम्बे (मे) वानुयात्त:
(तः) ॥ ३४ ॥
बन्धूनां बन्धुण्णामुचितनिजकुले पूर्व्वजानां प्रजानां जाता-

३५ नां वल्लभानां भुवनभरितसत्कीर्तिमूर्त्तिस्थतां (।★) त्रातुं कीर्ति सलोकां कलिकलुषमथो
हंतुमन्तो रिपूणां श्रीमान्सिंहासनस्थो बुधनुतचरितोमोघव-

३६ र्ष प्रशस्ति ॥ ३६ ॥ भ्रातुनभ्रान्विजेतुं रणशिरसि परान्प्राथकेम्य◡प्र(।) दातं निर्व्वोढुं
रूढ़िसत्यं रणिपरिवृढी नेहशोन्यः (।★) इत्थं प्रोत्थाय सार्थं पृथुरवद-

३७ ढक्कादिमन्द्रप्रघोषो यसोन्द्रस्यैव नित्यं ध्वनति कलिमलध्वन्सिनो मन्दिराग्रे ॥ ३७ ॥
दृष्ट्वा तन्नवराज्जमज्जि(त) वृहद्धर्म्मप्रभावं नृपं भय षोडशराज्य-

३८ वत्कृतयुग◡प्रारम्भ इत्याकुलः (।★) नश्यनन्तरनुप्रविश्य विषमो मायामयोसौ कलिः
सामन्तान्खविवस्स्वत्रान्धवजनानक्षोभयत्स्वोकृताम् ॥ ३८ ॥

३९ शठमत्रं प्रविधायत्कूटशपथैरोशस्वतंत्रा स्वयं विनिहत्योचितयुक्तकारिपुरुषान्सर्व्वं स्वयं-
ग्राहिणः (।★j परयौषिदुहिता स्वसेति न पु-

४० नर्भेद◡पशूनामिव प्रभुरेवं कलिकालमित्यवसितं सद्वृत्तमुघृतः ॥ ३९ ॥
विततमहिमधाम्नि व्योम्नि संहृत्य धाम्नमितवति महतीन्दोम्मेण्ड-

४१ लं ताराकाश्च (।★) उदयमहिमभाजो भ्राजितास्सप्रतापे विरतवति विजिह्याश्चोर्जितास्ता-
वदेवः (:) ॥ ४० ॥ गुरुबुधमनुयातस्सार्यपातालमल्ला-

४२ दुदयगिरिमहिम्नोरद्मार्तण्डदेवः । पुनरुदयमुपेत्योधृत्ततेजस्विवक्रं प्रतिहतमथ कृत्वा लोक-
मेक पुनाति ॥ ४१ ॥ राजात्मा मन एव तस्य

४३ सविवरसामन्यचक्रं पुनस्तनोत्येन्द्रियवर्ग एष विधिवद्रागादयस्सेवकाः (।★) देहस्थानधि-
ष्ठित स्वविषयं भोक्तु स्वतन्त्रः क्षमस्त-

४४ स्मन्भोक्तरि सन्निपातविवशे सर्व्वेपिनश्यन्ति ते ॥ ४२ ॥
दोषानौषधवद्गनानिलवत्शुष्केन्धनान्यग्निवत् ध्वान्तं भानुवदात्मपूर्व्वज-

४५ समाम्नायागतान्द्रोहकान (।*) सतापान्विनिहत्य यः कलिमलं धात्र्यादिसम्प्रान्ततः (।) कीर्त्या चन्द्रिक एव चन्द्र धवलच्छत्रश्रिया
४६ भाजितः ॥ ४३ ॥ यण्डाभिहतीत्तरोरिव फलं मुक्ताफलं मण्डलात् (।) यातं शूकरयूथवद्ग-ह्वनतस्तन्मन्दिरं हास्तिकं । यत्कोपोग्र-
४७ दवाग्निदग्धतनवः प्राप्ता बिभूतिं पने (।) तत्पादोपनतप्रसादतनवः प्राप्तो विभूतिम्पर ॥ ४४ ॥ यस्याज्ञां परिचक्रि स्रजमिवाजस्रं शि-
४८ रोभिर्व्वहन्त्यादिग्दन्तिघटावलीमुखपटः कीर्त्तिप्रतानस्ततः (।) यत्रस्थ स्वकरप्रतापमहिमा कस्यापि दूरस्थितः (।) तेजक्रांतसमस्त-भूभृदि-
४९ न एवासौ न कस्योपरि ॥ ४५ ॥ यद्वारे परमण्डलाधिपतयो दौवारिकैर्व्वारिकैरास्याना-वसरं प्रतीक्ष्य वहिरप्यध्यासिता यासिता । गाणिवयं वरश्रमौ-
५० क्तिकचितं तद्वास्तिकं हास्तिकं (।) नादास्याम यदीति यत्र निजक पश्यन्ति नश्यन्ति च ॥ ४६ ॥ सर्व्वं पातुमसो ददो निजतनुं जीमूतकेतोस्सुतः (।) श्येनायाथ शिवि
५१ कपोतपरिरक्षार्त्थं दधोचोत्थिने । तेप्येकैकमतप्पयन्किल महालक्ष्म्यै स्वावामांगुलि लोकोपद्र-वशान्तये स्म विशति श्रीवीरनारायणः ॥ ४७ ॥ हत्वा भ्रातर-
५२ मेव राज्यमहरद्देवीं च दीनस्ततो लक्ष कोटिमलेखयन्किलं कलौ दाता स गुप्तान्वयः (।*) येनात्याजि तनु स्वराज्य-कसकृद्वाह्यार्थकैः का कथा (।) ही-
५३ स्तस्योन्नतिराष्ट्रकूटतिलको दावेति कीर्त्याविपि ॥ ४८ ॥ स्वभुजभुजसनिर्स्त्रिशोग्रदष्टप्रवल (वल) रिपुसमूहेमोघवर्षे भधोशे । (।) न दध-
५४ ति पदमोतिव्याधिदुष्कालकाले (।) हिमशिशिरवसन्तग्रीष्मवर्षाशरत्सु ॥ ४६ ॥ ॥ ४९ ॥ चतुरसमुद्रपर्यन्तिः समुद्रः यत्प्रसाधितं (।*) भग्ना समस्तभूपालमुद्रा ग-
५५ रुऽमुद्रया ॥ ५० ॥ राजन्द्रास्ते वन्दनीस्तु पूर्व्वे येषान्धर्म्मा पालानीयोस्मदादेः(।*) ध्वस्ता दुष्टा वर्त्तमानास्सधर्म्म प्रात्थ्यां ये ते भाविनः पार्थिवेन्द्राः ॥ ५१ ॥ भुक्त क-
५६ श्विक्रमेणापरेभ्यो दत्तं चान्यैस्त्यक्तमेवापरैर्य्यत् (।*) कस्यानित्ये तत्र राज्यं महद्भिः कीर्त्या धर्म्मः केवलं पालनीयं ॥ ५२ ॥ तेनेदमनिलविद्युचञ्चलमवलो-
५७ क्य जीवितमसारं । (।) क्षितिदानपरमपुरायं प्रवर्त्तितो ब्रह्मदायोयं ॥ ५३ ॥ स च परमभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीजगत्तुंगदेवपादानुध्यातपर-
५८ मभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीपृथ्वीवल्लभ-श्रीमदमोघवर्ष-श्रीवल्लभ नरेन्द्रदेवः कुश-ली सर्व्वानेव यथासम्बन्ध्यमानकान्राष्ट्रपतिविषयपति-
५९ ग्रामकूटयुक्तकनियुक्ताधिकारिकमहत्तराबीं समादिशत्यस्तु (॥) वस्संविदितं यथा मान्यखेट-राजधान्यातस्थितेन मया मातापित्रोरात्मन (कं) श्चैहिकामु-
६० त्रिकपुण्ययशोभिवृद्धये ॥ ७ ॥ करहऽविनिर्गतभरद्वामाग्निवेश्यानां आंगिरसपाव्र्हस्पत्यानां भारद्वानाजेसब्रह्मचारिणे साविकूवारक्र-
६१ महतपौत्राय । गोलसऽगमिपुत्राय । नरसिघदीक्षितः पुनरपि तस्मै विषयविनिर्गता तस्मै गोत्रे न भट्टपौत्राय । गोविन्दभट्ट-

६२ पुत्राय । रवछादित्यक्रम इतः । तस्मिं देषे ।
बड्डमुखसब्रह्मचारिणे दावडिगहियसहायसपौत्राय । विष्णुभट्ट पुत्राय । तिविक्रम-

६३ षडंगमिः । पुनरपि तस्मिं देषे वच्छगोत्रसब्रह्मचारिणे । हरिभट्टपौत्राय । गोवादित्यभट्ट-
पुत्राय । केसवगहियसाहायः ।

६४ चतुका:नां वह्वृचसखानां । पवं चतुकः ब्राह्मणानां ग्रामो दत्तः संजाणसमीपवर्त्तिनः चतु-
र्विंशतिग्राममध्ये । रुरिवल्लिकानामग्रामः तस्य चाघाट-

६५ नानिः पूर्व्वतः कल्लुवी समुद्रगामिनी नदी । दक्षिणतः उप्पलहत्थकं भट्टग्रामः । पश्चिमतः
नन्दग्रामः । उत्तरतः घन्नवल्लिकाग्रामः । अयं ग्रामस्य संज्जाने

६६ पत्तने शुंकेन शुण्णायामिग्रामं सवृक्षमालाकुलं भोक्तव्यं । स्वभयं चतुराघाटनोपलक्षितः सोद्र
गंस्सो-परिकरः सदण्डदपराधः सभूतापात्त प्रत्ययः सोत्प-

६७ द्यमानविष्टिकः सधान्यहिरण्यादेयः अचाटभटप्रवेश्यः सर्व्वराजकीयानामहस्तप्रक्षेपणीया
आचन्द्रार्क्कार्ण्णवक्षितिसरित्पर्व्वतसमकालिनः पुत्रपौत्रान्वयक्रमो-

६८ पभोग्यः पूर्व्वप्रत्तब्रह्मदेवदायरहितोभ्यन्तर-सिद्धघाय भूमिच्छिद्रन्यायेन शकनृपकालातीत-
संवत्सरशतेषु सप्तसु नवतृतयस्यधिकेषु नन्दनसंवत्सरान्तर्गतपुष्य-

६९ मास उत्तरायणमहापर्व्वणि वलिचरुवैश्वदेवाग्निहोत्रतिथिशं (सं) तर्प्पणार्त्थं अघोदकादि-
ससर्ग्गेण प्रतिपादितः अस्तोस्यो चितया ब्रह्मदायस्थित्या भंजुतो भोज-

७० यतः कृषयतः प्रविशतो वा न कैश्चिल्पापि परिपन्थना कार्य्या तथागामिभद्रनृपतिभिरस्म-
द्वंश्यैरन्यैर्व्वा सामान्यं भूमिदानफलमवेत्य विद्युल्लोला-

७१ न्यनित्यैश्वर्य्याणि त्रिणाग्रलग्नजलविन्दुचंचल च जीवितमाकलस्यस्वदायनिर्व्विशेषोयमस्म-
द्दायानुमन्तव्यः प्रतिपालयितव्यश्च ॥ यश्चाज्ञानतिमिरपट-

७२ लावृतमतिराच्छिद्यमानकं चानुमोदेत स पंचभिर्म्महापातकैस्सोपपातकैश्च संयुक्तस्यादित्युक्त
च भगवता वेदव्यासेन । व्यासेन षष्ठि वर्षसहस्रा-

७३ णि स्वर्गे तिष्ठति भूमिदः (।★) आच्छेता (त्ता) चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् (॥)
विन्ध्याटवीष्वतोपासु शुष्ककोटरवासिनः (।★) कृष्णासर्प्पा हि जायन्ते भूमिदानं हरन्ति

७४ चेत् ॥ ५५ ॥ अग्नेरपत्य प्रथमं सुवर्ण्णं भूर्व्वैष्णवी सूर्य्यसुताश्च गावः (।★) लोकत्रयं तेन
भवेद्ध दत्तं यः काञ्चनं गां च महीं च दद्यात् ॥ ५६ ॥ वहुभिर्व्वसुधा भुक्ता

७५ राजभिस्सगरादिभिः (।★) यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलं ॥ ४६ ॥ स्वदत्तां-
म्परदत्तां वा यत्नाद्रक्ष नराधिप (।★) मही महिमतां श्रेष्ठं दानाच्छ्रेयोनुपालनं ॥ ५८॥

७६ इति कमलदलाम्बुविन्दुलोलां श्रियमनुचिन्त्य मनुष्यजीवितं च (।★) अतिविमलमनोभिरा-
त्मनीर्न्न हि पुरुष꠰परिकीर्त्तयो विप्याः ॥ ४९ ॥ लिखितं चैत धर्म्माधि-

७७ करणसेनभोगिकेन वालभकायस्थवंशजातेन । श्रीमदमोघवर्षदेवकमलानुजीविना गुणधवलेन
वत्सराजसूनुना ॥ महत्तको

७८ गोगूण्णक राजास्वमुखादेशेन दूतकमिति ॥ मंगल महश्री ॥ ९ ॥

●

परिशिष्ट

सिक्कों पर उत्कीर्ण-लेख

(अ) भारतीय-यूनानी तथा शक सिक्कों के मुद्रा-लेख

१ दिमित्त

बैसिलियन डेमेट्रिया (यूनानी लिपि तथा यूनानी भाषा)

२ मिलिन्द

महरजस त्रतरस मेनद्रस (खरोष्ठी लिपि तथा प्राकृत)

३ स्ट्रेटो तथा अगाथाक्लिया की मुद्रा

(अग्रभाग)

बैसिलिसेस थिओट्रोपो, अगाथाक्लिया (यूनानी अक्षर)

(पृष्ठभाग)

महरजस ध्रमिकस स्त्रतस (खरोष्ठी तथा प्राकृत)

४ हरमेयस तथा कुजुल

अग्रभाग (यूनानी लिपि)

बैसिलियस स्टेरोस एरमेआ

पुष्ठभाग (खरोष्ठी लिपि तथा प्राकृत भाषा)

कुजुल कसस कूषन यवुगसध्रमिथिदस

५ पार्थियन शासक मोअ

अग्रभाग (यूनानी लिपि)

बैसिलियस बैसिलियान मेगालो मओय

पृष्ठ भाग (खरोष्ठी लिपि तथा प्राकृत)

रजदि रजस महतस मोअस

६ अयसका मुद्रा-लेख

अग्रभाग (यूनानी लिपि)

बैसिलियस बैसिलियान मेगालय अजोय

पृष्ठ भाग (खरोष्ठी तथा प्राकृत)

महरजस रजरजस महतस अयस

वीमकदफिस का स्वर्ण मुद्रा-लेख

अग्रभाग (यूनानी लिपि)

बेसिलियस ओयो कदफिसेस

पृष्ठ भाग (खरोष्ठी तथा प्राकृत)

महरजस रजदिरजस सर्व लोग ईश्वरस

महिश्वरस व्रिम कफिशस त्रतरस

कनिष्क का मुद्रा-लेख
(यूनानी लिपि)

शाओ नानो शाओ कनिष्को कुशानो

हुविष्क का मुद्रा-लेख
(यूनानी लिपि)

शाओ नानो शाओ ओइष्कि कोशानो

क्षत्रप रुद्रदामन का रजत मुद्रा-लेख
(लिपि ब्राह्मी-प्रकृत भाषा)

राज्ञो क्षत्रपस जयदामपुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रदामस

जीवदामन का मुद्रा-लेख
(लिपि ब्राह्मी-प्राकृत भाषा)

राज्ञो महाक्षत्रपस दामजदस पुत्रस राज्ञो
महाक्षत्रपस जीवदामस

रुद्रसिंह तृतीय का मुद्रा-लेख
(लिपि ब्राह्मी-प्राकृत भाषा)

राज महाक्षत्रपस स्वामि सत्यसहपुत्रस
राज महाक्षत्रपस स्वामि रुद्रसहस

गुप्तवंशी मुद्रा-लेख
(गुप्तलिपि तथा छंदबद्ध संस्कृत)

समुद्रगुप्त का स्वर्ण मुद्रालेख

समरशत वितत विजयी जितरिपु रजितोदिवं जयति
राजाधिराजः पृथिवीभवित्वा दिवं जयत्याहृत वाजिमेधः

द्वितीय चन्द्रगुप्त का स्वर्ण मुद्रा-लेख

नरेन्द्र चन्द्रः प्रथितरणो रणे जयत्य जय्यो भुवि सिंह विक्रमः
परम भागवतो महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्तः

द्वितीय चन्द्रगुप्त का रजत मुद्रा-लेख

परमभागवत महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्त विक्रमादित्य
श्री गुप्तकुलस्य महाराजाधिराज श्री चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य

प्रथम कुमारगुप्त का स्वर्ण मुद्रा-लेख

क्षितिपतिरजितो विजयी कुमार गुप्तो दिवं जयति
गुप्त कुलामलचन्द्रो महेन्द्र कर्माजितो जयति
गामवजित्य सुचरितैः कुमारगुप्तोदिवं जयति
भर्त्ता खड्गत्राता कुमार गुप्तो जयत्यनिशं

प्रथम कुमारगुप्त का रजत मुद्रा-लेख

परम भागवत राजाधिराज श्री कुमारगुप्त महेन्द्रादित्य
विजितावनिरवनिपति श्री कुमार-गुप्तादित्य जयति

स्कन्दगुप्त का स्वर्ण मुद्रा-लेख

जयति महीतलम् सुधन्वी

स्कन्दगुप्त का रजत मुद्रा लेख

परमभागवत महाराजाधिराज श्री स्कन्दगुप्त क्रमादित्य
विजितावनिरवनिपतिर्जयति दिव स्कन्धगुप्तोयम् ।

(स) पूर्व मध्ययुग के मुद्रा-लेख

(नागरी अक्षरों मे—तीन पंक्तियाँ)

श्री मदादिवराह (प्रतिहार राजा भोज)
श्री मद् गांगेयदेव (कलचूरी शासक गांगेयदेव)
श्री मद् गोविन्द चन्द्रदेव (गहडवाल राजा गोविन्द चन्द)
श्री अजय पाल देव (चौहान राजा अजयराज)
श्री मद् कीर्त वर्म देव (चन्देलराजा कीर्तिवर्मन)
श्री मुहमदविनसाम (सुल्तान मुहम्मद गौरी)

मुहरों पर उत्कीर्ण-लेख

(अ) बसाढ़ की मुहरे (कुशान लिपि, प्राकृत तथा संस्कृत)

(१) फरदास्य सद्धियस पुत्रस्य
(२) सहजतिए निगमस्य
(३) कुलिक निगमस्य
(४) श्री विन्ध्य वेधन महाराजस्य महेश्वर महासेनापति कृष्ठ राज्यस्य वृषध्वजस्य गौतमीपुत्रस्य
(५) आत्मात्य ईश्वरचन्द्रस्य

(ब) वैशाली की मुहरें (गुप्त लिपि, संस्कृत)

(१) युवराज पादीय कुमारामात्याधिकरणस्य
(२) श्री परमभट्टारक पादीय वलाधिकरणस्य
(३) तिराभुक्तो विनय स्थिति सस्थायकाधिकरणः
(४) तिरा कुमारामात्यधिकरणस्य
(५) महाप्रतिहार तरवर विनयसुरस्य
(६) श्रेष्ठो सार्थवाह कुलिक निगमस्य
(७) रणभाण्डागारधिकरणस्य ।
(८) महादण्डनायक अग्नि गुप्तस्य ।
(१०) वैसाल्यामर प्रकृति कुटुम्बिनाम्

(ख) नालंदा की मुहरें (नागरी तथा संस्कृत)

(१) श्री नालंदा महाविहारी अर्यभिक्षुसंघस्य

(२) **मौखरि अवन्ति वर्मन का नालंदा मुद्रा-लेख (संस्कृत)**

चक्षुस्समुद्राक्रान्त कीर्त्तिः प्रतापानुरागोप
(नतान्य राजा) वर्णाश्रम व्यवस्थापन प्रवृत
चक्रश्चक्रधर इव प्रजानामर्तिहरः श्री महाराज
हरिवर्मा तस्य पुत्रस्तत् पादानुध्यातोजय
स्वामिनी भट्टारिका देव्यामुत्पन्नः श्री महाराज
आदित्यवर्मा तत्यपुत्रस्तत पादानुध्यातो हर्षगिस'
भट्टारिका देव्यामुत्पन्नः श्री महाराजेश्वर वर्मा
तस्य पुत्रस्तत् पादानुध्यातोपगुप्ता भट्टारिका
देव्यामुत्पन्नो महाराजाधिराज श्री ईशानवर्मा
तस्य पुत्रस्तत् पादानुध्ययातो
लक्ष्मीवती भट्टारिका महादेव्यामुत्पन्नो
महाराजाधिराज श्री सर्ववर्मा
तस्य पुत्रस्तत् पादानुध्यात इन्द्रभट्टारिका
महादेव्यामुत्पन्नः परम माहेश्वरो
महाराजाधिराज श्री अवन्ती वर्मा मौखरिः ।

(३) **भास्कर वर्मन का नालंदा मुद्रा-लेख (संस्कृत)**

श्री गणपति वर्मा श्री यज्ञना वत्याम श्री
महेन्द्र वर्मा श्री सव्रतायाम् श्री नारायण वर्मा श्रीदे
ववत्याम् श्री महाभूति वर्मा श्री विज्ञान वत्याम्
श्री चन्द्रमुख वर्मा श्री भो—
गयेत्याम् श्री स्थितवर्मा तेनश्री नयन
श्री सुस्थित वर्मा श्री सोभायाम् श्यामा लक्ष्याम् श्री
सुप्रतिष्ठितः वर्मा श्री भास्कर वर्मेति ।

शशाङ्क का रोहतास मुद्रा-लेख

श्री महासामन्त शशाकदेवस्य ।

(द) कुर्कीहर कांस्य प्रतिमा-लेख पालवंश नागरी लिपि

१ स्वस्ति श्री राज्यपालदेव राज्ये सम्बच्छरे
३२ श्री मदापणक महाविहारे गोपालहिनो
भार्या वाटुकायाः देवधर्म कृतम्
सोपाल हारो स्थपतिपातितम् । वसुधा

२ स्वस्ति श्रीम-विग्रहपालदेव विजयराज्ये
सम्मत ३२ देव धर्मोयम महायान जैन

प्रेमोपासक दुलपसुत. तीकुकस्य ।

३ स्वस्ति श्रीमन महिपाल देवराज्य सम्वत् ३१
सुवर्णकार के सवस्स = स्य देवधर्म ।

(य) मिट्टी की वस्तुओं पर उत्कोर्ण लेख

(i) टिकरे का अभिलेख

सिद्धम् । स्वस्ति श्रीमान महाराज विग्रहपाल
देवस्य विजय राज्ये सम्वत्सरे ८ देवधर्मोयम्
शान्तिरक्षितस्य

(ii) कुम्हरारपात्र का लेख

आरोग्य विहारे भिक्षुसंघस्य (गुप्तलिपि)

●